दस्तूरे हयात

दस्तूरे हयात

यानी

अल्लाह की किताब और सीरते नबवी की रोशनी में एक मुसलमान की ज़िन्दगी का मुकम्मल दस्तूरुल अमल और अक़ायद व इबादात, इख़लाक़ व आदात के बारे में नबी की तालीमात व हिदायात।

लेखक

मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी

रूपान्तर

मुहम्मद हसन अंसारी

प्रकाशक :

मजलिस तहक़ीक़ात व नशरियाते इस्लाम
(भारत)
पोस्ट बॉक्स नं० 119, नदवा, लखनऊ

Series No. 203

प्रथम संस्करण
1987

मुद्रक :

नदवा प्रेस, लखनऊ

विषय सूची

दो शब्द

मुसलमानों की ख़ास तौर से नई नस्ल की अच्छी ख़ासी तादाद ऐसी है जो उर्दू नहीं जानती। अगरचे उसकी मादरी ज़बान उर्दू है मगर ख़ास हालात और माहौल के ज़ेरे असर वह उर्दू के रस्मुलख़त (लिपि) से वाक़िफ़ नहीं है। वह हिन्दी पढ़ लिख सकती है और इसके ज़रिये इल्म हासिल करने की उसके अन्दर तलब है। ऐसे ही तब्क़े की ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए "दस्तूरे हयात" को जो मुस्लिम घरानों के लिए एक "गाइड बुक" की हैसियत रखती है, हिन्दी में मुन्तक़िल[1] कर के पेश किया जा रहा है। चूंकि असल किताब अरबी में है और नक़ल का काम इसके उर्दू तर्जुमा[2] से किया गया है इसलिए मुश्किल अरबी व फ़ारसी तरकीबों को आसान कर के सलीस ज़बान[3] में लिखने की कोशिश की गई है। इस तरह कहीं कहीं हिन्दी अल्फ़ाज़ भी आ गये हैं जो आसान और आम फ़हम हैं। कुछ अहादीस और मसनून दुआयें अरबी में लिखी गई हैं ताकि उनको सही तौर से याद करने में आसानी हो। बाक़ी का उर्दू तर्जुमा हिन्दी में लिखा गया है। क़ुरआन की आयतों के तर्जुमे के साथ सूर: का नाम और आयत नम्बर दर्ज है।

अल्लाह तआला इस किताब के पढ़ने वालों को इस्लाह की तौफ़ीक़ दे और ईमान की मज़बूती के साथ हमारे आमाल दुरूस्त फ़रमावे। आमीन।

रूपान्तरकार,
मुहम्मद हसन अंसारी
किला, रायबरेली।

10, अक्तूबर, 1983 ई०
3, मुहर्रम, 1404 ई०

---

1. परिवर्तित 2. अनुवाद 3. सरल भाषा

मुकद्दमा (भूमिका)

जामे व मुख़्तसर तरबियती (पूर्ण एवं संक्षिप्त शैक्षणिक) किताबों पर एक नज़र और एक नई किताब की ज़रूरत।

शरीअत की तालीमात और दीन के अहकामात पर इस्लाम की प्रारम्भिक सदियों से लिखने लिखाने का सिलसिला चला आ रहा है। इसी के साथ स्वाभाविक रूप से सभ्यता में विकास के साथ मुसलमानों की ज़िन्दगी भी विकसित होती रही है और इस्लामी समाज नये नये हालात से दो चार होता रहा है इसकी नित नई ज़रूरतें इसकी कमज़ोरियों और तक़ाज़े[1] विचारकों व लेखकों के सामने आते रहे। साथ ही साथ दीनी इस्लामी कुतुबखाना (लाइब्रेरी) बढ़ता और फैलता रहा। नौबत यहां तक पहुंची कि मौजूदा दौर का मुसलमान न सिर्फ़ यह कि इसे अपने घेरे में नहीं ले सकता बल्कि उसके लिए यह भी मुशकिल है कि अपनी पसन्द का चयन ही करले या संक्षेप में उससे नफ़ा[2] उठा सके।

इसी लिए स्वाभाविक रूप से लोगों को जिन को मुसलमानों के मसायल से गहरा लगाव था और जो मुस्लिम समाज के सही व ग़लत झुकाव पर गहरी नज़र रखते थे और अपने समय के मुसलमानों के मानसिक तनाव से परिचित थे, एक ऐसी ठोस किताब की ज़रूरत हुई जो इबादात, मामलात, इख़लाक़[3] व आदात के बारे में मुसलमानों

---

1. मांग 2. लाभ 3. चरित्र

के लिए गाइड बुक की हैसियत रखती हो। यह एक ऐसी जरूरत थी जिससे कोई दौर ख़ाली नहीं कहा जा सकता। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में भी जो पूरी तरह खैर[1] व बरकत का ज़माना था इस की मिसालें मिलती हैं। ह्दीस में आता है कि एक आराबी (अरब का गांव वासी) ने अल्लाह् के रसूल स० की ख़िदमत में अर्ज़ किया :—

तर्जुमा : ऐ : अल्लाह् के रसूल ! इस्लाम के तफ़सीली अह्काम बहुत हो गये हैं, जो मुझ जैसे के क़ाबू में नहीं आते, कोई ऐसी मुख़तसर बात बता दीजिये जिसको मैं मजबूती से थाम लूं।

अल्लाह् के रसूल स० ने उस आराबी की बात ध्यान से सुनी। और उसे मलामत करने[2] और उसकी अज्ञानता पर उसे कुछ कह्ने के बजाय आपने बड़े प्यार से उसके सवाल का जवाब दिया और फ़रमाया :—

तर्जुमा : ख़ुदा के ज़िक्र[3] से तुम्हारी ज़बान हमेंशा तर रहे।

ह्जरत अबू अमर सुफ़ियान इब्न अब्दुल्लाह् बयान करते हैं कि मैंने अर्ज़ किया :—

तर्जुमा : ऐ अल्लाह् के रसूल। इस्लाम के बारे में मुझे ऐसी बात बता दीजिये कि फिर किसी से पूछने की ज़रूरत न रहे।

आपने फ़रमाया :—

तर्जुमा : एक बार (सोच समझ कर) कह् दो कि मैं अल्लाह् पर ईमान लाया फिर उस पर मजबूती से जम जाओ।

यह् और इसी क़िस्म के बयान से उन लोगों को बढ़ावा मिला जिन्हों ने मुसलमानों के नफ़ा के लिए एक ठोस किताब लिखने का बेड़ा उठाया। एक ऐसी किताब जो ज़रूरी दीनी मालूमात, दैनिक क्रियाओं, इस्लामी इख़लाक़ और व्यक्तिगत तथा समाजिक जीवन

---

1. भलाई 2. बुरा भला कहने 3. जाप

के उपदेशों व निर्देशों से भरपूर एक औसत दर्जे के मुसलमान के लिए काफ़ी हो और जिसे ज़िन्दगी का पथ प्रदर्शक बनाया जा सके।

इस ज़रूरत का जहाँ तक मेरी जानकारी है सब से पहले हुज्जतुल इस्लाम अबू हामिद बिन मोहम्मद अलग़ज़ाली (इमाम ग़ज़ाली मृत्यु 505 हिज्री) को एहसास हुआ जिन्होंने अपनी मशहूर किताब "अहयाय-उलूमुद्दीन" (जो आमतौर पर "अहयाउलउलूम" के नाम से मशहूर है) लिखकर एक महत्वपूर्ण व मुफ़ीद सिलसिले की शुरूआत की। उन्होंने यह कोशिश की कि यह किताब ज़रूरत मन्दों के लिए दीनी गाइड बुक का काम दे और बड़ी हद तक इस्लामी कुतुबख़ाने की नुमाइन्दगी करे। उन्होंने इसमें अक़ायद[1], मसायल, नफ्स[2] की सफ़ाई, इख़लाक़ की दुरूस्तगी और एहसान तथा उसे हासिल करने के तरीक़ों से बहस की है। फ़ज़ायल की अहादीस, वादों और वईदों (डराने वाली बातें) की आयात व रवायात, जतनपूण सीख और मन में टीस पैदा करने वाली बातों को किताब में जगह दी। इसका नतीजा है कि यह किताब ईमान, अच्छे व नेक अमल और अन्दर की सफ़ाई के लिए दवा का काम करती है। यह रूहानी बीमारियों की खोज करती और उसका मुनासिब इलाज तजवीज़ करती है। बेशक किताब में बारीकी के साथ कमी तलाश करने वालों को उनके फ़लसफ़ियाना मुताअला के असरात नज़र आ जाते हैं। और कहीं कहीं ऐसी हदीसें बयान की गई हैं जो मुहद्दसीन के यहाँ ज़ईफ़[3] शुमार की जाती हैं। कुछ और भी तनक़ीद[4] की बातें तलाश करने वालों को मिल सकती हैं। लेकिन इन सब के बावजूद सब ही इन्साफ़ पसन्द लिखने वाले किताब की तासीर व अफ़ादियत[5] के क़ायल हैं। यहाँ तक कि अल्लामा इब्न-अल-जौज़ी और शैख़ुल-इस्लाम इब्न तैमिया जैसे नाक़िदीन[6] ने भी किताब की क़दर व कीमत तसलीम किया। यह एक तारीख़ी हक़ीक़त है कि यह किताब जितनी मक़बूल हुई और

1. आस्था 2. इन्द्री 3. कमज़ोर 4. आलोचना 5. प्रभाव व लाभ
6. आलोचकों

जिस जोश व ख़रोश के साथ इसका स्वागत हुआ और जो शोहरत इसे हासिल हुई वह सहाहे सित्ता और चन्द दीनी किताबों को छोड़कर किसी किताब के बारे में नहीं सुना गया। इस्लामी दुनिया में पीढ़ी दर पीढ़ी लोगों ने इस किताब को अपनी ज़िन्दगी का दस्तूरूल[1] अमल बनाया।

इमाम ग़ज़ाली के बाद भी यह सिलसिला चलता रहा यहाँ तक कि अल्लामा इब्न जौज़ी (मृत्यु 597 हि०) जैसे इमामे फ़न, और नक्क़ाद[2] और "तलबीस इबलीस" जैसी किताब के लेखक को भी इसकी तलख़ीस[3] व तरतीब जदीद की ज़रूरत महसूस हुई जिसका नाम उन्होंने "मिन्हाजुलक़ासिदीन" रखा। बड़े बड़े उल्मा ने "अहयाउल उलूम" की शरहें[4] लिखीं और तरह तरह से इसकी ख़िदमत की। हाफ़िज़ ज़ैनुद्दीन ईराक़ी ने अहयाउल उलूम की अहादीस की तख़रीज की[5], और फ़ख़रे हिन्दोस्तान अल्लामा सय्यद मुर्तज़ा बिलग्रामी (मृत्यु 1205 हि०) ने बीस जिल्दों में इसकी शरह की जिसका नाम "इतहाफ़ अस्सादातिल मुत्तक़ीन शरह अहयाये उलूमुद्दीन" रखा। यह किताब हदीस व फ़िक़ा व कलाम व तसौउफ़ में एक इन्साइक्लो-पीडिया की हैसियत रखती है।

अहयाउल उलूम पर आधारित सलूक व तरबियत के मैदान में भी एक अलग विचारधारा ने जन्म लिया जिसको "तरीक़ए ग़ज़ालिया" के नाम से याद किया जाता है और जो हज़रमौत तथा कुछ दूसरे अरब मुल्को मैं रायज[6] है।

इमाम ग़ज़ाली ने अहयाउल उलूम के तर्ज़[7] पर एक किताब फ़ारसी ज़बान में भी लिखी जिसमें सहूलत और अजमियों के मेआरें तालीम और ज़रूरत व हालात का ख्याल रखा और इसका नाम "कीमियाये सआदत" रखा। इस किताब को भी फ़ारसी जानने वाले दीनी तबक़ों में शोहरत हासिल हुई।

---

1. कार्यकारी संविधान 2. आलोचक 3. व्याख्या करने 4. कुंजियाँ 5. बाहर निकाला 6. परिचलित 7. ढंग

"अह्याये उलूमुद्दीन" के बाद इस सिलसिले की दूसरी अहम कड़ी सय्यदना अब्दुल क़ादिर जीलानी (मृत्यु 561 हि०) की किताब "गुनीयतुत्तालबीन" है। इस किताब की विशेषता यह है कि इसको उम्मत के एक मक़बूल तरीन दीनी पेशवा और रूहानियत के इमाम सय्यदना अब्दुल क़ादिर जीलानी ने अपने चेलों और बाद के आने वाले तालिबीन के लिए लिखा। इसमें फ़रायज व सुनन उनके आदाब, खुदा की मारफ़त[1] की आफ़ाक़ी दलीलें, कुरआन व अहादीस का इल्म, सलफ़े सालेहीन के सबक़-आमोज वाक़यात जमा कर दिये गये हैं ताकि इसकी रौशनी में राहे खुदा तय की जा सके। खुदा के अहकाम की तामील की जाय। किताब में एक मुसलमान के लिए तहारत, नमाज, ज़कात, रोजा, हज वग़ैरा के जरूरी अहकाम और किताब व सुन्नत और सीरते नबवी से साबित शुदा इस्लामी आदाब भी आ गये हैं। यह किताब हर उस शख्स के लिए एक गाइड का काम दे सकती है जिसे कोई फ़क़ीह[2] व तबीब मयस्सर न हो। इस किताब में लेखक ने अपने स्वयं के अनुभव और औराद (जिक्र) भी बयान किये हैं। अपने बयान में वह सुन्नत की राह पर साबित कदम और हँबली मसलक के एक जय्यद आलिम की हैसियत से नजर आते हैं। उन्होंने किताब में एक बाब "अमर बिल मारूफ़ और नहीं अनिल मुनकर" का भी शामिल किया है। और अहले सुन्नत के अक़ायद की शरह इमाम अहमद बिन हँबल के मसलक पर की है। ख़ास तौर पर सेफ़ात बारी तआला[3] के मसले और फ़िर्क़ें जाअल्ला[4] की काट में उन्हीं के विचारों को व्यक्त किया है। इस किताब में वाज व इरशाद की मजालिस के साथ दिनों और महीनों के फ़जायल भी बयान किये गये हैं। वाज व इरशाद की मजालिस की उन दिनों बग़दाद में धूम मची हुई थी। किताब के अन्त में मुरीदैन के आदाब व इख़लाक़ का बयान है।

1. पहचान 2. इल्मदीन जानने वाला 3. खुदा की विशेषताओं
4. गुमशुदा जमाअत

यह किताब लेखक के मुरीदों और उन तमाम लोगों के लिए जो किताब व सुन्नत की रौशनी में अपनी जिन्दगी गुजारना चाहते हैं, और इख़लाक की सफ़ाई का शौक़ रखते हैं, एक दस्तूरुल अमल रही है। इस किताब से फ़ायदा उठाने वालों की तादाद एशिया व अफ्रीक़ा में लाखों तक पहुँचती है।

इसी इरादे से "अल्क़ामूस" के लेखक मशहूर मुहद्दिस और अरबी लोग़त[1] के माहिर अल्लामा मुजद्दिदीन फ़ीरोजाबादी (मृत्यु 817 हि०) ने अपनी किताब "सफ़रू-अस्सादात" लिखी जिसमें उन्होंने संक्षेप में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सीरत पर रौशनी डाली और इबादात व मामलात और आपकी सुन्नतों का बयान किया है। इस तरह यह किताब व्यक्तिगत व सामूहिक जीवन में एक मुसलमान के लिए एक दस्तूरुल अमल की हैसियत रखती है। लेखक ने तिब्ब नबवी को भी किताब में शामिल किया है। किताब औसत साइज की 150 पृष्ठ की है। और इसका असल नाम "सिराते मुस्तक़ीम-मारूफ़-ब-सफ़र-अस्सादात" है।

लेकिन इस सिलसिले की सबसे बड़ी कोशिश अल्लामा हाफ़िज इब्न कैय्यम अल जौज़िया (मृत्यु 751 हि०) की है जिन्होंने अपनी मशहूर व मक़बूल किताब" ज़ादुलमआद" लिखी। शायद "अहयाउल-उलूम" के बाद इसलाह व तरबियत के विषय पर इतनी ठोस किताब नहीं लिखी गई होगी। तहक़ीक़[2] व खोज के मामले में यह किताब "अहयाउल उलूम" से भी बढ़कर है। ऐसा मालूम होता है कि लेखक ने दीनी कुतुबखाना के दरिया को इस किताब के कूज़े में भर दिया है। हदीस का ज़ौक़ रखने वाले सुन्नते नबवी का एहतमाम रखने वालों ने हमेशा इस किताब को अपना गाइड बनाया। यह किताब इस्लामी उलूम, हदीस व फ़िक़ा, कलाम और सर्फ़ व नहौ का "इल्म मजमूआ" है। और इस का शुमार अहम इस्लामी किताबों में है।

---

1. शब्द कोष 2. शोध

इन्हीं किताबों में जो इसी मक़सद के लिए लिखी गयीं अल्लामा मोहम्मद बिन अबीबकर समरकन्दी की किताब "शेरअतुल-इस्लाम इला दारुस्सलाम" है। अपनी किताब का परिचय देते हुए वह स्वयं लिखते हैं।

"यह वह किताब है जिसकी नौनिहालाने इस्लाम को सबसे पहले तलक़ीन करनी[1] चाहिए और अहले यक़ीन को पेशेनज़र रखनी चाहिए बल्कि सालिके राहे हक़[2] को इसके बग़ैर चारयेकार नहीं" [3]

इस किताब के लेखक का मक़सद यह मालूम होता है कि उनके ख़ानदान की आगे आने वाली नस्लें इस किताब से फ़ायदा उठायें। और इसको अपने लिए रहनुमा[4] बनायें। लेखक ने सुन्नत से साबित सही दीनी अक़ायद बयान किये हैं। फिर उल्मा के इख़लाक़ से बहस की है। अपने अनुभव और विचार भी लिखे हैं। लेखक की नेक नियती के बावजूद किताब में कहीं कहीं इल्मे हदीस की रोशनी में कुछ बातें फिर से ग़ौर करने के क़ाबिल हैं।

मक़बूल आम और आसान किताबों में, जिन से अपने दौर में बेशुमार इंसानों ने फ़ायदा उठाया, क़ाजी सनाउल्ला पानीपती (मृत्यु 1325 हि०) की किताब "मालाबुद्दमना" जिसमें पहले अहले सुन्नत वल जमाअत के अक़ायद का बयान है फिर नमाज़ की फ़ज़ीलत, तहारत के मसायल, ज़कात रोज़े के अहकाम, हज का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। एक अध्याय तक़वे के विषय पर है। इसमें शरअई

---

1. शिक्षा देना 2. सत्य-पथ पर चलने वाला।
3. हमारे पास सीरत की जो किताबें हैं उनमें लेखक के हालात का पता न चल सका इसलिए उनके ज़माने और सने वफ़ात का पता न चल सका। "कशफ़ुज्ज़नून" के लेखक ने उनकी किताब का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "बड़ी उम्दा और बहुत मुफ़ीद किताब है" इस किताब के बारे में मुझे मेरे फ़ाज़िल दोस्त मोहम्मद नैनार, उस्ताद, नेहरू यूनीवर्सिटी, देहली ने बताया। वही इसको एडिट करके छपवा रहे हैं।
4. पथ-प्रदर्शक

और ग़ैर शरअई मामलात की निशानदेही की गई है। एक फ़सल मआशरत के आदाब, हुक़ूक़ुलएबाद और ज़माने की उन बुराइयों के बारे में है जिनको लोग हक़ीर[1] व मामूली समझते हैं। इसमें इख़लाक़ी बुराइयों के बारे में, नफ़्स के फ़ितनों और जाहिली रस्म व रिवाज की तरफ़ भी इशारा किया गया है। फिर एक फ़सल तज़किया व एहसान और इख़लास पर है।

किताब की ख़ास बात यह है कि इसमें सिर्फ़ वह ज़रुरी बातें आई हैं जिनकी जानकारी औसत दर्जे के मुसलमान के लिए ज़रुरी है। ख़ास तौर से उन लोगों के लिए जो युवावस्था और प्रौढ़ावस्था के बीच की उम्र से आते हैं। इस लिए यह किताब तक़रीबन एक सदी से ज़ायद[2] हिन्दोस्तान के शरीफ़ घरानों और दीनदार ख़ानदानों में निसाबी किताब (पाठ्य पुस्तक) की तरह पढ़ी पढ़ाई जाती रही। किताब फ़ारसी ज़बान में है और लगभग 150 पृष्ठ की है।

इस विषय की बेहतरीन किताबों में से एक किताब "सिराते-मुस्तक़ीम" है जो तेरहवीं सदी हिज्री की जेहाद व इस्लाह की सबसे बड़ी तहरीक के क़ायद व इमाम सय्यद अहमद शहीद रह० (शहीद 1246 हि०) के मलफ़ूज़ात[3] व इफ़ादात का मजमूआ (संकलन) है। जिनको उनके साथी मौलाना मोहम्मद इस्माईल शहीद रह० (शहीद 1246 हि०) और सय्यद साहब के ख़लीफ़-ए-अकबर मौलाना अब्दुल हई बुढ़ानवी (मृत्यु 1243 हि०) ने फ़ारसी में लिखा। इस किताब में सीधी राह पर चलने, इस्लामी शरीअत पर मज़बूती के साथ जमे रहने और सुन्नत की पैरवी के बारे में बड़ी रौशन तालीमात हैं। अक़ायद की तसहीह तौहीद खालिस की तालीम, शिर्क व बिदअत की तरदीद इस किताब की ख़ास बातें हैं। ख़ासतौर पर उन बिदअतों की निशानदेही की गई है जो सय्यद साहब के दौर में सूफ़ियों, आबिदों और ज़ाहिदों के हल्क़े में रिवाज पा गई थी और सबज़-ए-ख़ुदरौ की

1. सूक्ष्म 2. अधिक 3. आत्मकथा

तरह पूरी जिन्दगी पर छा गई थी। इसी तरह ग़मी, खुशी के मौक़े पर पाई जाने वाली जाहिली आदात व रसूम, जो ग़ैर मुस्लिमों के प्रभाव से मुस्लिम घरानों में दाख़िल हो गई थीं और इस्लामी समाज का हुलिया बिगड़ रहीं थीं, के मुक़ाबिला और इनसे बचने की इस किताब में दावत दी गई है। इसके बाद तहज़ीब, इख़लाक, नफ़्स की पाकी और रूहानी इलाज पर रौशनी डाली गई है।

इस किताब की ख़ास बात यह है कि इस में अज़कार[1] व इबादात अक़ायद की इस्लाह के साथ दावत व तबलीग़, ख़ुदा की राह में जेहाद, उम्मत की फ़िक्र, अल्लाह के नाम को बुलन्द करने और उसके दीन के पर्चम[2] लहराने की दावत दी गई है।

मशहूर इस्लाही किताबों में हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी रह० की किताब "तालीमुद्दीन" भी आती है। यह किताब 144 पृष्ट की है। वह अकायद, ईमानियात, आमाल व इबादत, मामलात, मआशरत के आदाब और सुलूक व तरीक़त के बारे में अहेम हिदायात पर हावी है। उनकी इससे ज्यादा मशहूर किताब "बहिश्ती ज़ेवर" है जिसने दीन की उमूमी तालीम व तरबीयत, इस्लाहे हाल और इस्लाहे रसूम के मैदान में इनक्लाबी किरदार[3] अदा किया है। किताब असलन मुसलमान बच्चियों के लिए लिखी गयी थी, लेकिन इससे तालिब इल्म और उस्ताद भी फ़ायदा उठाते हैं और वह घरों में एक औसत दर्जे के मुफ़्ती और एक अच्छे किस्म के दीनी गाइड का काम देती है। उर्दू में कम किताबें होंगी जिनके इतने एडीशन छपें होंगे जितने इस किताब के।

आज कल इस तरह की किताबों की ज़रुरत मौजूदा नस्ल के लिए इस लिए और बढ़ गई है कि यह दौर इख़्तेसार पसन्द दौर है। वक्त की क़दर व क़ीमत और इसकी तेज़ रफ्तारी का एहसास बहुत बढ़ गया है। हर पेचीदा और तवील, मेहनत तलब और दक़ीक़[4]

---

1. जाप 2. झंडा 3. भूमिका 4. किलिष्ट।

किताब के पढ़ने से दुराव इस दौर[1] का आम मेज़ाज बन गया है। इसी के साथ मौजूदा नस्ल किसी हद तक कमज़ोर और पस्त हिम्मत भी नज़र आती है। सभ्यता की पेचीदगियों और जीवन की जरूरतों ने पढ़ने पढ़ाने वालों को और भी इख्तेसार पसन्द बना दिया है। इसी लिए कुछ लोग इस ज़माने को Sandwich Age कहने लगे हैं।

इस तरह बहुत दिनों से इसकी ज़रुरत महसूस की जा रही थी कि एक नई किताब तैयार की जाय जो पिछली किताबों की जगह काम करे क्योंकि इस दौर की एक ख़ास ज़बान होती है जिसके बिना लोगों को समझाना मुश्किल होता है और हर दौर की अलग नफ़सियात, नई बीमारियाँ और कमजोरियाँ और तबीयत के चोर दरवाजे होते हैं। इस्लामी विचारधारा बाहरी असरात से मुताअसिर होते रहते हैं। बड़े-बड़े समाज सुधारकों को भी अपने-अपने दौर में इसकी रेआयत करनी पड़ी है। दूसरी सदी हिज्री और इसके बाद का ज़माना यूनानी फ़लसफ़ा और उस दौर की अक़्ल के प्रति पूजा से प्रभावित हुआ। और आज का दीनी जेहन और पढ़ा लिखा नवजवान मग़रिब के सियासी फ़लस्फ़ों, इज्तेमाई व इक्तेसादी ढाँचों और ज़िन्दगी व समाज की आजकल के तरीक़ों से मुताअसिर हो रहा है। सिर्फ़ अल्लाह की किताब "क़ुरआन" एक ऐसी किताब है जिसकी ताज़गी में कभी फ़र्क नहीं आता और ज़माने की गरदिश उस पर असरअन्दाज़ नहीं होती। फिर रसूले अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की साबित शुदा सही अहादीस का बेबहा ज़ख़ीरा[2] है। इनके अलावा हर किताब परिवर्तन और तबदीली के नियम में जकड़ी हुई और इस्लाह व तरमीम की मुहताज है।

मेरे कुछ ख़ास दोस्त एक ज़माने से ज़ोर दे रहे थे कि मैं इस विषय पर एक किताब लिखूँ जिससे मौजूदा नस्ल के लोग फ़ायदा उठायें जिस तरह पिछले दौर में इस विषय पर लिखी गई किताबों

---

1. युग 2. भण्डार।

से फ़ायदा उठाया गया। मैं जब इस विषय पर लिखने वाले पिछले लोगों पर नजर डालता और उनकी शान, इख़लास और इल्मी मक़ाम का ख्याल करता तो इस बिषय पर क़लम उठाने की हिम्मत न पड़ती। इसके अलावा जरुरी तसनीफ़ी प्रोग्राम, इल्मी मशगूलियतें और लम्बे-लम्बे सफ़र इस विषय पर संजीदगी से ग़ौर करने का मौक़ा भी नहीं देते थे। लेकिन अन्त में अपने स्वयं के अनुभव और आधुनिक इस्लामी लिट्रेचर में इसकी कमी के एहसास ने ख़ुद इसकी तहरीक शुरू की और मुझे ऐसा महसूस हुआ कि इस काम में और देरी करना एक अहम दीनी फ़रीज़ा की अदायगी में कोताही के समान होगा जिस पर शायद हिसाब भी लिया जाये। इसलिए अल्लाह पर भरोसा करके इस्तेख़ारा और दुआ के बाद काम शुरू कर दिया गया जो अल्लाह की मदद से पूरा हुआ।

किताब में जाती तजरबात का खुलासा और अध्ययन का निचोड़ भी पेश कर दिया गया है जो दावत व तसनीफ़ के अमली तजरबों[1] और उम्मत के मुख़तलिफ़ तबकों से अमली वाक़फियत[2] पर मबनी[3] है। अपनी पिछली किताबों से भी उन इबारतों के पेश करने में ताम्मुल से काम नहीं लिया गया जो मक़सद को पूरा करने के लिए जरुरी समझा गया। अल्लाह की जात से उम्मीद है कि इस किताब के लेखक को भी नफ़ा हासिल होगा और यह उन लोगों के लिए भी मुफ़ीद और कारआमद साबित होगी जो इसको अमल और फ़ायदे की नीयत से पढ़ेंगे।

अबुल हसन अली नदवी
दायरा शाह अलमउल्ला हसनी
रायबरेली

7 शाबान, 1402 हि०
31 मई, 1982 ई०

---

1. अनुभावों 2. कार्य की जानकारी 3. आधारित।

1

दीन इस्लाम का मिज़ाज और उसकी खास-खास बातें।

इस दुनिया में हर जिन्दा शय का एक ख़ास मिज़ाज और उसकी कुछ ख़ास बातें होती हैं जो उसकी "शख़सियत" को बनाने में अहम रोल अदा करती हैं। इसमें इंसान, उनके गिरोह, मिल्लतें और क़ौमें मज़हब व फ़ल्सफ़ा[1] सब एकसाँ तौर से शरीक हैं। यह सब अपनी कुछ ख़ास पहचान व अलामतें रखते हैं। इस लिए दीन इस्लाम की तालीमात को पढ़ने और समझने से पहले यह बात ज़रूरी है कि हम उसके मिज़ाज और उसकी बुनियादी ख़ास-ख़ास बातों की जानकारी करें और तभी हम उससे पूरा-पूरा फ़ायदा उठा सकते हैं।

सबसे पहले हमें यह जान लेना चाहिए कि दीने इस्लाम हम तक हकीमों, दानिशवरों[2], माहरीने क़ानून, उल्मा-ए-इख़लाक़, सल्तनतों के बानी[3], ख्याली घोड़े दौड़ाने वाले फ़ल्सफ़ी, और सियासी रहनुमाओं के ज़रिये नहीं पहुंचा। यह दीन हम तक उन नबियों के ज़रिये पहुंचा है जिनके पास अल्लाह तआला की "वही" आती थी और जिनका सिलसिला अल्लाह के आख़री नबी मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ख़त्म हो चुका है। हज्जतुलविदा के मौक़े पर अरफ़ात के दिन यह आयत नाज़िल[4] हुई थी :–

"आज हमने तुम्हारे लिए दीन कामिल कर दिया, और अपनी

---

1. दर्शनशास्त्र 2. बुद्धिजीवियों 3. संस्थापक 4. अवतरित

नेमत तुम पर पूरी कर दी, और तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन पसन्द किया।" (सूर : मायदा–3)

और जिनके बारे में कुरआन का इरशाद है :–

"और न ख़ाहिशे नफ़स के मुंह से बात निकालते हैं यह (कुरआन) तो हुकमे ख़ुदा है, जो (उनकी तरफ) भेजा जाता है" (सूर : नज्म–3–4)

इस्लाम की सबसे पहली ख़ास बात "अक़ीदा" पर ज़ोर और उसे मज़बूत करने की ताकीद है। हज़रत आदम अलै० से लेकर आख़री नबी मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक सभी नबी एक तैशुदा अक़ीदा की दावत देते रहे और उसके मुक़ाबले में किसी तरह के समझौते पर तैयार न हुए। उनके नज़दीक बेहतर से बेहतर इख़लाक़ी ज़िन्दगी नेकी व सलामत रवी, किसी बेहतर हुकूमत का क़याम, किसी अच्छे समाज का वजूद[1] और किसी इनक़लाब का ज़हूर[2] उस वक्त तक कोई क़दर व क़ीमत नहीं रखता जब तक वह इस अक़ीदा का मानने वाला न हो जिसको वह लेकर आये और जिसकी उन्होंने दावत दी। नबियों की दावत और क़ौमी व सियासी लीडरों के बीच यही फ़र्क़ है। कुरआन मजीद जो तहरीफ़[3] व तबदीली से महफ़ूज़ और क़यामत तक बाक़ी रहने वाली वाहिद आसमानी किताब है और नबियों की सीरत में हज़रत मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सीरत, जिस पर तारीख़ी व इल्मी एतबार से भरोसा किया जा सकता है, में कसरत से इसके दलायल मिलते हैं। नीचे इसकी कुछ मिसालें दी जाती हैं।

इस सिलसिले में सबसे नुमायाँ वह आयत है जिसमें अल्लाह तआला ने अपने नबी हज़रत इब्राहीम अ० के तहम्मुल[4] और नर्म दिली की ख़ास तौर पर तारीफ़ की है :–

तर्जुमा : "बेशक इब्राहीम बड़े तहम्मुल वाले, नर्म दिल, और

1. अस्तित्व 2. जाहिर होना 3. परिवर्तन 4. धैर्य

रूजू करने वाले थे" (सूरे हूद–75)

और उनके साथियों के बारे में इरशाद होता है :–

तर्जुमा : "तुम्हें इब्राहीम अ० और उनके साथियों की नेक चाल चलनी (ज़रूर) है, जब उन्होंने अपनी क़ौम के लोगों से कहा कि हम तुम से उन बुतों से जिनको तुम ख़ुदा के सिवा पूजते हो, बेतअल्लुक़ हैं (और) तुम्हारे माबूदों के (कभी) क़ायल नहीं हो सकते और जब तक तुम एक ख़ुदा पर ईमान न लाओ हम में तुम में हमेशा खुली हुई अदावत रहेगी हाँ, इब्राहीम अ० ने अपने बाप से यह (ज़रूर) कहा कि मैं आपके लिए मग़फ़िरत माँगूगा [1], और मैं ख़ुदा के सामने आपके बारे में किसी चीज का कुछ अख्तेयार नहीं रखता, ऐ हमारे परवरदिगार तुझी पर हमारा भरोसा है, और तेरे ही तरफ़ हम रूजू करते हैं, और तेरे ही हुजूर में हमें लौट जाना है" (सुर : अलमुमतहना–4)

अक़ीदा की अहमियत का अन्दाज़ा इस बात से बख़ूबी हो सकता है कि सूर : अल्काफ़ेरुन मक्का में उस वक्त नाज़िल हुई जब वहां के हालात इस मसले को उस वक्त तक मुल्तवी रखने के हक़ में थे जब तक इस्लाम को ताक़त न हासिल हो जाये। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। कुरआन ने साफ़-साफ़ एलान किया : –

तर्जुमा "ऐ पैग़म्बर इन मुनकिराने इस्लाम से कह दो कि ऐ काफ़िरो जिन (बुतों) को तुम पूजते हो मैं नहीं पूजता,

1. शायद बाज़ दिलों में यह ख़लजान पैदा हो कि हज़रत इब्राहीम अ० ने अपने बुत परस्त बाप से दुआ और इस्तेग़फ़ार का वायदा क्यों किया? इसका जवाब सूर : बराअत की आयत 13-14 में मौजूद है कि उन्होंने इस वायदे का ईफ़ा किया लेकिन जब उनको मालूम हो गया कि वह ख़ुदा का दुश्मन है, तो उससे बेज़ार हो गये और उन्होंने इज़हार बराअत किया और अब हमेशा के लिए यही उसूल बना दिया गया।

और जिस (खुदा) की मैं इबादत करता हूँ, उसकी तुम इबादत नहीं करते और मैं फिर कहता हूँ कि जिनकी तुम पूजा करते हो, उनकी मैं पूजा करने वाला नहीं हूँ, और न तुम उसकी बन्दगी करने वाले (मालूम होते) हो, जिसकी मैं बन्दगी करता हूँ, तुम अपने दीन पर, मैं अपने दीन पर"। (सूर : अल्काफ़िरून)

अगर अक़ीदा के मामले में किसी को ढील दी जा सकती तो इसके मुस्तहक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा अबूतालिब थे क्योंकि वह ज़िन्दगी भर आपके लिए सीना सपर रहे और जान माल क़ुरबान करते रहे। सीरत निगार एक राय हैं कि "वह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए सपर[1] और हेसार[2] बने हुए थे और अपनी पूरी क़ौम के ख़िलाफ आप के नासिर और हामी थे"। लेकिन सही रवायतों से यह साबित है कि जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अबू तालिब की मौत के वक्त उनके पास तशरीफ़ ले गये, (उस वक्त अबूजहल और अब्दुल्लाह बिन अबी उमैया भी वहां बैठे थे) तो फ़रमाया, "ऐ चचा। आप "लाइलाह इल्लल्लाह" कह दीजिये, मैं इस कल्मे की ख़ुदा के यहां गवाही दूँगा" तो अबूजहल और इब्न अबी उमैया कहने लगे, "अबूतालिब। क्या तुम अब्दुल मुत्तलिब के मजहब से फिर जाओगे? तो अबूतालिब ने यह कहते हुए जान दी कि अब्दुल मुत्तलिब के मजहब पर हूं। सही रवायत में आता है कि "हज़रत अब्बास र० ने अल्लाह के रसूल से अर्ज़ किया कि अबूतालिब आप की हिफ़ाजत और मदद करते थे और आप को बहुत चाहते थे और आप के लिए वह लोगों की नाराज़गी की बिल्कुल परवाह नही करते थे तो क्या इसका फ़ायदा उनको पहुँचेगा? आप ने फ़रमाया कि मैंने उनको आग की लपटों में पाया और मामूली आग तक निकाल लाया।"[3]

1. ढाल 2. क़िला 3. सही मुस्लिम किताबुलईमान।

इसी तरह इमाम मुस्लिम ने हज़रत आयशा र० की रवायत नक़ल किया है कि "मैं ने कहा ऐ अल्लाह के रसूल : इब्न जदआन जाहिलियत के ज़माने में बड़ी सिलह रहमी करते थे, मिसकीनों और ग़रीबों को खाना खिलाते थे तो क्या उनके लिए यह सूदमन्द होगा"? आपने फ़रमाया, "नहीं, इनको इससे कोई फ़ायदा हासिल न होगा क्योंकि उन्होंने कभी नहीं कहा कि, "(ऐ मेरे रब । रोज़े जज़ा[1] को मेरे गुनाह बख्श दीजियेगा)" ।

हज़रत आयशा र० एक रवायत में फ़रमाती हैं "अल्लाह के रसूल स० बदर की तरफ़ रवाना हुए और जब" हर्रतुलवबरा "पर पहुंचे तो एक मशहूर बहादुर आया उसे देखकर सहाबा को बड़ी ख़ुशी हुई कि इससे इस्लाम के लशकर को ताक़त मिलेगी जिसमें सिर्फ 313 अफराद थे । उस बहादुर और जियाले शख्स ने आप के पास आकर अर्ज़ किया, "मैं इसलिए आया हूं कि आप के साथ चलूं और माले ग़नीमत में शरीक हूं ।" अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया," तुम अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान रखते हो?" उसने कहा, "नहीं" । आपने फ़रमाया "वापस जाओ इसलिए कि मैं किसी मुशरिक से मदद नहीं ले सकता"। हज़रत आयशा र० बयान करती हैं कि वह कुछ दूर चला और शजरा के मक़ाम पर फिर आया और अल्लाह के रसूल से वही पहली बात अर्ज की । आपने वही पहला जवाब दिया-फ़रमाया "जाओ, मैं मुशरिक से मदद नहीं लेता" । वह चला गया और बैदा पहुँचने पर फिर आया । आपने फिर पूछा कि अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाते हो"? उसने कहा "हाँ" । उस वक्त अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया "तो चलो" ।

दूसरी बात यह है कि नबियों की दावत व तबलीग़ और जद व जेहद का असल सबब महज़ ख़ुदा की रजा[2] और ख़ुशनूदी की तलब होती है । यह एक ऐसी तेज़ तलवार है जो इस मक़सद के अलावा हर

---

1. परलय के दिन 2. मर्ज़ी

मक़सद को काटती है फिर दुनिया की कोई तलब बाक़ी नहीं रहती। न मुल्क व दौलत न सल्तनत व रियासत न इज्ज़त की तमन्ना न इक़्तेदार की हविस।

यह हक़ीक़त सबसे ज्यादा अल्लाह के रसूल स० की उस दुआ में झलकती है जो आप ने तायफ़ में उस वक्त की थी जब तायफ़ वालों ने आप के साथ वहशियाना बर्ताव किया था जिस की मिसाल दावत व रिसालत की तारीख़ में मिलनी मुश्किल है। आप जिस मक़सद के लिए वहां गये थे वह पूरा नहीं हुआ। तायफ़ का एक भी आदमी मुसलमान नहीं हुआ। मगर इस नाज़ुक घड़ी में आपने जो दुआ की उसके कल्मात यह थे :

"इलाही अपनी कमज़ोरी, बेसरोसामानी और लोगों में तहक़ीर की बाबत तेरे सामने फ़रियाद करता हूं। तू सब रहम करने वालों से ज्यादा रहम करने वाला है, दरमान्दा और आजिज़ों का मालिक तू ही है, और मेरा मालिक भी तो ही है, मुझे किसके सिपुर्द कर रहे हैं, क्या बेगाना तुर्शरो के, या उस दुश्मन के जो काम पर क़ाबू रखता है।"

इस नुक्ते पर आकर नबूवत का मिज़ाज पूरी तरह झलक उठता है आप फ़रमाते हैं।

"अगर मुझ पर तेरा ग़ज़ब नहीं तो मुझे भी इसकी परवाह नहीं, लेकिन तेरी आफ़ियत मेरे लिए ज्यादा फैलाव वाली है।"

नूह अ० जिन्होंने दावत व तबलीग़ का काम एक लम्बी मुद्दत तक किया, के बारे में क़ुरआन की शहादत है :–

तर्जुमा : वह अपनी क़ौम में पचास साल कम हज़ार साल रहे। (सूर : अन्कबूत–14)

"(नूह ने) ख़ुदा से अर्ज़ की कि परवरदिगार मैं अपनी क़ौम को रात–दिन बुलाता रहा ...... फिर मैं उनको खुले तौर पर भी बुलाता रहा, और ज़ाहिरा व पोशीदा हर तरह समझाता रहा"। (सूर : नूह–5, 8, 9)

लेकिन इस मेहनत का नतीजा क्या रहा ?

"उनके साथ ईमान बहुत ही कम लोग लाये।" (सूर : हूद–40) ॥

मगर हज़रत नूह अ० इस पर मायूस नहीं हुए और अपनी मेहनत को बेकार नहीं समझा और न इससे उनके ख़ुदा के महबूब पैग़म्बर होने में कोई फ़र्क़ आता है। ख़ुदा उनसे राज़ी था और वह अपने ख़ुदा से राज़ी थे। ख़ुदा का पैग़ाम उन्होंने ख़ुदा के बन्दों तक पहुँचा दिया था जिसके इनाम में क़ुरआन की यह आयतें नाज़िल हुई।

तर्जुमा : "और पीछे आने वालों में उनका ज़िक्र बाक़ी छोड़ दिया यानी तमाम जहान में नूह अ० पर सलाम हो। नेकूकारों को हम ऐसे ही बदला दिया करते हैं, बेशक वह हमारे मोमिन बन्दों में से थे।" (सूर : साफ़्फ़ात 78–81)

क़ुरआन करीम दावत व तबलीग़ के मैदान में काम करने वालों को तालीम देता है कि :–

तर्जुमा : "वह जो आख़िरत का घर, है, हमने उसे उन लोगों के लिए तैयार कर रखा है, जो मुल्क में ज़ुल्म और फ़साद का इरादा नहीं करते और अन्जामे नेक परहेज़गारों ही का है"। (सूर : क़सस–83)

इसका यह मतलब नहीं है कि दावत व तबलीग़ के काम में ईमान की इस्लामी ताक़त की अहमियत कम की जाये। यह ख्याल गैर इस्लामी है और इसमें रहबानियत की झलक मिलती है जिसके लिए इस्लाम में कोई जगह नहीं। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा :– "जो लोग तुम में से ईमान लाये, और नेक काम करते रहे, उनसे ख़ुदा का वायदा है कि उनको मुल्क का हाकिम बना देगा, जैसा कि उनसे पहले लोगों को हाकिम बनाया था, और उनके दीन को जिसे उसने उनके लिए पसन्द किया है, मजबूत और पायदार करेगा और ख़ौफ़

के बाद उनको अमन बख्शेगा, वह मेरी इबादत करेंगें और मेरे साथ किसी को शरीक न बनायेंगे और जो इसके बाद कुफ्र करे तो ऐसे लोग बदकिरदार हैं"। (सूर : नूर-५५)

यह भी इरशाद है :–

"और उन लोगों से लड़ते रहो, यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी न रहे, और दीन सब खुदा का ही हो जाय।
(सूर: इनफ़ाल-39]

यह भी इरशाद है :–

तर्जुमा : "यह वह लोग हैं कि अगर हम इनको मुल्क में दस्तरस दें तो नमाज को क़ायम करें, और ज़कात अदा करें, और नेक काम करने का हुक्म दें, और बुरे कामों से मना करें, और सब कामों का अन्जाम खुदा ही के अख्तयार में है।"
(सूर : हज-41)

अल्लाह तआला ने मोमनीन के लिए इज्ज़त व सरबलन्दी का वायदा फ़रमाया है लेकिन इस शर्त पर कि उनमें ईमान हो और उनके अमल का मक़सद सिर्फ़ खुदा की रज़ा हासिल करना हो इज्ज़त व इक्तेदार हासिल करना नहीं। क्योंकि इज्ज़त व इक्तेदार नतीजा है न कि मक़सद, इनाम है न कि ग़र्ज़ व ग़ायत। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : "और (देखो) बेदिल न होना, और न किसी तरह का ग़म करना, अगर तुम मोमिन हो तो तुम्ही ग़ालिब रहोगे।"
(सूर : आले इमरान-१३९)

तर्जुमा : "जिस दिन न माल ही कुछ फ़ायदा दे सकेगा न औलाद, हाँ जो शख्स खुदा के पास पाक दिल लेकर आया (वह बच जायेगा)" (सूर : शेरा-88-89)

अल्लाहतआला हजरत इब्राहीम अ० की तारीफ़ करते हुए फ़रमाता है (जब वह अपने रब के पास ऐब से पाक दिल लेकर आये) (सूर : साफ़फ़ात-84) । इसलिए हर उस चीज से जो क़ल्बे

सलीम के मनाफ़ी हो और जिसके सनम बन जाने का ख़तरा हो उससे चौकन्ना रहने की ज़रूरत है और उससे हर क़ीमत पर बचना लाज़मी है। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : "क्या तुमने उस शख्स को देखा जिसने अपनी ख्वाहिशे नफ़स् को माबूद बना रखा है।" (सूर : अल-फ़ुरकान-43)

अल्लाह के रसूल स० ने फरमाया :–

"शैतान इब्ने आदम (की रगों) में ख़ून की तरह दौड़ जाता है।"

दीन इस्लाम की तीसरी ख़ुसूसियत यह है कि नबी जो अक़ीदा [1] व शरीअत लेकर आते हैं उसमें कोई तरमीम गवारा नहीं करते। उनके यहाँ तबदीली की गुंजाइश नहीं होती। अल्लाह तआला अपने आख़िरी पैगम्बर को मुख़ातिब करके फ़रमाता है :–

तर्जुमा : "पस जो हुक्म तुम को ख़ुदा की तरफ से मिला है, वह सुना दो और मुशरिकों का ज़रा ख्याल न करो। (सूर : अलहज्र-94)

ऐ पैग़म्बर ! जो इरशादात तुम पर ख़ुदा की तरफ़ से नाज़िल हुए हैं सब लोगों को पहुँचा दो और अगर ऐसा न किया तो तुम ख़ुदा का पैग़ाम पहुँचाने में क़ासिर रहे, और ख़ुदा तुम को लगों से बचाये रखेगा। (सूर : मायदा-67)

तर्जुमा : "यह लोग चाहते हैं कि तुम नरमी अख्तेयार करो तो यह भी नर्म हो जायें" (सूर : अलक़लम-9)

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मौक़िफ़ तौहीद और इस्लाम के तमाम बुनियादी अक़ायद और दीन के अरकान व फ़रायज़ के बारे में लचकदार न था जैसा कि सियासी लीडर हर ज़माने में करते रहें हैं। शहर तायफ़ के फ़तेह हो जाने के बाद

1. आस्था

अरब के दूसरे मशहूर क़बीला सक़ीफ़ का वफ़द इस्लाम क़बूल करने के बाद आप की ख़िदमत में हाज़िर होता है और दरख़्वास्त करता है कि लात नामी बुत को तीन साल तक अपने हाल पर रहने दिया जाये और दूसरे बुतों की तरह उसके साथ मामला न किया जाय। अल्लाह के रसूल साफ़ इनकार फ़रमा देते हैं। वफद के लोग दो साल फिर एक साल की मुहलत माँगते हैं। आप बराबर इनकार फ़रमाते हैं। यहाँ तक कि वफद इस पर उतर आता है कि हमारे तायफ़ वापस जाने के बाद सिर्फ़ एक महीना की मुहलत दे दी जाये। लेकिन आप उन की बात मानने के बजाय अबूसुफियान बिन हरब और कबीला सक़ीफ़ के एक शख़्स मुग़ीरा बिन शाबा को मामूर फ़रमाते हैं कि वह जायें और लात व उसके मोबद को ढा दें। वफद के लोग एक दरख़्वास्त यह भी करते हें कि उन्हें नमाज़ से माफ रखा जाय। आप फ़रमाते हैं, "उस दीन में कोई भलाई नहीं, जिसमें नमाज़ नहीं"। इस बात-चीत से फ़ारिग़ होकर वफद अपने वतन वापस लौटता है उनके साथ अबू सुफ़यान और मुग़ीरा भी जाते हैं और लात को ढा देते हैं। और पूरे क़बीला सक़ीफ़ में इस्लाम फैल जाता हैं यहाँ तक कि पूरा तायफ़ मुसलमान हो जाता है।

नबीयों की यह भी ख़ुसूसियत है कि वह तबलीग़ व दावत में वही असलुब इस्तेमाल करते हैं जो उनकी दावत की रूह और नबूवत के मेज़ाज से हम आहंग होता है। वह खुलकर और पूरी वज़ाहत के साथ आख़िरत की दावत देते हैं। जन्नत और उसकी नेमतों का शौक दिलाते हैं। दोज़ख़ ओर उसके अज़ाब से डराते हैं। जन्नत व दोज़ख़ दोनों का तज़किरा इस तरह करते हैं गोया वह निगाहों के सामने हैं वह अक़्ली दलायल के बजाय ईमान बिलग़ैब का मतालबा करते हैं। उनका अहेद माद्दी फ़ल्सफ़ों और नज़रियात से एकसर ख़ाली नही होता। इस अहेद में भी कुछ तबक़ों की ख़ास इस्तेलाहात होती हैं वह उनसे नावाक़िफ़ नहीं होते। वह यह भी ख़ूब समझते हें कि यह फ़लसफ़े और इस्तेलाहात सिक्का रायजुलवक़्त

हैं और इन्हीं का इस दौर में चलन है। लेकिन लोगों को अपनी तरफ़ बुलाने के लिए वह इन से काम नही लेते। वह अल्लाह तआला पर उसकी सिफ़ात के साथ, मलायका पर, तक़दीर पर, मौत के बाद उठाये जाने पर ईमान लाने की दावत देते हैं। वह बेहिचक एलान करते हैं कि उनकी दावत क़बूल करने और उन पर ईमान लाने का इनाम जन्नत और ख़ुदा की रज़ा व ख़ुशनूदी है।

दावत के सिलसिले में इस नववी मेज़ाज की बेहतरीन मिसाल उक़बये सानिया की बैयत में मिलती है, जब यसरब के 73 मर्द और दो औरतें हज के लिए मक्का आयीं और उक़बा के पास वादी में इकट्ठा हुए अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने चचा हज़रत अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के साथ जो उस वक़्त तक मुसलमान नहीं हुए थे, तशरीफ़ लाये। आपने क़ुरआन पाक की आयत तिलावत फ़र्माई। ख़ुदाये वाहिद की तरफ़ दावत और इस्लाम की तरग़ीब दी और फ़रमाया कि तुम से मैं यह अहेद और बैयत लेता हूँ कि तुम मेरे साथ हिफ़ाज़त का वही मामला करोगे जो अपने बाल बच्चों के साथ करते हो। अन्सार ने बैयत की और आपसे यह वायदा लिया कि आप उनको छोड़कर फिर अपनी क़ौम में वापस न जायेंगे। वह समझदार थे और इस अहेद व पैमान के दूररस और ख़तरनाक नतायज से बख़ूबी वाक़िफ़ थे। वह समझते थे कि वह तमाम क़रीबी क़बायल बल्कि पूरे मुल्के अरब से दुश्मनी मोल ले रहे हैं। उनके एक तजरबेकार साथी अब्बास बिन इबादा ने भी उन को इन नतायज से आगाह किया। लेकिन उन्होंने एक ज़बान होकर जवाब दिया कि हम माल के नुक़सान और अपने ख़ानदान के बड़े बड़े लोगों के क़त्ल हो जाने का ख़तरा मोल लेते हुए आप को लेजा रहे हैं। फिर अल्लाह के रसूल स० से उन्होंने अर्ज़ किया "ऐ! अल्लाह के रसूल अगर हमने वायदा वफ़ा कर दिखलाया तो हमें क्या मिलेगा"।

ऐसे नाज़ुक मौक़े पर अगर ख़ुदा के पैग़म्बर की जगह कोई सियासी लीडर होता तो उसका जवाब होता कि इन्तेशार के बाद

अब तुम्हारी शीराज़ावन्दी होगी। अब पूरे अरब में तुम्हारा वजूद तसलीम किया जायेगा और तुम एक ताक़त बन कर उभरोगे। और यह क़यास के परे कोई बात न थी। खुद यसरब वालों में से एक शख्स ने इस से पहले कहा था :–

"हम अपनी क़ौम को इस हाल में छोड़कर आये हैं कि शायद ही किसी क़ौम में ऐसी दुश्मनी और इन्तेशार हो, जैसा हमारी क़ोम में है, हमें उमीद है कि अल्लाह आपके ज़रिये इनकी शीराज़ावन्दी करे, अब हम उनके पास जायेंगें और आपकी यह दावत उनके सामने पेश करेगें, और जिस दीन को हमने क़बूल किया है उनको भी इस की दावत देगें। अगर अल्लाह आप की ज़ात पर इनको एक करदे तो आप से बढ़कर कोई साहवे इक़्तेदार और बाइज्ज़त शख्स न होगा"।[1]

लेकिन अल्लाह के रसूल स० ने इस सवाल के जवाब में कि "ऐ अल्लाह के रसूल फिर हमें क्या मिलेगा"? सिर्फ़ इतना कहा कि "जन्नत"। इस पर उन्होंने अर्ज किया कि हुजूर दस्ते मुबारक दराज़ फ़रमाइये। आपने अपना हाथ बढ़ाया और उन्होंने बैयत करली।

इसी ग़ैरत का असर है कि पैग़म्बर किसी शरयी हुक्म में किसी तबदीली के न रवादार होते हैं और न किसी हुक्म पर अमल, किसी की सिफ़ारिश पर मुल्तवी रखते हैं। वह अपने व बेगाना सब पर एकसाँ तौर पर अल्लाह के अहकाम का नेफ़ाज़[2] करते हैं। कबीला बनी मख़ज़ूम की एक ख़ातून के बारे में जिसने चोरी की थी, ओसामा बिन ज़ैद र० सिफ़ारिश करने आप के पास आये तो अल्लाह के रसूल स० ने ग़ज़बनाक होकर फ़रमाया, "क्या अल्लाह के मुतय्यन कर्दा हुदूद के बारे में सिफ़ारिश करते हो"? फिर आपने तक़रीर में फ़रमाया, "ए लोगो! तुम से पहले उम्मतें इसलिए हेलाक

1. सीरत इब्न हेशाम 2: आदेशों को लागू करना।

हुईं कि जब उनमें कोई असरदार आदमी चोरी करता तो उसको छोड़ देते और कोई कमजोर आदमी चोरी करता तो उसे सजा देते। क़सम है ख़ुदाये पाक की, अगर मोहम्मद स० की बेटी फ़ात्मा र० भी चोरी करेगी तो मैं उसका हाथ काटने से दरेग़ न करूँगा।''

यही वह ग़ैरत है जो नबियों के नायबीन में मुन्तक़िल हुई। उन्होंने भी कामयाबी व नाकामी और नफ़ा नुक़सान से आँखें बन्द करके कुरआनी तालीमात और शरयी अहकाम की हिफ़ाज़त की। तारीख़ में इसकी शानदार मिसाल फ़ारूक़ आज़म र० का वह वाक़ेया है जो जिबला इब्न अयहम ग़स्सानी के पाँच सौ लोगों के साथ मदीना आया। जब वह मदीना में दाखिल हुआ तो कोई दोशीज़ा और पर्दा नशीन औरत ऐसी न थी जो उसको और उसके ज़र्क़ बर्क़ लेबास को देखने के लिए न निकल आई हो। जब हज़रत उमर र० हज के लिए तशरीफ़ ले गये तो जिबला भी साथ गया। वह बैतुल्लाह का तवाफ़ कर ही रहा था कि बनी फ़िज़ारा के एक शख्स का पाँव उसके लटकते हुए तहबन्द की कोर पर पड़ गया और वह खुल गया। जिबला ने हाथ से फ़िज़ारी की नाक पर ज़ोर का थप्पड़ मारा। फ़िज़ारी ने हज़रत उमर र० के यहां नालिश की। अमीरूल मोमिनीन ने जिबला को बुला भेजा। वह जब आया तो उससे पूछा कि तुमने यह क्या किया? उसने कहा, ''हाँ, अमीरुल मोमिनीन इसने मेरा तहबन्द खोलना चाहा था, अगर काबा का एहतराम माने न होता तो मैं इसकी पेशानी पर तलवार का वार करता''। हज़रत उमर ने फ़रमाया, ''तुमने इक़रार कर लिया। अब या तो तुम इस शख्स को राज़ी करलो वरना मैं क़सास लूँगा।'' जिबला ने कहा कि आप मेरे साथ क्या करेंगे? हज़रत उमर ने फ़रमाया कि इससे कहूँगा कि तुम्हारी नाक पर वैसे ही थप्पड़ मारे जैसे तुमने उसके नाक पर मारा। जिबला ने हैरत के साथ कहा कि अमीरुल मोमिनीन। यह कैसे हो सकता है वह एक आम आदमी है और में अपने इलाक़े का ताजदार हूं। हज़रत उमर र०

ने फ़रमाया कि इस्लाम ने तुमको और इसको बराबर कर दिया। अब सिवाय तक़वा के किसी चीज की बुनियाद पर तुम इससे अफ़ज़ल नहीं हो सकते। जिबला ने कहा, "मैं समझता था कि इस्लाम क़बूल करके मैं जाहिलियत के मुकाबले में ज्यादा बाइज्जत हो जाऊँगा।" हज़रत उमर र० ने फ़रमाया, "यह बातें छोड़ो। या तो इस शख्स को राज़ी करो वरना कसास के लिए तैयार हो जाओ।" जिबला ने जब हज़रत उमर र० के यह तेवर देखे तो अर्ज किया कि मुझे आज रात ग़ौर करने का मौक़ा दिया जाय। हज़रत उमर र० ने उसकी बात मान ली। रात के सन्नाटे और लोगों से छिपा कर जिबला अपने घोड़ों और ऊँटों को लेकर शाम की तरफ़ चला गया। सुबह मक्का में उसका पता निशान न था। एक ज़माने के बाद जब जसामा बिन मुसाहिक क़नानी से जो उसके दरबार में शरीक हुए थे हज़रत उमर र० ने उसकी शाहाना शान व शौकत के हालात सुने तो फ़रमाया, "वह महरुम रहा, आख़िरत के बदले में दुनिया ख़रीद ली। उसकी तिजारत खोटी रही"।

इसका यह मतलब नहीं है कि अंबियाक्राम दावत व तबलीग़ के सिलसिले में हिकमत से काम नहीं लेते। ऐसा नहीं है। अल्लाह तआला फ़रमाता है :

> तर्जुमा – और हमने कोई पैग़म्बर नहीं भेजा मगर वह अपनी क़ौम की जबान बोलता था कि उन्हें (ख़ुदा के अहकाम) खोल खोल कर बता दे।" (सूर : इब्राहीम–4)

जबान का मतलब यहां चन्द जुमलों और अलफ़ाज में महदूद नहीं वह उसलूब, तर्जे कलाम सब पर हावी है। इसका दिलकश नमूना हज़रत यूसुफ़ अ० की जेल में अपने दोनों साथियों से नसीहत, हज़रत इब्राहीम अ० और हज़रत मूसा अ० के अपनी अपनी क़ौम और अपने अपने दौर के बादशाहों से मुक़ालमे में नज़र आता है। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : ऐ पैग़म्बर। लोगों को दानिश और नेक नसीहत से अपने रब के रास्ते की तरफ़ बुलाओ और बहुत अच्छे तरीक़े से उनसे मुनाज़रा करो।'' (सूर : नहल 125)

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सहाबा क्राम को जब दावत व तबलीग़ की मुहिम पर रवाना फ़रमाते तो नरमी, शफ़क़त, सहूलत व आसानी पैदा करने और बशारत देने की हिदायत फ़रमाते। आपने हज़रत मआज़ बिन जबल र० और हज़रत अबूमूसा अशअरी र० को यमन भेजते हुए हिदायत फ़रमाई।
''(आसानी पैदा करना सख़्ती न करना, ख़ुशख़बरी देना वहशत न पैदा करना) और ''ख़ुद अल्लाह तआला ने आप को मुख़ातिब करते हुए फ़रमाया :

तर्जुमा : ''(ऐ मोहम्मद स०) । ख़ुदा की मेहरबानी से तुम्हारी उफ़ताद मेज़ाज इन लोगों के लिए नरम वाक़े हुई है और अगर तुम बदख़ू और सख़्त दिल होते तो यह तुम्हारे पास से भाग खड़े होते। (सूर : आलेइमरान–159)

अल्लाह के रसूल स० ने सहाबाक्राम से फ़रमाया (तुम्हें आसानी पैदा करने के लिए उठाया गया है, दुशवारी पैदा करने के लिए नहीं उठाया गया है)

इस सिलसिले के बेशुमार दलायल हैं। सूर : इनाम में बहुत से नबियों के नामों के साथ ज़िक्र करते हुए फ़रमाया गया :–

तर्जुमा : ''यह वह लोग थे जिनको हमने किताब और फ़ैसला-कुन राय क़ायम करने की सलाहियत और नबूवत अता फ़रमाई थी।'' (सूर : इनाम–89)

लेकिन इस ''आसानी'' का ताअल्लुक़ तालीम व तरबियत और जुज़वी मसायल से था जिनका अक़ायद और दीन के बुनियादी उसूलों से कोई ताअल्लुक़ नहीं। जिन बातों का ताअल्लुक़ अल्लाह के हुदूद से है उनमें हर दौर के अंबियाक्राम फ़ौलाद से ज्यादा बेलचक और पहाड़ से ज्यादा मज़बूत होते हैं।

नबूवत की इम्तेयाज़ी ख़ुसूसियात में चौथी बात यह है कि उनका असल ज़ोर आख़िरत की ज़िन्दगी पर होता है वह इसका इस कसरत से ज़िक्र करते हैं कि यह बात उनकी दावत का मरकज़ी नुक़ता बन जाती है और साफ़ ज़ेहन के साथ उनके वाक़यात और अक़वाल का मुताल्या करने वाला साफ़ महसूस करता है कि आख़िरत उनका नसबुलऐन है। यह बात उनकी फ़ितरते सानिया बन जाती है और आख़िरत की फ़िक्र उनको हमेशा बेचैन रखती है।

अंबिया की ईमान बिल आख़िरत की दावत और उसकी तबलीग सिर्फ़ इख़लाक़ी या इसलामी ज़रूरत के तहत नहीं थी। उनके तरीके दावत व तबलीग़ में यह ईमान विजदानी कैफ़ियत और क़ल्बी जज़बा और दर्दमन्दी के साथ होता है जबकि दूसरे तरीक़ में वह एक ज़ाब्ता और ज़रूरत की हैसियत रखता है।

पांचवी बात यह है कि बेशक अल्लाह तआला ही हक़ीकी हाकिम है और शरीअत साज़ी सिर्फ़ उसी का हक़ है। उसका इरशाद है :—

तर्जुमा : "ख़ुदा के सिवाय किसी की हुकूमत नहीं है।" (सूर : यूसुफ़—40)

क्या उनके वह शरीक हैं जिन्होंने उनके लिए ऐसा दीन मुक़र्रर किया है जिस का ख़ुदा ने हुक्म नहीं दिया। (सूर : शूरा—21)

लेकिन दर हक़ीक़त[1] ख़ालिक़ व मख़लूक़ हाकिम व महकूम के ताअल्लुक़ से कहीं ज्यादा वसीय[2], लतीफ़ और नाज़ुक है। कुरआन मजीद ने अल्लाह तआला के नाम व सिफ़ात को जिस तफ़सील के साथ बयान किया है उसका मक़सद क़तअन[3] यह नहीं मालूम होता कि बन्दे से सिर्फ़ इतना मतलूब है कि वह उसको अपना सब से बड़ा हाकिम समझ ले और उसके साथ किसी को शरीक न करे बल्कि इन नामों और सिफ़ात और उन आयात का जिनमें ख़ुदा से मुहब्बत और

1. वास्तव में 2. विस्तृत 3. कदापि

तअल्लुक़ और उसके ज़िक्र की तरग़ीब आई है साफ़ तक़ाजा यह मालूम होता है कि उससे दिलोजान से मुहब्बत की जाय और उसकी तलब व रज़ा में जान खपा दी जाये उसकी हम्द व सना के गीत गाये जायें उठते बैठते उस के नाम का वज़ीफ़ा पढ़ा जाय उसका ख़ौफ़ हर वक़्त बना रहे उसी के सामने हाथ फैलायें उसी के जमाल पर हर वक़्त निगाहें जमी रहें। उसी की राह में सब कुछ लुटा देने यहाँ तक कि सर कटा देने का जज़बा बेदार रहे।

छठी बात यह है कि अंबियाक्राम अलैहिमुस्सलाम का मख़लूक़ से और उन क़ौमों से जिन की तरफ़ वह भेजे जाते हैं पोस्टमैन जैसा तअल्लुक़ नहीं होता जिसकी ज़िम्मेदारी सिर्फ़ यह है कि वह ख़ुतूत[1] और डाक पाने वाले तक पहुंचा दे फिर उसे उन लोगों से कोई सरोकार नहीं और उन लोगों को इस चिट्ठी रसां से कोई मतलब नहीं। वह अपने कामों और अख़्तियारात में बिल्कुल आज़ाद हैं। और यह कि क़ौमों का तअल्लुक़ नबियों से सिर्फ़ वक्ती और क़ानूनी होता है। यह वह ग़लत और बेबुनियाद ख़याल है जो उन हल्क़ों[2] में रायज था जो नबूवत के बलन्द मक़ाम से नावाक़िफ़ थे। और हमारे इस दौर से उन हल्क़ों में फैला हुआ है जो सुन्नत के मक़ाम से नावाक़िफ़ और हदीस के मुनकिर हैं और जिन पर मज़हब के मसीही तसव्वरात का असर और मग़रिब के तर्ज़ फ़िक्र का ग़लबा है।

नबी पूरी ईन्सानियत के लिए उसवये कामिल, आला क़ाबिले तक़लीद नमूना और इख़लाक़ के बारे में सब से मुकम्मल और आख़िरी मेआर[3] होते हैं। उन पर अल्लाह की इनायतें और तजल्लियाँ होती हैं। उनके इख़लाक़ व आदात और उनकी ज़िन्दगी का तौर तरीक़ सब ख़ुदा की नज़र में महबूब हैं। नबी जिस रास्ते को अख़्तियार करते हैं वह रास्ता ख़ुदा के यहां महबूब बन जाता है और उसको दूसरे रास्तों पर तरजीह हासिल होती है। उनके रास्ते पर

---

1. पत्रों 2. समूहों 3. कसौटी

चलना उनके इख़लाक की झलक पैदा करना अल्लाह की रज़ा हासिल करने का सरल रास्ता हो जाता है इसलिए कि दोस्त का दोस्त दोस्त, और दुश्मन का दोस्त दूश्मन, समझा जाता है। कुरआन मजीद में आता है :—

तर्जुमा : "ऐ पैग़म्बर। (लोगों से) कहदो कि अगर तुम ख़ुदा को दोस्त रखते हो, तो मेरी पैरवी करो, ख़ुदा भी तुम्हें दोस्त रखेगा, और तुम्हारे गुनाहों को माफ़ कर देगा, और ख़ुदा बख्शने वाला मेहरबान है"।

(सूर : आले इमरान–31)

इसके बरअक्स[1] जो ज़ुल्म पर कमर बान्धे हुए हैं और कुफ़ की राह अख्तियार किये हुए हैं उन की तरफ़ दिल का मैलान अल्लाह की ग़ैरत को हरकत में लाने वाला है और अल्लाह से बन्दे को दूर करने वाला है, फ़रमाया गया :—

तर्जुमा : "और जो लोग ज़ालिम हैं उनकी तरफ़ मायल न होना, नहीं तो तुम्हें दोज़ख़ की आग आ लपटेगी, और ख़ुदा के सिवा तुम्हारे और दोस्त नहीं हैं (अगर तुम ज़ालिमों की यरफ़ मायल हो गये) तो फिर तुमको (कहीं से) मदद न मिल सकेगी।" (सूर : हूद–113)

इन पैग़म्बराना मख़सूस आदात व अतवार का नाम शरीअत की ज़बान में "ख़साले फ़ितरत" और "सुननुल्हुदा" है जिसकी शरीअत तालीम व तरग़ीब देती है। इनका अख्तेयार करना लोगों को नबियों के रगं में रगं देता है। और यह वह रगं है, जिस के बारे में अल्लाह ताआला का इरशाद है :—

तर्जुमा : "(कहदो कि हमने) ख़ुदा का रगं (अख्तियार कर लिया) और ख़ुदा से बेहतर रगं किस का हो सकता है, और हम उसकी इबादत करने वाले हैं"।

(सूर : बक़ : 138)

1. विपरीत

एक आदत की दूसरी आदत, एक इख़्लाक़ के दूसरे इख़्लाक़, एक तौर तरीक़ के दूसरे तौर तरीक़ पर दीन व शरीअत में तरजीह का यही राज है, इसी वजह से इसको इस्लामी शरीअत ईमान वालों की पहचान, फ़ितरत के तक़ाज़े की तकमील और इसके ख़िलाफ़ तरीक़ों को जाहिलियत की पहचान क़रार देती है और इन दोनों तरीक़ों और रास्तों में फ़र्क़ यह है कि एक को ख़ुदा के पैग़म्बरों और उसके महबूब बन्दों ने अपनाया दूसरे को उन लोगों ने अपनाया जिनके पास हिदायत की रोशनी और आसमानी तालीमात नहीं हैं। इस उसूल के तहत खाने पीने, कामों में दायें बायें हाथ का फ़र्क़, लेबास व ज़ीनत, रहन सहन के बहुत से उसूल आजाते हैं।

जहां तक अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तअल्लुक़ है इस पहलू पर और ज्यादा ज़ोर देने की ज़रूरत है। आप की ज़ात के साथ सिर्फ़ ज़ाब्ता और कानून का तअल्लुक़ काफी नहीं, बल्कि ऐसा रूहानी और जज़बाती तअल्लुक मतलूब है जो जान व माल से बढ़कर हो। सही हदीस में आया है :–

> "उस वक्त तक तुम में से कोई मोमिन नही होगा, जब तक मैं उसको अपनी औलाद, माँ बाप और तमाम लोगों से ज्यादा महबूब न हो जाऊँ।" (बुख़ारी व मुस्लिम)

दूसरी हदीस में है :–

> "तुम में से कोई उस वक्त तक मोमिन न होगा जब तक मैं उसे अपनी ज़ात से ज्यादा अज़ीज़ व महबूब न हूँ।"
> (मसनद अहमद)

इस सिलसिले में उन तमाम बातों से बचने की ज़रूरत है, जो इस तअल्लुक़ व मुहब्बत के सोतों को ख़ुश्क या कमज़ोर करते हैं। सूर : अहज़ाब, सूर : हुजरात और सूर : फ़तेह को ग़ौर से पढ़ने, तशहुद व नमाज़ जनाज़ा में दुरूद व सलात की शमूलियत पर ग़ौर, कुरआन में दुरूद की तरग़ीब और दुरूद की फ़ज़ीलत में कसरत से वारिद होने वाली अहादीस को ग़ौर से पढ़ने से पता चलता है कि

अल्लाह के रसूल स० के बारे में ऐक मुसलमान से इस से कुछ ज्यादा मतलूब है जिसको सिर्फ़ क़ानूनी और जाब्ते का तअल्लुक़ कहा जाता है। इसके लिए वह तअल्लुक़ मतलूब है जिसके सोते दिल की गहराइयों से फूटते हैं। इसे कुरआन में "ताज़ीर" व "तौक़ीर" के लफ्ज़ से अदा किया है :—

तर्जुमा : "उसकी मदद करो और उसको बुजुर्ग समझो"
(सूर : फ़तेह—9)

इसकी रौशन मिसालें ग़ज़वये रज़ीअ इब्न-अल-दुस्ना के वाक़या, ग़ज़वये ओहद के मौके पर अबूदुजाना और हज़रत तल्हा के तर्ज़े अमल, इसी ग़ज़वे में बनी देनार क़ी मुसलमान ख़ातून के जवाब, सुलह हुदैबिया के मौक़े पर अल्लाह के रसूल स० के साथ सहाबाक्राम की वालेहाना[1] मुहब्बत और अदब व एहतराम में देखी जा सकती है जिन की बिना पर अबूसुफ़ियान (जो उस वक्त तक मुसलमान नहीं हुये थे) की ज़बान से बेसाख्ता निकला कि "मैंने किसी को किसी से इस तरह मुहब्बत करते नहीं देखा, जिस तरह मोहम्मद स० से करते हैं।" और कुरैश को क़ासिद उरवा बिन मसऊद सक़फ़ी ने कहा कि "ख़ुदा की क़सम मैंने किसरा व क़ैसर के दरबार भी देखे हैं, मैंने क़िसी बादशाह की ऐसी इज्ज़त होते हुए नहीं देखी जिस तरह मोहम्मद स० के साथी मोहम्मद स० की इज्ज़त करते हैं।[2]

---

1. प्रगाढ़
2. ज़ैद इब्न—अल—दुस्ना को जब क़त्लगाह में लेजाया जा रहा था तो अबू सुफ़ियान ने उनसे कहा कि क्या तुम यह पसन्द करोगे कि मुहम्मद स० तुम्हारी जगह पर हों और तुम अपने घर में महफ़ूज़ हो ? हज़रत ज़ैद ने कहा, ख़ुदा की क़सम मुझे तो यह भी मन्जूर नही कि मोहम्मद स० जहाँ हैं वहीं उनके कोई कांटा भी चुभे। और मैं अपने घर में आराम से बैठा रहूं। बनी देनार की एक मुसलमान ख़ातून के शौहर, भाई और बाप ग़ज़वये ओहद में काम आये। जब उनको इस हादिसे की ख़बर दी गई

[शेष पृष्ठ 35 पर

इस पाक मुहब्बत के वग़ैर जो शरयी अहकाम व आदाव के तावे व उसवये सहावा र० के इत्तेवा के साथ हो, उसवये रसूल की कामिल पैरवी और शरीअत की मज़बूत पकड़ मुमकिन नहीं। मुसलमान जो कभी ख़ुदा और रसूल के इश्क़ की वदौलत दुनिया में सुर्ख़रू थे, इसके वग़ैर सर्द राख का ढेर वने हुए हैं :–

बुझी इश्क़ की आग अन्धेर है,
मुसलमाँ नहीं ख़ाक का ढेर है।

दीन की सातवीं ख़ुसूसियत उसकी कामिलियत और दवाम [1], है क्योंकि यह एलान कर दिया गया है कि अक़ायद व शरीअत की मुकम्मल तालीम दी जा चुकी। इरशाद होता है :

तर्जुमा : "मोहम्मद स० तुम्हारे मर्दों में से किसी के वालिद नहीं हैं, वल्कि ख़ुदा के पैग़म्बर और ख़ातमन्नवीयीन हैं, और ख़ुदा हर चीज़ से वाक़िफ़ है।" (सूर :अहज़ाव-40)

और क़ुरआन ने साफ़-साफ़ कह दिया :–

तर्जुमा : "आज हमने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन कामिल कर दिया, और अपनी नेमतें तुम पर पूरी कर दीं, और तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन पसन्द किया।" (सूर : मायदा–3)

यह आयत अरफ़ात के दिन हज्जतुलविदा के मौक़े पर सन् 10 हिज्री में नाज़िल हुई। वाज़ ज़हीन यहूदी आलिम जो क़दीम

पृष्ठ 34 का शेष]

तो उनकी ज़वान से वे अख़्तियार निकला "यह वताओ कि अल्लाह के रसूल स० कैसे हैं ?" लोगों ने कहा कि अल्हम्दुलिल्लाह आप ख़ैरियत से हैं। उन्होंने कहा कि मुझे दीदार करा दो जव उनकी नजर चेहर–ए–मुबारक पर पड़ी तो बोल उठीं "आप के होते हुए हर मुसीबत हेच है।" अबू दुजाना ने अपने को अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए ढाल वना दिया और हज़रत अबू तल्हा ने अपने हाथ को ढाल बना दिया। यहां तक कि हरकत व इस्तेमाल के क़ाबिल नहीं रहा।

1. स्थायित्व

मज़ाहिब की तारीख़ से वाक़िफ़ थे, भॉप गये कि यह वह एजाज़[1] है जो तनहा मुसलमानों को दिया गया है। उन्होंने हज़रत उमर र० से कहा कि ऐ अमीरुलमोमिनीन आप अपनी किताब में एक ऐसी आयत की तिलावत करते हैं जो अगर हम यहूदियों पर नाज़िल होती तो हम उस दिन ईद मनाते।

अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाद नबूवत का इख्तेताम इन्सानियत का एज़ाज़ और उनके साथ रहमत व शफ़क़त का नतीजा था, और इसका एलान था कि अब इंसानियत पुख्तगी और कमाल के मरहले को पहुँच गई, और नबूवत के सिलसिले के ख़ातमा से इंसानी सलाहियतें इस ख़तरे से महफूज़ हो गईं कि थोड़े थोड़े समय के बाद एक नबी की दावत का ज़हूर हो और समाज अपने सारे मसायल से हट कर इसकी हक़ीक़त मालूम करने और उसकी तसदीक़ करने में लग जाये। इस तरह महदूद इंसानी ताक़त को रोज़ रोज़ की आज़माइश से बचा लिया गया। और नस्ले इंसानी को बार बार आसमान की तरफ़ निगाह उठाने के बजाय अपनी सलाहियतों के इस्तेमाल के लिए इस ज़मीन पर ध्यान देने की दावत दी गई।

इस अक़ीदा ही की बुनियाद पर यह उम्मत ख़तरनाक साज़िशों का मुकाबला कर सकी। इसका अपना एक रुहानी मरकज़ और इल्मी सरचश्मा है जिससे उसका गहरा तअल्लुक़ है। इसकी बुनियाद पर ज़माने में मुसलमानों में एकता कायम हो सकती है। इससे ज़िम्मेदारी का एहसास उभरता है और समाज में इससे फ़साद को रोकने और हक़ व इंसान को क़ायम करने में मदद ली जा सकती है। उम्मत को अब न किसी नये नबी की ज़रूरत है और न किसी ऐसे "इमाम मासूम" की हाजत जो अंबियाक्राम के काम की तकमील करे। और न इस्लामी निशाते सानिया और जदीद दीनी तहरीक के लिए किसी

---

1. सम्मान

ऐसी दावत या शख़सियत पर एतमाद की ज़रूरत है जो अक्ल के अहाते में न आये और जिससे सियासी फ़ायदा उठाये जा सकने का अंदेशा हो।

इस दीन की आठवीं ख़ुसूसियत यह है कि अपनी असल हक़ीक़त और ताज़गी के साथ बाक़ी है। इसकी किताब महफ़ूज़ और हर दौर में समझी जाने वाली है। यह जिस उम्मत के पास है वह गुमराही और किसी साज़िश का शिकार हो जाने से महफ़ूज़ है। क़ुरआन का यह एजाज़ और उसके मिनजानिब अल्लाह होने की दलील है कि उसने क़ुरआन मजीद की सबसे ज़्यादा पढ़ी जाने वाली सूर: फ़ातेहा में ईसाइयों के लिए "वलज़्ज़ालीन" का लक़ब इस्तेमाल किया। इस लफ़्ज़ का राज़ वही समझ सकता है जो ईसाइयत की तारीख़ से अच्छी तरह वाक़िफ़ हो। मसीहीयत अपने इब्तेदायी दौर ही में उस सही रास्ते से हट गई जिस पर हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम इसको छोड़ कर गये थे। एक ईसाई आलिम अपनी किताब में लिखता है :—

"जिस अक़ीदा और नेज़ाम का ज़िक्र हमें इंजील में मिलता है उसकी दावत हज़रत मसीहा अ० ने अपने क़ौल व अमल से कभी नहीं दी थी। इस वक्त ईसाईयों और यहूदियों व मुसलमानों के बीच जो झगड़ा है उसकी ज़िम्मेदारी हज़रत मसीह अ० के सर पर नहीं है बल्कि यह सब उस यहूदी, ईसाई बेदीन पाल का करिश्मा है और मुक़द्दस किताब की तमसील के तरीक़े पर तशरीह और उसे मिसालों से भर देने का नतीजा है। पाल ने स्टीफ़ेन की तक़लीद में जो एसीनियो मज़हब का मानने वाला है, हज़रत मसीह अ० के साथ बहुत सी बौद्ध रसूम को जोड़ दीं। आज इंजील में जो मुतज़ाद कहानियां और वाक़ेयात मिलते हैं और जो हज़रत मसीह अ० को उनके मरतबे से हट कर पेश करते हैं वह सब पाल के बनाये हुए हैं। हज़रत मसीह अ० ने नहीं बल्कि पाल और उनके बाद आने वाले पादरियों और

राहिबों ने इस सारे अक़ीदा और नेज़ाम को तरतीब दिया जिसे आर्थोडाक्स मसीही दुनिया ने अट्ठारह सदियों से अपने अक़ीदा की बुनियाद क़रार दे रखा है।" [1]

अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : "बेशक यह (किताब) नसीहत हमीं ने उतारी है, और हमीं इसके निगहबान हैं"। (सूर : हज्र–9)

इतना ही नहीं यह भी फ़रमाया गया :–

तर्जुमा : "इस (कुरआन) का जमा करना और पढ़वाना हमारे ज़िम्मे है, जब हम "वही" पढ़ा करें तो तुम (इस को सुना करो) फिर इसी तरह पढ़ो फिर इस (के मानी) का बयान भी हमारे ज़िम्मे है।" (सूर : क़यामत-17–19)

फिर उस दीन पर भरोसा नहीं किया जा सकता जिस पर कभी-कभी कुछ दिनों तक अमल किया गया वह पेड़ जो लम्बे समय तक बेहतर से बेहतर मौसम पाने के बावजूद फल न दे भरोसे के क़ाबिल नहीं हो सकता। फिर यह उम्मत सिर्फ इस आसमानी किताब की मुख़ातिब ही नहीं, वह इसके पैग़ाम को दुनिया में फैलाने में, उसे समझने उस पर अमल की दावत देने और ख़ुद इसका नमूना बनने की भी ज़िम्मेदार है।

नवीं और आख़िरी बात यह है कि इस्लाम को एक साज़गार फ़िज़ा, एक मुनासिब मौसम और माहौल की ज़रूरत है क्योंकि वह एक ज़िन्दा इन्सानी दीन है वह कोई अक़ली और नज़रियाती फ़ल्सफ़ा नहीं जो सिर्फ़ दिमाग़ के किसी ख़ाने में या किसी कुतुबख़ाने के किसी कोने में महफ़ूज़ हो। वह एक साथ अक़ीदा व अमल, सीरत व इख़लाक़ जज़्बात व एहसासात के झुरमुट का नाम है। वह इन्सान को नये सांचे में ढालता और जिन्दगी को नये रंग में रंगता है। इसलिए अल्लाह तआला इस्लाम को "सिबग़तुल्लाह" के नाम से याद

1. Islam or True Christianty—p. 128.

फ़रमाता है "सिबग़त" एक रंग और नुमाया छाप को कहते हैं। इस्लाम दूसरे मज़ाहिब के मुक़ाबले में ज़्यादा हस्सास है[1]। इसके अपने ख़ास "हुदूद" हैं जिन से कोई मुसलमान हट नहीं हकता। किसी दूसरे मज़हब में "इरतेदाद"[2] का वह साफ़ मफ़हूम नहीं पाया जाता जो इस्लामी शरीअत में है।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हयात तय्यबा, इरशादात व हिदायात आप का उसवये मुबारक और आप की सुन्नत दीन के लिए वह फ़िज़ा और माहौल तैयार करते हैं जिसमें दीन का पौदा हराभरा और फलता फूलता है, क्योंकि दीन ज़िन्दगी के तमाम शरायत व सिफ़ात का मजमूआ है। इसलिए वह पैग़म्बर के जज़बात व एहसासात, उनकी ज़िन्दगी के वाक़यात और अमली मिसालों के बिना ज़िन्दा नही रह सकता। दीन एक मिसाली और मेआरी माहौल की नज़ीर[3] के बग़ैर ज़िन्दा व शादाब नहीं रह सकता, और यह माहौल हदीस नबवी के ज़रिये महफ़ूज़ है। इसलिए अल्लाह ने क़ुरआन की हिफ़ाज़त के साथ हदीस नबवी की भी हिफ़ाज़त फ़रमाई। इसी की बदौलत हयात तय्यबा की फ़ैज़ रसानी अभी तक बाक़ी है। इसी की मदद से उल्माये उम्मत "मारूफ़" व "मुन्कर" "सुन्नत" व "बिदअत" और "इस्लाम" व "जाहिलियत" के बीच हर ज़माने में फ़र्क़ करने के क़ाबिल हुए। उन के लिए यह एक बैरोमीटर की तरह उन की रहनुमाई करती रही। सुन्नत व हदीस के यह मजमुए हमेशा इस्लाह व तजदीद और सही इस्लामी फ़िक्र का सरचश्मा रहे हैं। इन्हीं की मदद से इस्लाह का बीड़ा उठाने वालों ने हमेशा शिर्क व बिदअत और जाहिलियत के रसूम को मिटाया और उसकी रद्द की। और तारीख़ शाहिद है कि जब भी हदीस व सुन्नत की किताबों से इल्मी हल्कों के तअल्लुक़ और वाक़फ़ियत में कमी आई और दूसरे उलूम में उनका इन्हमाक[4] बढ़ा,

---

1. सूक्ष्मग्राही 2. दीन से फिर जाना 3. उदाहरण 4. रुचि

मुस्लिम सोसाइटी बासलाहियत लोगों की मौजूदगी में नई नई बिदआत, जाहिली रस्में और ग़ैर मज़ाहिब के असरात का शिकार हो गई और कभी कभी यह अन्देशा पैदा होने लगा कि वह असभ्य समाज का दूसरा इडीशन न बन जाय।

यह हैं दीन इस्लाम और उसके मेज़ाज की ख़ास ख़ास बातें जो उसे दूसरे मज़ाहिब और फ़ल्सफ़ों से मुम्ताज़ करती हैं। एक मुसलमान को इनसे वाक़िफ़ भी होना चाहिए और इनके बारे में उसके अन्दर ग़ैरत व हमैयत भी पाई जानी चाहिए। इसी की मदद से हम हर दौर में हक़ व बातिल की लड़ाई में सही रास्ते पर क़ायम भी रह सकते हैं और दीन की ख़िदमत व हिफ़ाज़त की सआदत भी हासिल कर सकते हैं।

2

अहले सुन्नत वलजमाअत के अक़ायद, सही अक़ायद का हक़ीक़ी सरचश्मा।

नबियों के ज़रिये जो उलूम इन्सानों तक पहुँचे है उनमें सब से आला, अहम और ज़रूरी इल्म खुदा की ज़ात व सिफ़ात का इल्म है। इस इल्म के मरकज़ सिर्फ अंबियाक्राम हैं क्योंकि इस इल्म के वसायल और इस की इब्तेदायी मालूमात आम इन्सान की पहुँच से बाहर हैं। यहाँ क़यास की कोई गुँजाइश नहीं। खुदा का कोई शबीह व नज़ीर नहीं और वह हर तरह के इन्सानी ख्याल व मुशाहदा और एहसास से परे हैं। यहाँ अक़ल व ज़ेहानत भी कुछ मदद नहीं कर सकती क्योंकि यह वह मैदान नहीं जहाँ अक़ल के घोड़े दौड़ाये जायें।

यह इल्म इसलिए सबसे अफ़ज़ल ठहराया गया कि इसी पर इन्सानों की सआदत और फ़लाह मौक़ूफ़ है और यही अक़ायद व इख़लाक़ की बुनियाद है। इसके जरिये इन्सान अपनी हक़ीकत से वाक़िफ होता, कायनात की पहेली बुझाता और जिन्दगी का राज़ मालूम करता है। इसी लिए हर क़ौम व नस्ल और हर दौर में इस इल्म को सबसे बलन्द दर्जा दिया गया है। और हर संजीदा इन्सान ने इस इल्म से गहरी दिलचस्पी रखी है। इस इल्म से नावाक़फ़ियत ऐसी महरूमी का सबब है जिस के बाद कोई महरुमी नहीं।

इस सिलसिले में पुराने जमाने में आम तौर पर दो तब्के रहे हैं:–

एक तब्का[1] वह है जिसने इस इल्म को पाने के लिऐ खुदा के नबियों पर भरोसा किया और उनका दामन थामा। नबियों पर अल्लाह ने अपनी सही मारफ़त अता की और अपनी ज़ात व सिफ़ात की वाक़फ़ियत के लिए उन्हें अपने और अपनी मखलूक़ के दरमियान वास्ता बनाया और उन्हें यक़ीन व "नूर" की वह दौलत अता की जिससे ज्यादा ख्याल भी नहीं किया जा सकता :–

तर्जुमा : "और इस तरह हम इब्राहीम को आसमान और ज़मीन की बादशाहत के जलवे दिखाते थे ताकि वह खूब यक़ीन करने वालों में हो जायें।" (सूर : इनाम-75)

हज़रत इब्राहीम अ० अपनी क़ौम को जब वह उन से खुदा की ज़ात व सिफ़ात के बारे में टेढ़े मेढ़े सवाल कर रही थी, जवाब देते हैं :–

तर्जुमा : "क्या तुम मुझसे अल्लाह के बारे में कटहुज्जती करते हो हालांकि उसने मुझे हिदायत दी है। (सूर : इनाम-80)"

इस गिरोह के लोगों ने नबियों का दामन थाम कर उनके अता किये हुए अक़ायद व हक़ायक़ की रौशनी में अपने ग़ौर व फ़िक्र का सफ़र शुरू किया और इसकी मदद से अमल सालेह, तज़किये नफ्स, और तहज़ीब इखलाक़ का काम सही तौर पर अंजाम दिया। उन्होंने अक्ल से काम लेना छोड़ा नहीं सिर्फ़ यह किया कि उसको सही रास्ते पर डाल कर उससे वह ख़िदमत ली जो उसके करने का काम और उसका असली फ़ायदा था। इससे उनके ईमान व यक़ीन को ताक़त हासिल हुई :–

तर्जुमा :– "और इससे उनके ईमान व इताअत में इज़ाफ़ा व तरक्की ही हुई।" (सूर : अहज़ाब-22)

दूसरा गिरोह वह है जिसने अपनी ज़ेहानत और इल्म पर पूरा पूरा भरोसा किया, अक़्ल की लगाम आज़ाद छोड़ दी और

1. समुदाय

क़यास के घोड़े दौड़ाये और अल्लाह् की ज़ात व सिफ़ात का तजज़िया[1] इस तरह् शुरू किया जिस तरह् किसी साइंस की तजरबागाह्[2] में किया जाता है। और अल्लाह के बारे में "वह् ऐसा है" "वह् ऐसा नहीं है" के बेधड़क फ़ैसले करने शुरू कर दिये। इनके यहाँ "वह् ऐसा है" के मुक़ाबले में "वह् ऐसा नहीं है" की भरमार है, और यह् बात सच है कि जब इन्सान यक़ीन व रोशनी से मह्रूम[3] हो, तो उसके लिए 'नहीं' 'हाँ' से अधिक सरल होती है। इसी लिए यूनानी फ़लसफ़ये इलाहियात में नतायज, बह्स व तह्क़ीक़ अकसर मनफ़ी[4] हैं। कोई दीन, कोई तहज़ीब कोई निज़ामे ह्यात "नफ़ी" पर क़ायम नहीं होता। यह् अंबियाक्राम की शान नहीं। वह् "मावराये हिस्स व अक़ल" हक़ायक के बारे में "दीदये बीना और गोश शुनूवा" रखते हैं।[5]

इसी लिए यूनान का इलाहियाती फ़ल्सफ़ा मुतज़ाद ख्यालात[6] व नज़रियात का एक जंगल है जिसमें आदमी गुम हो जाये। यह एक ऐसी भूल भुलैया है जिस में दाखिल होने के बाद निकलने का रास्ता नहीं मिलता। इस गिरोह् में सब से आगे वह् यूनानी फ़िलास्फ़र्स हैं जो पुराने ज़माने से अपनी ज़ेहानत, फ़ल्सफ़े में नये नये नुक्ते निकालने तथा इल्म व फ़न के मैदान में अपना एक मक़ाम रखने के लिए मशहूर रहे हैं। मगर चूंकि इल्मे इलाहियात में इनमें से किसी चीज़ का दख़ल नहीं है इसलिए उनकी सारी कोशिशें बेकार गईं। और वह् इस अथाह् समुद्र में इस तरह ग़ोता लगाते रहे जिसकी तरजुमानी[7]

---

1. विश्लेषण 2. प्रयोगशाला 3. वंचित 4. नकारात्मक
5. "मावराये अक़्ल" और "मुखालिफ़ अक़्ल" में बड़ा फ़र्क़ है, जो चीज़ "मावराये अक़्ल है, बिल्कुल ज़रूरी नहीं कि मुखालिफ़े अक़्ल भी हो। मावराये अक़्ल का मतलब सिर्फ़ यह् है कि वह् अक़्ल के हुदूद से बाहर है।
6. विपरीत विचारधारा 7. व्याख्या

कुरआन की यह आयत करती है :–

तर्जमा : "गहरे समन्दर की अन्धेरी, और समन्दर को लहरों (की चादर) ने ढाँक रखा हो। एक लहर के ऊपर दूसरी लहर, और लहरों के ऊपर बादल छाया हुआ, गोया तारीकियाँ ही तारीकियाँ हों, एक तारीकी पर दूसरी तारीकी, आदमी अगर ख़ुद अपना हाथ निकाले तो उमीद नहीं कि सुझाई दे, और जिस किसी के लिए अल्लाह ही ने उजाला नहीं किया तो फिर उस के लिए रौशनी में क्या हिस्सा हो सकता है।"

(सूर : नूर–40)

उनके पास न कोई हिदायत थी न रौशनी। न इल्म व इरफ़ान की कोई किरन थी न बुनियादी मालूमात का कोई सहारा था जिसके ज़रिये ("मजहूल") तक पहुँचना मुम्किन होता है[1]। उनके फ़लस्फ़े और शेर व शायरी में शिर्क व बुतपरस्ती रची बसी थी जो उनको नस्ल दर नस्ल वेरासत[2] में मिलती चली आ रही थी। इसका नतीजा था कि उनका इलाहियाती फ़ल्सफ़ा, ग्रीक माइथालोजी और फ़ल्सफ़ा का एक मिक्सचर बन कर रह गया अगरचे उन्होंने अपने नज़रियात[3] के बड़े ऊँचे और शानदार नाम रख रखे थे।

हिन्दुस्तान के अलावा जो अपने ख़ास फ़ल्सफ़ा और देवमाला में मशहूर रहा है, आम तौर पर मुख्तलिफ़ क़ौमों के फ़िलास्फ़र्स ने उन्हीं की नक़ल की और हिसाब व इल्मे हिन्दसा में उनकी महारत व फ़नकारी का लोहा मान कर उन पर आँख बन्द करके ईमान ले आये। हमेशा से इन्सानों की यह कमज़ोरी रही है कि जब वह किसी एक

---

1. दलील से किसी चीज़ को साबित करने के लिए कुछ इब्तदायी मालूमात (प्रारंभिक जानकारी), और महसूसात की जरूरत होती है जिसकी मदद से "मजहूल" से "मालूम" तक पहुँचा जाता है।
2. उत्तराधिकार 3. दृष्टिकोण

मैदान में किसी फ़र्द या जमाअत का लोहा मान लेते हैं तो दूसरे मैदानों में भी उसी की इमामत के क़ायल हो जाते हैं। और इसमें वह किसी बहस या तहक़ीक़ की जरुरत महसूस नहीं करता और जो ऐसा करे वह उनके नज़दीक नादान और हठधर्मी है।

जहाँ तक उन क़ौमों का तअल्लुक़ है जो पुराने ज़माने से अपने दीनी सरमाया को खो बैठीं और हिदायत व नूर से अकसर महरूम हो गई हैं, उनका यह तर्जे अमल कोई तअज्जुब की बात नहीं। तअज्जुब तो उन "मुसलमान दानिशवरों[1] " पर है जिन को अल्लाह ने नबूवते मोहम्मदी और किताबे इलाही की दौलत से नेवाज़ा है। वह किताब जिसके बारे में अल्लाह तआला का इरशाद है :—

तर्जुमा : "उस पर ग़लती का दख़्ल न आगे से हो सकता है न पीछे से (यह) दाना और ख़ूबियों वाले (ख़ुदा) की उतारी हुई हैं।" (सूर : सज्दा-42)

पिछली सदियों में इस्लामी दुनिया के बहुत से इल्मी व दरसी हल्क़ों ने इस फ़ल्सफ़ा को ज्यों का त्यों तसलीम कर लिया और उस पर संजीदा बहसें शुरू कर दीं। और इनमें से बहुतों ने कुरआनी आयात को इसका ताबे बनाया और इनकी बेमानी तावीलें[2] की और उनकी इस तरह तफ़सीर की कि वह यूनानी इलाहियाती फ़ल्सफ़ा से मेल खा जायें। ऐसा करने में उनसे अक्सर ग़ल्तियाँ हुईं क्योंकि वह ख़ुदा को इन्सान और अपने महदूद तजरबात[3] पर क़यास कर रहे थे। वह भूल गये कि यह सिफ़ाते इलाही हैं जिन का वजूद इन "लवाज़िम" (जिस्मियत) का मुहताज और पाबन्द नहीं है।

मुसलमानों को एक मुतकल्लिम (बात करने वाला) की ज़रूरत थी जो किताब व सुन्नत और सलफ़ के अक़ायद पर अपने ग़ौर व फ़िक्र की बुनियाद रखे, और फ़ल्सफ़ा व इल्मे कलाम को बहस के क़ाबिल समझे जिसकी कुछ बातें मानी जा सकती हैं। और कुछ नहीं भी

1. बुद्धजीवियों 2. अर्थहीन व्याख्याएँ 3. अनुभावों

मानी जा सकती हैं। यूनानी फ़लसफ़ा का सिर्फ़ वह हिस्सा क़बूल करे जो सही दलील से साबित हो। वह अरस्तू वग़ैरा को खुदाये अलीम व ख़बीर का दर्जा न दे न उन्हें ख़ता से महफ़ूज़ अंबियाये मासूमीन समझे। उन्हें कुछ ऐसे बड़े आलिमों की जरूरत थी जो फ़ल्सफ़ा पर पूरी दस्तरस रखते हों और यूनानी फ़िलास्फ़रों से आँखें मिला कर बातें कर सकें। उनका कुरआन पर पूरा पूरा ईमान हो और जो फ़लस्फ़ा और उसके भारी भरकम इस्तेलाहात की गुलामी से हर तरह आज़ाद हों। वह इस हदीस की तरजुमानी करते हों :—

तर्जुमा : "वह ग़ाली लोगों की तहरीफ़ बातिल परस्तों के ग़लत इंतेसाब और जाहिलों की तावीलात से दीन की हिफ़ाज़त करते हैं।"

ऐसे उलमाये इस्लाम से कोई दौर ख़ाली नहीं रहा। इन नुमॉया शख़सियतों में आठवीं सदी हिज्री के आलिमे जलील शेखुलइस्लाम हाफ़िज़ इब्न तैमिया हर्रानी र० (मुतवफ़्फ़ी 728 हिज्री) हैं। वह किताब व सुन्नत पर पूरा पूरा ईमान रखते थे। उन्होंने यूनानी फ़लस्फ़ा का गहरा मुतालेआ किया था वह फ़लस्फ़ा के बेबाक नाक़िद थे। उनको खुदा ने एक ऐसा शागिर्द अता फ़रमाया जो उनके नक्शे क़दम पर चलते रहे। यह थे अल्लामा इब्न क़ैयम जोज़िया (मुतवफ़्फ़ी 791 हिज्री)।

इनके बाद अगर किसी का नाम पूरे एतमाद[1] से लिया जा सकता है तो वह' 'हुज्जतुल्ला हिलबालेग़ा'' के मुसन्निफ़[2] हकीमुल इस्लाम हज़रत शाह वलीउल्ला देहलवी र० (मुतवफ़्फ़ी 1176 हि०) हैं। उन्होंने हिन्दुस्तान में इल्मेहदीस को रिवाज दिया और इब्न तैमिया और मुहद्दसीन का उस वक्त बचाव किया जब उनका नाम लेना मुश्किल था। और इस्लामी शरीअत पर ऐसी किताबें लिखीं जिनकी नज़ीर आसानी से नहीं मिल सकती। उनकी किताब "अलअक़ी-दतुलहसना" में अहले सुन्नत के अक़ायद का वह निचोड़ आ गया है

1. विश्वास 2. लेखक

जिससे हर पढ़े लिखे मुसलमान को वाक़िफ़ होना चाहिए जो उनके अक़ायद को अपना शेआर बनाना चाहता हो। इसलिए इस बाब[1] में इसी को बुनियाद बनाया गया है।

बुनियादी इस्लामी अक़ायद

इस दुनिया का एक बनाने वाला है जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा। उसका होना क़तई और उसका मिटना मुहाल है। वह तमाम सिफ़ात वाला और ऐब से पाक है। वह सब कुछ जानने वाला और सब पर क़ादिर है और तमाम कायनात[2] उसी के इरादे से है। वह हयातवाला, सुनने वाला और देखने वाला है। कोई उस जैसा नहीं है। उसका कोई मददगार नहीं। कोई ऊसका शरीक नहीं। इबादत का सिर्फ़ वही मुस्तहक़ है। वही मरीज़ को शिफ़ा देता, मख़लूक़ को रोज़ी पहूंचाता और उनकी तकलीफ़ों को दूर करता है उसकी शान है :–

तर्जुमा :– "उसकी शान यह है कि जब वह किसी चीज़ का इरादा करता है, तो उससे फ़रमा देता है "होजा" तो वह हो जाती है। (सूर : यासीन 82)

अल्लाह तआला न किसी दूसरे के क़ालिब में उतरता है न किसी से मुत्तहिद होता है। वह न जौहर[3] है, न अर्ज़[4], न जिस्म, वह किसी जगह मुहद्दूद नहीं है। क़यामत के दिन मोमिनों को उसका दीदार होगा। जो वह चाहता है सो होता है, जो नहीं चाहता नहीं होता। वह ग़नी है किसी चीज़ का मुहताज नहीं उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता। उससे पूछा नहीं जा सकता कि वह क्या कर रहा है किसी के

---

1. अध्याय 2. ब्रह्माण्ड
3. वह चीज़ जो अपनी ज़ात से कायम हो।
4. वह चीज़ जो किसी ऐसे महल का मुहताज हो जिस पर वह क़ायम हो सके।

वाजिब करने से कोई चीज उस पर वाजिब नहीं होती। हिम्मत उसकी सिफ़त है। उसके अलावा कोई हाकिम नहीं।

तक़दीर अच्छी हो या बुरी अल्लाह की तरफ़ से हैं।[1] वही वाक़यात को उनके वजूद से पहले वजूद के क़ाबिल बनाता है। उसके फ़रिश्ते बन्दों के आमाल लिखने और मुसीबत से उनकी हिफ़ाज़त करने और भलाई की तरफ़ बुलाने पर मामूर हैं। और खुदा की मख़लूक़ शैतान भी है जो लोगों के लिए बुराई का सबब बनाता है और उसकी मख़लूक़ में जिन्नात भी हैं। कुरआन अल्लाह का कलाम है। उसके अल्फ़ाज़ सब अल्लाह की तरफ़ से हैं। वह मुकम्मल है। तहरीफ़[2] से महफ़ूज़ है। अल्लाह की सिफ़ात में किसी तरह का कतर ब्योंत करना जायज़ नहीं। मौत बरहक़ है। जिन्दगी का लेखा जोखा बरहक़ है। पुलसिरात कुरआन व सुन्नत से साबित है। जन्नत और दोज़ख़ बरहक़ है। वह पैदा की जा चुकी है।

कबायर के मुरतकिब मुसलमान के हक़ में अल्लाह के रसूल स० की सिफ़ारिश क़बूल की जायेगी वह हमेशा दोज़ख़ में नहीं रहेंगे। गुनहगार के लिए क़ब्र का अज़ाब और मोमिन के लिए क़ब्र का आराम हक़ है। मुनकिर व नकीर का सवाल करना बरहक़ है। मुख़लूक़ की तरफ़ नबियों का आना बरहक़ है। और उनकी ज़बानी और उनके वास्ते से खुदा का अपने बन्दों को अम्र व नहीं का मुकल्लफ़ क़रार देना बरहक़ है। नबियों की कुछ ऐसी सिफ़ात होती हैं जो आम इन्सानों से उन्हें अलग करती हैं और जो दूसरे इन्सानों में नहीं पायी जातीं और वह उनकी नबूवत की दलील होती हैं। जैसे "मोजज़ात"

1. हदीस में आता है कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया "उस वक्त तक कोई बन्दा मोमिन नहीं हो सकता, जब तक वह तक़दीर पर ईमान न लाये, और जब तक यह जान न ले कि जो कुछ उसको पहुंचा है, वह उससे बच कर निकल नहीं सकता था, और जिस से बचकर निकल गया वह उस तक पहुंच नहीं सकता था।" (तिरमिज़ी शरीफ़)
2. परिवर्तन

सलामती-ए-फ़ितरत और मिसाली इख़्लाक़" नबियों को जानबूझ कर गुनाह करने से महफ़ूज़ कर दिया गया है।

मोहम्मद सल्लाहु अलैहि व सल्लम आख़िरी नबी हैं। आप के बाद कोई नबी नहीं। आप की दावत सारी दुनिया तमाम इन्सानों और जिन्नात के लिए हैं"। इस बिना पर वह सब नबियों में अफ़ज़ल हैं। आप की रिसालत पर ईमान लाना ज़रूरी है। इस्लाम ही सच्चा दीन है। इसके अलावा कोई दीन ख़ुदा के यहाँ मक़बूल और आख़िरत में नजात का ज़रिया नहीं।[1]

मेराज बरहक़ है। आप को बेदारी की हालत में रात में बैतुलमक़दिस और वहाँ से जहाँ ख़ुदा ने चाहा ले जाया गया।

औलिया-ए-अल्लाह की करामात बरहक़ है। जिस को ख़ुदा चाहता है इन से नेवाज़ता है। तकलीफ़ शरयी किसी से साक़ित नहीं होती।[2] चाहे वह विलायत, मुजाहिदा और जेहाद के कितने ही बलन्द मक़ाम पर फ़ायज़ हो वह फ़रायज़ का हमेशा मुकल्लफ़ रहेगा। कोई हराम चीज़ या गुनाह जब तक आदमी के होश व हवास दुरुस्त हैं उसके लिए जायज़ न होगी। नबूवत विलायत से कतई अफ़ज़ल है। कोई वली चाहे कितना ही बड़ा हो किसी सहाबी के दर्जा को नहीं पहुँच सकता। सहाबाक्राम की औलिया-ए-आज़म पर फ़ज़ीलत, सवाब की कसरत और ख़ुदा के यहाँ मक़बूलियत की अज़मत पर है न कि अमल की कसरत पर।[2]

नबियों के बाद बेहतरीन मख़लूक़ सहाबाक्राम हैं। अशर-ए-मुबश्शेरा के लिए जन्नत और ख़ैर की हम गवाही देते हैं। अहले बैत और अज़वाज मुतहरात की अज़मत व तौक़ीर[3] करते हैं। उनसे मुहब्बत

1. इसमें "वहदते अदियान" (सब दीन हक़ हैं और सब रास्ते ख़ुदा तक पहुँचाने वाले हैं) के अक़ीदा की नफ़ी व तरदीद है जो आजकल का एक फ़ितना और हिन्दुस्तान का क़दीम तर्ज़े फ़िक्र और दावत है।
2. अवामिर व नवाही और शरयी फ़रायज व वाजिबात का मुकल्लफ़ होना और इनके नतीजे में जज़ा व सज़ा का मुस्तहक़ होना
3. सम्मान

रखते हैं इसी तरह बदर वालों और बैयते रिज़वान में शरीक़ होने वालों के बलन्द मक़ाम के मोतरिफ़ हैं। अहले सुन्नत तमाम सहाबक्राम की अदालत के क़ायल हैं।

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ीअल्लाहु अन्हु अल्लाह के रसूल स० के बाद इमाम व ख़लीफ़ये बरहक़ थे। फिर हज़रत उमर रज़ीअल्लाहु अन्हु, फिर हज़रत उस्मान रज़ी अल्लाहु अन्हु, फिर हज़रत अली रज़ी अल्लाहु अन्हु। हज़रत अबूबक्र व हज़रत उमर इस उम्मत में एक के बाद दूसरे सब से अफ़ज़ल हैं। हम सहाबा क्राम का सिर्फ़ जिक्रे ख़ैर ही करते हैं। वह हमारे दीनी क़ायद हैं उनको बुरा भला कहना हराम है। और उनकी ताज़ीम वाजिब है।

हम "अहले क़िबला"[1] में से किसी को काफ़िर क़रार नहीं देते। हाँ मगर जो अल्लाह के इस कायनात के ख़ालिक और मालिक होने का इन्कार करे, या ग़ैर अल्लाह की इबादत करे या नबी और आख़िरत का इन्कार करे या ज़रूरियात दीन में से किसी चीज़ का इन्कार करे वह काफ़र है, गुनाहों को जायज़ समझना कुफ़ है। शरीअत का मज़ाक़ उड़ाना कुफ़ हैं। अमर बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकिर वाजिब है। हम तमाम नबियों और उन पर नाज़िल होने वाली किताबों पर ईमान रखते हैं और नबियों में बाहम तफ़रीक़ नहीं करते। ईमान ज़बान से इक़रार व दिल की तस्दीक़ का नाम है। क़यामत के अलामात पर जैसा कि हदीस में बयान किया गया है, हम यक़ीन रखते हैं। मेल जोल और एकता को हम हक़ और सवाब की चीज़ समझते हैं और फूट व तफ़रीक़ को गुमराही और अज़ाब का सबब समझते हैं।

---

1. हदीस शरीफ़ में आता है कि आपने फ़रमाया-"मेरे असहाब को बुरा भला न कहो (तुम में से कोई शख़्स ओहद पहाड़ के बराबर भी सोना ख़र्च कर दे तो वह उनमें से किसी के "मुद्द" (क़रीब एक किलो के पुराना पैमाना) और आधे मुद्द के बराबर भी न होगा।
2. वह लोग जो ज़रूरियाते दीन, मानी वह बातें जो किताब व सुन्नत और इज्मा से साबित हैं, पर ईमान रखते हैं।

तौहीद, दीन खालिस और शिर्क

इबादत की बुनियाद अक़ायद और ईमान के सही होने पर है। जिस के अक़ायद में ख़लल ओर ईमान में बिगाड़ हो उसकी न कोई इबादत मक़बूल न उसका कोई अमल सही माना जायेगा। और जिसका अक़ीदा दुरुस्त और ईमान सही हो उसका थोड़ा अमल बहुत है। इसलिए हर शख्स को कोशिश करना चाहिए कि उसका ईमान व अक़ीदा सही हो।

साफ़ ज़ेहन गहराई और हक़ की तलाश के जज्बा के साथ कुरआन के मुतालेआ से यह बात रोशन हो चुकी है कि अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने के कुफ्फ़ार अपने झूठे ख़ुदाओं को अल्लाह का बिल्कुल हमसर और हम मर्तबा क़रार नहीं देते थे बल्कि वह यह तस्लीम करते थे कि वह मख़लूक़ और बन्दे हैं। उनका कभी यह अक़ीदा नहीं था कि उनके माबूद ख़ुदा से कुदरत व ताक़त में किसी तरह कम नहीं और वह ख़ुदा के साथ एक ही पलड़े में हैं। उनका शिर्क सिर्फ़ यह था कि वह अपने झूठे ख़ुदाओं को पुकारते, उनकी दुहाई देते, उन पर नज़रें चढ़ाते और उनके नामों पर क़ुरबानियाँ करते। और उनको अल्लाह के यहाँ सिफ़ारिशी, मुशकिल कुशा और कारसाज़ समझते थे। इसलिए हर वह शख्स जो किसी के साथ वही मामला करे जो कुफ्फ़ार अपने झूठे ख़ुदाओं के साथ करते थे तो गो कि वह इसका इक़रार करता हो कि वह एक मख़लूक़ और ख़ुदा का बन्दा है उसमें और जाहिलियत के ज़माने के बड़े से बड़े बुत परस्त में बहैसियत मुशरिक होने के कोई फ़र्क़ न होगा।

हज़रत शाह वलीउल्ला साहब फ़रमाते हैं :–

"जानना चाहिए कि तौहीद के चार दर्जात हैं :–

1. सिर्फ़ ख़ुदा को वाजिबुलवजूद क़रार देना।
2. आसमान व ज़मीन और तमाम अशिया का ख़ालिक़ सिर्फ़ ख़ुदा को समझना।

यह दो दर्जे वह हैं जिन से आसमानी किताबों ने बहस की जरूरत नही समझी। और न अरब के मुशरिकीन और यहूद व नसारा को इनके बारे में इख्तेलाफ़ व इनकार था बल्कि कुरआन इसकी सराहत करता है कि यह दोनों मर्तबे उनके नज़दीक मुसल्लमात में से हैं।

3. आसमान व जमीन और जो कुछ इसके दरमियान है, उसके इन्तेजाम को सिर्फ़ खुदा के साथ ख़ास समझना।

4. चौथा दर्जा यह है कि उसके अलावा किसी को इबादत का मुस्तहक़ न समझना।

"यह दोनो दर्जे आपस में एक दूसरे से गहरा रब्त रखते हैं। इन्हीं दोनों से कुरआन ने बहस की है और काफ़िरों के शकूक को भरपूर जवाब दिया है।"

इससे यह मालूम हुआ कि शिर्क के मानी सिर्फ़ यह नहीं है कि किसी को खुदा का हमसर क़रार दिया जाये बल्कि शिर्क की हक़ीक़त यह है कि आदमी किसी के साथ वह काम या वह मामला करे जो खुदा ने अपनी ज़ात के साथ ख़ास फ़रमाया है और जिसकी बन्दगी का शेआर बनाया है जैसे किसी के सामने सज्दा करना, किसी के नाम पर क़ुरबानी करना या नज़रें मानना, मुसीबत में किसी से मदद माँगना और यह समझना कि वह हर जगह हाजिर व नाज़िर है और उसको कायनात में मुतसर्रिफ़[1] समझना। यह सारी वह चीजें हैं जिन से शिर्क लाज़िम आता है। और इन्सान इनसे मुशरिक हो जाता है। भले ही उसका यह अक़ीदा क्यों न हो कि यह इन्सान, फ़रिश्ता या जिन्न जिसको वह सज्दा कर रहा है, नजरें मान रहा है और जिससे मदद माँग रहा है, अल्लाह तआला से बहुत कम मर्तबा है। और चाहे यह मानता हो कि अल्लाह ही ख़ालिक़ है और यह उसका बन्दा है। इस मामले में अंबिया, औलिया, जिन्न और शयातीन, भूत परेत सब बराबर

1. क़ाबिज

हैं। इन में से किसी के साथ भी जो यह मामला करेगा वह मुशरिक करार दिया जायेगा। यही बजह है कि अल्लाह तआला उन यहूद व नसारा पर जिन्होंने अपने राहिबों पादरियों और पुरोहितों के बारे में इस तरह का मामला किया, ग़ज़ब व नाराज़गी का इज़हार किया इरशाद होता है :—

तर्जुमा : "उन्होंने अपने उल्मा और मशायख़ और मसीह इब्न मरियम को अल्लाह के सिवा ख़ुदा बना लिया, हालाँकि उनको यह हुक्म दिया गया था कि एक अल्लाह के सिवाय किसी की इबादत न करें। उसके सिवा कोई माबूद नहीं, और वह इन लोगों के शरीक मुक़र्रर करने से पाक है।" (सूर: तौबा—39)

शिर्क के मज़ाहिर व आमाल और जाहिली रस्में

इस उसूली बात के बाद ज़रूरत है कि उन जाहिली रस्मों की निशानदेही कर दी जाये जो सही इस्लामी तालीमात से दूर और महरूम माहौल में रिवाज पा गयीं।

सब कुछ का इल्म और हरचीज़ पर पूरी क़ुदरत रखना अल्लाह की ख़ुसूसियात में से है। और इबादत को अमल जैसे-सज्दा या रुकू का किसी के सामने करना, किसी के नाम पर और उसकी ख़ुशनूदी के लिए, रोज़ा रखना, दूर दूर से एहतमाम के साथ किसी जगह के लिए तूलतवील सफ़र करके जाना और उसके साथ वह मामला करना जो बैतुल्लाह को ज़ेबा है, और वहाँ क़ुरबानी के जानवर ले जाना, नज़रें और मिन्नतें मानना शिर्क के काम और शिर्क के मज़ाहिर हैं। ताज़ीम के वह तरीक़े और अलामतें जो बन्दगी की मज़हर हों सिर्फ़ ख़ुदा के साथ ख़ास हैं। इल्मग़ैब[1] सिर्फ़ ख़ुदा को है और इन्सानी क़ुदरत से बाहर है। दिलों के भेद और नियतों का इल्म हर वक्त किसी के

1. परलौकिक ज्ञान।

लिए मुमकिन नहीं। अल्लाह् तआला को सिफ़ारिशक़ बूल करने और बाअसर व बाइक्तेदार लोगों को राज़ी व ख़ुश करने में दुनिया के बादशाहों पर क़यास नहीं करना चाहिए। ऐसी ह्र छोटी और बड़ी बात में ख़ुदा ही की तरफ़ ध्यान देना चाहिए। दुनिया के बादशाहों की तरह् कायनात के इन्तेज़ाम में दरबारियों से मदद लेना ख़ुदा के शयानेशान नहीं है। किसी तरह् का सज्दा सिवाय ख़ुदा के किसी के लिए जायज़ नहीं। हज के मनासिक, ग़ायत दर्जे की ताज़ीम के मज़ाहिर और मुहब्बत व फनाइयत की तमाम बातें बैतुल्लाह् के साथ ख़ास हैं। सालहीन और औलिया के साथ जानवरों की तसख़ीस, उनका एहतराम करना उनकी नजरें चढ़ाना ओर उनकी कुरबानी के ज़रिये उनका कुर्ब हासिल करना हराम है। आजज़ी व इन्केसारी के साथ ग़ायत दर्जे क़ी ताज़ीम के जज्बा से कुरबानी करना सिर्फ़ अल्लाह् का हक़ है। कायनात में आसमानी नक्षत्रों की तासीर पर अक़ीदा रखना शिर्क है। जादूगरों, नजूमियों और ज्योतिषियों पर एतमाद करना कुफ़्र है।

नाम रखने में भी मुसलमानों को तौहीद के शेआर का इज़्हार करना चाहिए। ग़लतफ़हमी पैदा करने वाले और जिस से मुशरिकाना एतेक़ाद का इज़्हार होता हो ऐसे अल्फ़ाज से बचना चाहिए ख़ुदा के अलावा किसी की क़सम खाना शिर्क है। ग़ैर अल्लाह् की नजरें मानना हराम हैं। इसी तरह् किसी ऐसे मक़ाम पर कुरबानी करना जहाँ कोई बुत था या जाहिलियत का कोई जश्न मनाया जाता था नाजायज़ है। रसूलुल्लाह् सल्लाहु अलैहि व सल्लम की ताज़ीम में इफ़रात व तफ़रीत और नसारा के अपने नबी के बारे मेंगुलू व मुबालिग़ा की तक़लीद और औलिया व सालहीन की तस्वीरों और शबीहों की ताजीम करने से परहेज़ करना चाहिए।

नबूवत का बुनियादी मक़सद

अल्लाह् के बारे में सही अक़ीदा और सिर्फ़ एक अल्लाह् की

बन्दगी की दावत हर ज़माने में नबियों की पहली दावत और उनके इस दुनिया में आने का पहला और अहमतरीन मक़सद रहा है। हमेशा उनकी तालीम यही रही है कि अल्लाह ही नफ़ा व नुकसान पहुँचाने की ताक़त रखता है और सिर्फ़ वही इबादत और कुरबानी का मुस्तहक़ है। उन्होंने हमेशा मूर्तियों, ज़िन्दा व मुर्दा शख्सियतों की पूजा का डट कर विरोध किया। इन हस्तियों के बारे में जाहिल लोगों का अक़ीदा था कि अल्लाह ने इन्हें ऐसी इज्जत व अज़मत दी है और ऐसा जामा पहनाया है कि इनकी पूजा की जाये। वह यह भी समझते थे कि अल्लाह ने इन को ख़ास ख़ास कामों में तसर्रूफ़ (ख़र्च करना) का अख्तेयार भी दे रखा है और इन्सानों के बारे में इनकी सिफ़ारिशों को कबूल फ़रमाता है जिस तरह बादशाह हर इलाके के लिए एक हाकिम भेज देता है। और कुछ अहम बातों के अलावा इलाके के इन्तेजाम की सारी जिम्मेदारी उन्हीं के सर डाल देता है इसलिए उन्हीं के पास जाना और उन्हीं को राज़ी करना मुफ़ीद और ज़रूरी है।

जिस शख्स को कुरआन से कुछ भी तअल्लुक़ है उसको यह बात ज़रूर मालूम होगी कि शिर्क व बुतपरस्ती के ख़िलाफ मोर्चा बन्दी, इससे जंग करना, इसे दुनिया से ख़त्म करने की कोशिश करना और लोगों को इसके चुगंल से हमेशा के लिए नजात दिलाना, नबूवत का बुनियादी मक़सद था :–

कुरआन इनके बारे में कहता है :–

तर्जुमा : "और जो पैग़म्बर हमने तुम से पहले भेजे उन की तरफ यही वही भेजी कि मेरे सिवा कोई माबूद नहीं, तो मेरी इबादत करो।" (सूर : अंबिया–25)

और कभी तफसील के साथ एक एक नबी का नाम लेता है और बताता है कि इसकी दावत की इब्तेदा इसी तौहीद की दावत से हुई थी और पहली बात जो उन्होंने कही वह यही थी-"ऐ मेरी क़ौम के लोगों! ख़ुदा की इबादत करो इसके सिवा तुम्हारा कोई

माबूद नहीं'' (सूर : अलएराफ़–59)

यही बुत परस्ती और शिर्क मुद्दतों से चली आ रही आलमगीर और सख्तजान "जाहिलियत" है जो किसी जमाने के साथ मख्सूस नही। और इन्सान का सब से पुराना मर्ज है जो तारीखे इन्सानो के हर दौर में तमाम तबदीलियों और इन्केलाब के बावजूद उसके पीछे लगा रहता है। अल्लाह की ग़ैरत और उसके ग़जब को भड़काता है। बन्दों की रूहानी व इख़लाक़ी तरक्क़ी की राह का रोड़ा बनता है और उनको इन्सानियत के उँचे दर्जे से गिराकर पस्ती के गढ़े में औंधे मुहं डाल देता है। और इसको रद्द करना क़यामत तक के लिए दीनी दावतों और इस्लाही तहरीकों की बुनियादी बात है।

तर्जुमा : "और यही बात अपनी औलाद में पीछे छोड़ गये ताकि वह (ख़ुदा की तरफ) रूजू करें। (सूर : जख़रफ़-28)

शिर्क जली की अहमियत कम करना जायज़ नहीं

यह हरगिज़ जायज़ नहीं कि नये इस्लाही व दावती तक़ाजों और ज़माने की नई ज़रुरतों के असर से "शिर्क जली की अहमियत को कम कर दिया जाय। या "सियासी इताअत" और इंसानों के बनाये हुए किसी कानून के क़बूल करने को और ग़ैर अल्लाह की इबादत को एक दर्जे में रखा जाये और दोनों पर एक ही हुक्म लगाया जाये। या यह समझा जाये कि शिर्क जाहिलियत क़दीम की बीमारी और ख़राबी और जेहालत की एक भद्दी और भोंडी शक्ल थी जो इंसान ग़ैरतरक्की याफ्ता दौर ही में अख्तेयार कर सकता है। अब उसका दौर गुज़र गया, इँसान बहुत तरक्क़ी कर चुका है। यह दावा वाक़यात के ख़िलाफ़ है। शिर्क जली बल्कि खुली हुई बुतपरस्ती आज भी एलानिया तौर पर मौजूद है और क़ौमों की क़ौमें, पूरे–पूरे मुल्क यहां तक कि बहुत से मुसलमान शिर्क जली में मुब्तेला हैं। और कुरआन का यह एलान आज भी सादिक़ है।

तर्जुमा :– "और उनमें से अक्सरों का हाल यह है कि अल्लाह

पर यक़ीन लाते और उसके साथ शरीक भी ठहराये जाते हैं'' (सूर : यूसुफ़–106)

सिर्फ़ इतना ही नहीं यह अंबियाक्राम की दावत की एक तरह की नाक़दरी है और यह चीज़ ईमान व अक़ीदा को कमज़ोर बनाती है।

बिदअत और उससे होने वाले नुक़सानात

किसी ऐसी चीज को जिस को अल्लाह व रसूल ने दीन में शामिल नहीं किया और उसका हुक्म नहीं दिया, दीन में शामिल कर लेना उसका एक जुज़ बना देना, उसको सवाब और अल्लाह का कुर्ब हासिल करने के लिए करना, और उसकी खुद की बनाई हुई शरायत व आदाब की उसी तरह पाबन्दी करना जिस तरह एक हुक्म शरई की पाबन्दी की जाती है, बिदअत है। बिदअत दरहक़ीक़त दीन इलाही के अन्दर शरीअते इंसानी की तशकील और ''रियासत के अन्दर रियासत'' है। इस ''शरीयत'' के अलग कानून हैं जो कभी–कभी शरीअते इलाही के बराबर और कभी कभी उससे बढ़ जाते हैं। बिदअत इस हक़ीकत को नज़रअन्दाज़ करती है कि शरीअत मुकम्मल हो चुकी। जिस को फ़र्ज व वाजिब बनना था वह फ़र्ज व वाजिब बन चुका। दीन की टक्साल बन्द कर दी गयी, अब जो नया सिक्का यहां का निकला हुआ बताया जायेगा वह जाली होगा। इमाम मालिक फ़रमाते हैं :–

तर्जुमा :– ''जिसने इस्लाम में कोई बिदअत पैदा कर दी, और उसको वह अच्छा समझता है, वह इस बात का एलान करता है कि मोहम्मद सल्ललाहु अलैहि व सल्लम ने पैग़ाम पहुंचाने में ख़यानत की, इस लिए कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि ''मैं ने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया'' पस जो बात अहदे रिसालत में दीन नहीं थी, वह आज भी दीन नहीं हो सकती।''

शरीअत की खुसूसियत यह है कि वह अल्लाह की तरफ़ से

नाज़िल हुई है। उसकी सहूलत और उसका हर एक के लिए हर ज़माने में काबिले अमल होना इसकी ख़ुसूसियत है। क्योंकि जो दीन का शारे है वह इंसान का ख़ालिक़ भी है वह इंसान की ज़रुरतों उसकी फ़ितरत और उसकी ताक़त व कमज़ोरी से वाक़िफ़ है।

तर्जुमा :– "(और भला) क्या वह न जानेगा जिसने पैदा किया और वह बारीक बीन (और) पूरा बाख़बर है।"
(सुर : अल्मुल्क–14)

मगर जब इंसान ख़ुद शारे बन जायेगा तो इसका लेहाज नहीं रख सकता। बिदअत की आमेज़िशों और कभी कभी इज़ाफ़ों के बाद दीन इस क़दर दुशवार और पेचदार हो जाता है कि लोग मजबूर होकर ऐसे मजहब का जुआ अपने कन्धों से उतार देते हैं। और "ख़ुदा ने तुम्हारे लिए दीन में कोई तंगी नहीं रखी" की नेमत छीन ली जाती है।

दीन व शरीअत की एक ख़ुसूसियत इन की आलमगीर एकसानी है। वह हर ज़माना, और हर दौर में एक ही रहते हैं। दुनियाँ के किसी हिस्से का कोई मुसलमान दुनिया के किसी दूसरे हिस्से में चला जाये तो उसको दीन व शरीअत पर अमल करने में न कोई दिक्क़त पेश आयेगी न किसी मक़ामी हिदायतनामा और रहबर की ज़रुरत होगी। इसके बरख़िलाफ बिदअत में एकसानी नहीं पाई जाती, वह हर जगह के मक़ामी साँचा और टक्साल से ढल कर निकलती है वह तारीख़ी या मक़ामी असबाब और इनफ़ेरादी मसालेह व इग़राज़ का नतीजा होती है। इसलिए हरमुल्क बल्कि इससे आगे बढ़कर कभी कभी एक एक सूबा और एक एक शहर और घर घर का दीन मुख़तलिफ हो सकता है।

इन्हीं बातों की बुनियाद पर अल्लाह के रसूल सं० ने अपनी उम्मत को बिदअत से बचने और सुन्नत की हिफ़ाज़त की ताक़ीद फ़रमाई है। आपने फ़रमाया :–

तर्जुमा : "जो हमारे दीन में कोई ऐसी नई बात पैदा करे जो

उसमें दाख़िल नहीं थी तो वह बात मुस्तरद है।

विदअत से हमेशा बचो, इसलिए कि बिदअत गुमराही है, और हर गुमराही जहन्नम में होगी। (मिशकातुल-मसाबीह) और आपने यह हकीमाना पेशगोई भी फ़रमाई :–

तर्जुमा : "जब कुछ लोग दीन में कोई नई बात पैदा करते हैं तो उसके बराबर कोई सुन्नत ज़रूर उठ जाती है। (मसनद इमाम अहमद)

नबी स० के वारिसैन और शरीअत के हामिलीन का बिदअतों के ख़िलाफ़ जेहाद।

सहाबाक्राम, और उनके बाद इस्लाम के इमाम व फ़क़ीह और अपने अपने समय के मुजद्दीन ने हमेशा अपने अपने ज़माने की बिदअत की सख़्ती से मुख़ालिफ़त की और इस्लामी समाज में इनको फैलने से रोकने की जानतोड़ कोशिश की। इन बिदआत से ख़ुश अक़ीदा लोगों के जो ज़ाती फ़ायदे जुड़े हैं उनकी तस्वीर क़ुरआन ने इस तरह खींची है :–

तर्जुमा :– "ऐ ईमान वालो ! अक्सर अहबार व रोहबान लोगों के माल नामशरू तरीक़े से खाते हैं, और अल्लाह की राह से बाज़ रखाते हैं। (सूर : तौब : –34)

इसकी बिना पर उनको सख़्त मुख़ालफ़तों और मुसीबतों का सामना करना पड़ा। लेकिन उन्होंने इसकी परवाह नहीं की और इसको अपने समय का जेहाद समझा। और उनकी कोशिशों से बहुत सी बिदअत का इस तरह ख़ातमा हुआ कि उनका अब सिर्फ़ ज़िक्र रह गया और जो बाक़ी हैं उनके ख़िलाफ़ उल्माये हक्क़ानी अब भी सफ़आरा हैं :–

तर्जुमा : "इन मोमनीन में कुछ लोग ऐसे भी हैं कि उन्होंने जिस बात का अल्लाह से अहेद किया था उसमें सच्चे निकले, फिर कुछ तो उनमें वह हैं, जो अपनी नज़रपूरी कर चुके, और कुछ उनमें मुश्ताक़ हैं, और उन्होने ज़रा हेर फेर नहीं किया" । (सूर : अहज़ाब-23)

3

इबादात

इस्लाम में इबादत का मकाम

अक़ायद के बाद इस्लाम में जिस चीज़ पर बड़ा ज़ोर और जिसकी ताकीद की गई है वह इबादत है। जो इन्सानों की पैदाइश का पहला मक़सद है :—

"तर्जुमा : और हमने जिन्न व इन्स को सिर्फ़ इसलिए पैदा किया कि वह इबादत करें।" (सूर : ज़ारियात-56)

तमाम आसमानी शरीअतों और मज़ाहिब ने अपने अपने समय में इबादात की दावत दी है। अल्लाह के रसूल स० इबादात का बड़ा अहतमाम फ़रमाते थे। इबादात के बारे में बीसों आयतें और अहादीस आई हैं। कुरआन जेहाद व हुकुमत को वसीला और नमाज़ को मक़सद बताता है। इरशाद होता है :—

तर्जुमा : "यह वह लोग हैं कि अगर हम इनको मुल्क में दस्तरस दें तो नमाज़ पढ़े, और ज़कात अदा करें, और नेक काम करने का हुक्म दें और बुरे कामों से मना करें, और सब कामों में अंजाम ख़ुदा ही के अख़्तेयार में है। (सूर : हज-41)

कुरआन पर एक नज़र डालने से मालूम होता है कि अल्लाह से तअल्लुक़ उसकी बन्दगी और इबादात (नमाज़, ज़कात, रोज़ा,

हज) वह चीज़े हैं जिन के बारे में क़यामत में सब से पहले सवाल होगा। एक जगह उन लोगों से सवाल व जवाब के मौक़े पर जो जहन्नम के अज़ाब के मुस्तहक़ हुए इरशाद होता है :–

जुंतमा :– "कि तुम दोज़ख में क्यों पड़े, वह जवाब देंगे कि हम नमाज़ नहीं पढ़ते थे, और न फ़क़ीरों को खाना खिलाते थे, और अहले बातिल के साथ मिलकर (हक़ से) इनकार करते थे, और रोज़े जज़ा को झुठलाते थे, यहाँ तक कि हमें मौत आ गई।" (सूर : मुदस्सिर 42-47)

दूसरी जगह कुफ्फ़ार के बारे में इरशाद होता है :–

तर्जुमा : "तो इस (ना आक़बत अन्देश) ने न तो (खुदा के कलाम की) तस्दीक[1] की, न नमाज़ पढ़ी, बल्कि झुठलाया और मुंह फेर लिया, फ़िर अपने घर वालों के पास अकड़ता हुआ चल दिया।" (सूर : क़यामत-31-33)

इबादात में पहली चीज नमाज़ है। यह दीन का सुतून है। और मुसलमानों को काफ़िरों से अलग करता है। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा :– "और नमाज़ पढ़ते रहो, और मुशरिकों में न होना" (सूर :– रूम-31)

इमाम बुखारी र० लिखाते हैं कि हज़रत जाबिर रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, "बन्दा और कुफ़्र के दरमियान तर्क[2] नमाज़ है।" और तिरमिज़ी शरीफ़ में है, "कुफ़्र और ईमान के दरमियान तर्क नमाज़ ही है।"

नजात की शर्त नमाज़ है। यह ईमान की हिफ़ाजत करती है। और इसको अल्लाह ने हिदायत व तक़्वा की बुनियादी शर्त के तौर पर बयान किया है। नमाज़ हर आज़ाद और ग़ुलाम, अमीर व ग़रीब, बीमार और तन्दुरुस्त, मुसाफ़िर और मुक़ीम पर हमेशा के लिए

1. पुष्टि। 2. छोड़ना।

और हर हाल में फ़र्ज़ हैं। किसी बालिग़ इन्सान को किसी हाल में इससे छूट नहीं है। और इनके औक़ात मुक़र्रर हैं। मैदाने जंग में भी नमाज फ़र्ज़ है और इसे सलवात-ख़ौफ़ कहते हैं। यह एक ऐसा फ़रीज़ा है कि किसी नबी और रसूल से भी साक़ित नहीं होता तो फिर किसी वली और आरिफ़ की क्या बात है। अल्लाह का इरशाद है :

तर्जुमा : "और अपने परवरदिगार की इबादत करते रहिये, यहाँ तक कि आप को अम्र यक़ीन पेश आ जाये।" (सूर : हज्र-99)

नमाज़ मोमिन के हक़ में ऐसी है जैसे मछली के लिए पानी। नमाज़ मोमिन की "जायपनाह" और "जायअमन" है। नमाज़ बेहयाई और बुरी बातों से रोकती है।

नमाज़ कोई ऐसा लोहे का साँचा नहीं है जिसमें सब नमाज़ी एक जैसे हों और हर नमाजी एक सतह पर रहने के लिए मजबूर और उससे आगे बढ़ने से क़ासिर हो। वह दरअस्ल एक बड़ा मैदान है जहाँ नमाजी एक हाल से दूसरे हाल तक और कमाल की उन मंज़िलों तक पहुँचता है जो उसके ख्याल में भी नहीं आ सकते। अल्लाह के कुर्ब और विलायत हासिल करने में नमाज़ को जो दर्जा हासिल है वह पूरे निज़ामे शरीअत में किसी और चीज को नहीं। इसके जरिये इस उम्मत के मजाहिदीन हर नसल और हर दौर में कुर्ब व विलायत के उन दर्जात तक पहुँच गये बड़े बड़े आलिमों का ख्याल भी नहीं पहुँच सकता। नमाज नबूवत की मीरास है जो अपने तमाम आदाब व अहकाम के सात्र बहिफ़ाजत एक नसल से दूसरी नसल और एक अहेद से दूसरे अहेद तक पहुँचती रही।

नमाज़ अल्लाह रसूल स० की महबूब व पसन्दीदा इबादत थी इससे आप को सुकून व तसल्ली हासिल होती थी। आप फ़रमाते थे, "मेरी आंखों की ठन्डक नमाज़ में है।" आप अपने मुअज़्ज़िन हज़रत

बेलाल रज़ी० से फरमाते, "बेलाल नमाज़ खड़ी करो, और हमें इससे आराम पहुँचाओ"। हज़रत हुजैफ़ा रज़ी० से रवायत है कि आप को जब कोई परेशानी की बात पेश आती फ़ौरन नमाज़ के लिए खड़े हो जाते। आप की नमाज़ "एहसान" का मुकम्मल और आला नमूना थी। आप से "एहसान" के मानी पूछे गये तो आपने फ़रमाया :—

तर्जुमा : "अल्लाह तआला की इबादत इस तरह करो जैसे कि तुम उसको देख रहे हो और अगर तुम उस को देख नहीं रहे हो तो वह तुम्हें देख रहा है"।

और यही वह नमाज़ है जो हर मुसलमान से मतलूब है। आपने फ़रमाया, "इसी तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह तुम मुझ को नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो"।

नमाज़ में अल्लाह के रसूल स० का तरीक़ा

तहारत[1] और वज़ू के फ़वायद की तकमील और नमाज़ की तैयारी के लिए अल्लाह के रसूल स० ने मिसवाक को मसनून फ़रमाया, "अगर मुझे उम्मत पर मशक्क़त का ख्याल न होता तो लोगों को हर नमाज़ के वक्त मिसवाक का हुक्म देता"।

अल्लाह के रसूल स० जब नमाज़ के लिए खड़े होते तो तकबीर तहरीमा "अल्लाहुअकबर" कहते और इससे पहले कुछ न कहते, और अल्लाहुअकबर कहने के साथ साथ दोनों हाथ इस तरह कि उनका रूख़ क़िबला की तरफ़ हो और उँगलियाँ कुशादा हों, उठाते, फिर दाहिना हाथ बायें हाथ की हथेली की पुश्त पर रखते। फ़र्ज़ नमाज़ों में यह दुआ पढ़ते :—

तर्जुमा :— "ऐ अल्लाह हम तेरी पाकी और हम्द बयान करते हैं, तेरा नाम मुबारक, और तेरी अज़मत बहुत बलन्द है, और तेरे अलावा कोई माबूद नहीं।"

---

1. पाक व साफ़ होना।

नवाफ़िल और तहज्जुद में मुख़्तलिफ़ दुआयें आई हैं। जैसे :-

तर्जुमा :– "ऐ अल्लाह मुझमें और मेरी ख़ताओं में ऐसी दूरी कर दे जैसी पूरब और पच्छिम में तूने दूरी की है, ऐ अल्लाह मुझे गुनाहों और ख़ताओं से ऐसा साफ़ और पाक कर दे जैसे मैल कुचैल से सफेद कपड़ा साफ़ किया जाता है।"

इसके बाद आप "अऊज़ बिल्लाहे मिनश्शैतानिर्रजीम, बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" पढ़ते। फिर सूर: फातेहा पढ़ते आपकी क़ेरअत साफ और एक एक लफ्ज अलग करके होती। हर आयत पर ठहरते और आखिरी आयत को खींचकर पढ़ते। जब सूर: फातेहा ख़त्म होती तो "आमीन" कहते। आप के दो सकते होते थे, एक तो तकबीर और सूर: फातेहा के बीच और दूसरा सूर: फातेहा के बाद या रूकू से पहले, सूर: फातेहा के बाद कोई दूसरी सूर: पढ़ते, कभी तवील सूर: होती और कभी सफर वगैरा की वजह से मुख्तसर सूर: पढ़ते। अक्सर अवक़ात दरमियानी सूरतें पढ़ते जो न बहुत लम्बी होतीं न बहुत छोटी। फज्र की नमाज में साठ से लेकर सौ आयतों तक मामूल था। इसमें सूर: हुज्रात से सूर: बुरूज तक की मुख़तलिफ सूरतें तिलावत फरमाते। सफर की हालत में फज्र में सूर: "एज़ाजुलजेलत" और "कुल अऊजो बेरब्बिन फलक" और कुल अऊजो बेरब्बिन नास" का पढ़ना भी आप से साबित है। जुमा के दिन फज्र में "अलिफ़ लाम मीम अल-सज्दा" और "सूर: दहर" पूरी पढ़ते। और बड़े मजमें में जैसे ईद और जुमा में सूर: "क़ाफ़" और "एक़्तराबत्तिसाअतु" और ":सब्बेहिस्मारब्बेका" और "हल अताका हदीसुल ग़ासिया" पढ़ने का मामूल था।

ज़ुहर में कभी कभी करअत तवील फ़रमाते। अस्र की नमाज की क़रअत ज़ुहर की नमाज की क़रअत की आधी तवील होती और अगर ज़ुहर मुख्तसर होतीं तो अस्र भी इसी के बराबर होती। मग़रिब की नमाज़ में तवील क़रअत भी फ़रमाई और मुख्तसर भी।

मग़रिब में ज्यादा तर "लमयकुन" से "वन्नास" तक की सूरतों में से क़ेरअत फ़रमाते। इशा की नमाज़ में दरमियानी सूरतें पढ़ा करते थे और इसी को पसन्द फ़रमाते थे। हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ी० ने इशा में जब सूर : बक़र : पढ़ी तो आपने नकीर फ़रमाई, और फ़रमाया कि "ऐ मआज़" क्या तुम लोगों को फ़ितना में मुब्तला करोगे ? !

जुमा में "सूर : जुमा" और "सूर : मुनाफ़ेकून" पूरी पढ़ते या "सूर : सब्बेहिस्मारब्बेका" और "सूर : हलअताका" पढ़ते, जुमा व ईदैन के अलावा किसी नमाज़ के लिए आप कोई सूर : मुक़र्रर नहीं फ़रमाते थे कि जिस के अलावा कोई और सूर : न पढ़ें। फ़ज्र की नमाज़ में पहली रकअत दूसरी रकअत के मुक़ाबले में तवील फ़रमाते और हर नमाज़ में पहली रकअत कुछ तवील होती। फ़ज्र की नमाज़ में दूसरी तमाम नमाज़ों से ज्यादा तवील आप की क़ेरअत होती, क्योंकि कुरआन शरीफ़ में आता है :—

(सुबह के वक्त कुरआन का पढ़ना-मोजिबे हुज़ूरे मलायका है)

जब आप रूकू फ़रमाते तो अपने घुटनों पर हथेलियाँ इस तरह रखते जैसे कि घुठनों को पकड़े हुए हों और हाथ तान लेते .और पहलुओं से अलग रखते। पीठ फैला लेते और बिल्कुल सीधी रखते, और कहते "सुबहान रब्बिअल अज़ीम"। आदतन आप की तशबीहात की तादाद दस होती थी। इसी तरह सज्दा में भी दस बार 'सुबहान रब्बिअल आला' कहते। आपका आम मामूल नमाज़ में इतमीनान और तनासुब का ख्याल रखने का था। रुकू से सर उठाते हुए कहते "समीअल्लाहुलिमन हमिदा" रुकू से उठकर क़ौमा में कमर बिल्कुल सीधी कर लेते, ऐसा ही दोनों सज्दों के दरमियान करते। जब क़ौमा में पूरी तरह खड़े हो जाते तो कहते "रब्बना व लकल हम्द" कभी इस पर इज़ाफ़ा भी फ़रमाते। फिर तकबीर अल्लाहु-अकबर कहते हुए सज्दा में जाते और हाथों से पहले घुटने रखते और जब उठते तो घुटनों से पहले दोनों हाथ उठाते और सज्दा पेशानी व

नाक दोनों पर करते, पेशानी व नाक दोनों को अच्छी तरह ज़मीन पर रखते और पहलुओं से हाथों को जुदा रखते और उनको इस तरह कुशादा कर लेते कि बग़ल की सफ़ेदी नजर आती और हाथ कन्धों और कानों के सामने रखते, सज्दा पूरे इतमीनान के साथ करते और पैर की उंगलियों को क़िबला रुख़ रखते और कहते "सुबहान रब्बिअल आला" कभी इस पर इज़ाफ़ा भी फ़रमाते। और नफ़िल नमाज़ों में सज्दा की हालत में कसरत से दुआ करते, फिर अल्लाहुअकबर कहते हुए सर उठाते और हाथों को अपनी रानों पर रख लेते फिर कहते "अल्लाहुम्मग़फिरली, वरहमनी, वहबुरनी, वहदिनी वरज़ुक्नी" (ऐ अल्लाह मेरी मग़फ़िरत फ़रमा, मुझ पर रहम फ़रमा, मेरी दिलबस्तगी फ़रमा, मुझे हिदायत नसीब फ़रमा और मुझे रिज़्क़ अता फ़रमा) फिर पैरों के पंजों घुटनों और रानों पर टेक लेते हुए उठ जाते। जब खड़े होते तो बिना ठहरे हुए क़िरअत शुरू फ़रमा देते और पहली रकअत जैसी दूसरी रकअत भी पढ़ते फिर जब तशौहुद के लिए बैठते तो बायाँ हाथ बायें रान और दाहिना हाथ दायें रान पर रखते और दायें हाथ की शहादत वाली उंगली से इशारा फ़रमाते और बैठने की हालत में तशौहुद पढ़ते और सहाबाक्राम को इसी तरह तशौहुद पढ़ने की तालीम देते :—

> "अदब व ताज़ीम और इज़हारे नेयाज़ के सारे कल्मे अल्लाह ही के लिए हैं, और तमाम इबादात और तमाम सदक़ात अल्लाह ही के वास्ते हैं। (और मैं इन सबका नज़राना अल्लाह के हुज़ूर में पेश करता हूं) तुम पर सलाम हो ऐ नबी और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें, सलाम हो हम पर, और अल्लाह के सब नेक बन्दों पर, मैं शहादत देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई इबादत और बन्दगी के लायक़ नहीं, और मैं इसकी भी शहादत देता हूं कि मोहम्मद स० उसके बन्दे और पैग़म्बर हैं।"

इस तशौहुद में तख़फ़ीफ़ से काम लेते। किसी रवायत में यह नही आया कि आप पहले तशौहुद में दरूदशरीफ़ पढ़ते हों। या अज़ाबे क़ब्र, अज़ाबे जहन्नम, मौत व हयात के फितना और दज्जाल मसीह के फ़ितना से पनाह की दुआ माँगते हों।

फिर पंजों के बल घुटनों और रानों पर टेक लेते हुए खड़े हो जाते जैसे पहली रकअत के बाद खड़े हुए थे, और बाक़ी रकअतें पहले की तरह पढ़ते, फिर जब आख़री रकअत होती जिसमें सलाम फेरना है, तो तशौहुद के लिए बैठते और पहले वही पहले वाला तशौहुद पढ़ते। तशौहुद के बाद दरुदशरीफ़ पढ़ते फिर दुआ करते :—

> "ऐ अल्लाह मैं अज़ाबे क़ब्र से आपकी पनाह चाहता हूं, और दज्जाल के फितना से आपकी पनाह चाहता हूँ, और ज़िंदगी और मौत के फितना से आपकी पनाह चाहता हूँ, और गुनाहों और फर्ज के बोझ से आपकी पनाह चाहता हूँ।[1]"

हज़रत अबू बक्र रज़ी० को आपने यह दुआ भी तालीम फरमाई थी :—

> "ऐ अल्लाह मैंने अपने नफ्स पर बहुत ज़ुल्म किया, और गुनाह सिर्फ आप ही माफ फरमाने वाले हैं, तो——मुझे अपनी ख़ास मग़फरत नसीब फरमाइये, और रहम

1. हज़रत अबू हुरैरा और हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ी० से रवायत है कि "अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया तुम में से जब कोई शख़्स आख़री तशौहुद से फ़ारिग़ हो जाये तो अल्लाह की चार चीज़ों से पनाह मांगे—जहन्नम के अज़ाब से, क़ब्र के अज़ाब से, मौत या हयात के फ़ितना से और मसीह दज्जाल के शर से (मुस्लिम शरीफ)। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास की रवायत में है कि" अल्लाह के रसूल स० सहाबा को यह दुआ इस तरह सिखाते थे जिस तरह कुरआन पाक की कोई सूर : (मुस्लिम शरीफ़)

फरमाइये, आप बहुत ही मग़फ़रत फ़रमाने वाले, और बड़े मेहरबान हैं।"

इनके अलावा भी दुआयें साबित हैं। फिर दाहिनी तरफ सलाम फेरते और कहते "अस्सलामु अलैकुम व रहमत उल्ला" और इसी तरह बायें तरफ सलाम फेरते। फिर दाहिनी या बायें जानिब रूख़ करके बैठ जाते, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजी० से रवायत है, कि मैं अल्लाह के रसूल स० की नमाज़ के ख़त्म का अल्लाहुअकबर" "अल्लाहुअकबर" की आवाज़ से पता चला लेता था। आप सलाम फेरने के बाद तीन बार इस्तेग़फार पढ़ते और कहते :—

"ऐ अल्लाह तू ही सलामती है, और तुझ ही से सलामती है, तू बाबरकत है, ऐ इज्ज़त और बुजुर्गी वाले।"

और उतनी ही देर क़िबला रुख़ रहते जितनी देर यह कहलें, फिर तेजी से मुक्तदियों की तरफ़ रुख़ फ़रमा लेते, कभी दायें जानिब कभी बायें, और हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद यह कल्मात पढ़ते :—

"अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं, वह वाहिद है, उसका कोई साझी नहीं, सब कुछ उसी का, सारी तारीफ़ें उसी कीं, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है, ऐ अल्लाह जो आप दें उसको कोई रोकने वाला नहीं, और जिसको रोक दें उसको कोई देने वाला नहीं, और आपकी तरफ़ किसी नसीब वाले को उसका नसीब फ़ायदा नहीं पहुँचा सकता।"

और कहते :—

"अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं वह तनहा है उसका कोई शरीक नहीं, उसी की हुकूमत है, और उसी की सब तारीफें, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है, ख़ुदा के अलावा (किसी के पास) कूवत है, न ताकत"

और यह भी कहते :—

"अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, सिर्फ उसी की इबादत

करते हैं, उसी का इनाम व एहसान है, और उसी की अच्छी तारीफें, और खुदा के सिवा कोई माबूद नहीं, हम सिर्फ उसी की इबादत करते हैं, दीन को उसके लिए खालिस करके, चाहे काफ़िरों को कैसा ही बुरा लगे।"

आपने उम्मत के लिए यह मुस्तहब क़रार दिया है कि हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद "सुबहान अल्लाह" तैंतीस बार, 'अल्हम्दुलिल्लाह' तैंतीस बार और "अल्लाहुअकबर" तैंतीस बार कहें और सौ का अदद "लाइलाहा इल्लल्लाहु वहदहू ला शरीकलहू लहुल मुल्को वलहुल-हमदो वहुवा अला कुल्ले शैइन क़दीर" कह कर पूरा करें और एक दूसरी रवायत में "अल्लाहुअकबर" का चौंतीस बार कहना भी आया है।

सुनन व नवाफ़िल में बारह रकाअतों का क़याम की हालत में आप हमेशा एहतमाम फरमाते थे, जुहर से पहले चार रकअत, और दो रकअत जुहर के बाद, और मग़रिब के बाद दो रकअत, और इशा के बाद दो रकअत, और फ़ज्र से पहले दो रकअतें। आप इन सुन्नतों को अक्सर अपने घर में पढ़ा करते थे और क़याम की हालत में कभी इनको तर्क नहीं फरमाते थे। आप का तरीक़ा यह था कि किसी काम को शुरु करते तो इसको मामूल बना लेते। इन सुन्नतों में सबसे अहम सुन्नत फ़ज्र की सुन्नत है। हज़रत आयशा रज़ी० फरमाती है कि अल्लाह के रसूल स० नवाफिल व सुनन में किसी नमाज़ का इतना एहतमाम नहीं फ़रमाते थे, जितना फ़ज्र की इस दुगाना सुन्नत का। आप का मामूल था कि नवाफिल व सुनन घर पर अदा फरमाते थे, और वित्र का सफ़र व हज़र में एहतमाम फरमाते थे। फ़ज्र की सुन्नत अदा फरमाकर आप दाहिनी करवट आराम फरमाते। जमाअत के बारे में आप का इरशाद है कि "जमाअत की नमाज़ तनहा पढ़ी जाने वाली पर सत्ताईस दर्जा फौक़ियत रखती है"। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ी० बयान करते हैं कि "हमने अपने आपको इस हाल में देखा है कि (जमाअत

से) पीछे रहने वाला वही मुनाफ़िक़ होता था जिसका निफ़ाक़ खुला हुआहो (वरना जमाअत में) वह आदमी भी लाया जाता था, जिसको दो शख़्स पकड़ कर लायें और सफ़ में खड़ा कर दें।" (मुस्लिम शरीफ़) [1]

अल्लाह के रसूल स० सफ़र व हज़र में कभी तहज्जुद तर्क नहीं फ़रमाते थे और अगर कभी नींद ग़ालिब आ जाये या तकलीफ़ की वजह से न पढ़ सके तो दिन में बारह रकअतें पढ़ लेते थे। रात में आप (वित्र के साथ) ग्यारह या तेरह रकअते पढ़ते। तहज्जुद और वित्र का मामूल मुख़्तलिफ़ रहा है। वित्र में क़ुनूत भी पढ़ते थे। रात को क़रअत कभी सिर्री[2] फ़रमाते कभी जेहरी[3]। कभी तवील रकअतें पढ़ते कभी मुख़्तसर। और ज़्यादातर आख़री रात में वित्र पढ़ते थे। रात दिन में किसी वक्त भी सफ़र की हालत में सवारी पर चाहे किधर ही उसका रुख़ हो नफ़िल नमाज़ें पढ़ लेते थे। और रुकू व सज्दा इशारा से फ़रमाते थे।

अल्लाह के रसूल स० और सहाबाक्राम रज़ी० किसी बड़ी नेमत के मिलने या बड़ी मुसीबत के टल जाने पर सज्दये शुक्र बजा लाते थे, और क़ुरआन में अगर आयत सज्दा तिलावत फ़रमाते या सुनते तो अल्लाहु अकबर कह कर सज्दा में चले जाते।

जुमा की बड़ी ताज़ीम व एहतिराम फ़रमाते और इस में कुछ ऐसी इबादतें फ़रमाते जो और दिनों में न फ़रमाते। जुमा के गुस्ल, इत्र लगाने और नमाज़ के लिए जल्दी जाने को आप ने मसनून

---

1. जमाअत का यह हुक्म मर्दों के लिए है। वरना जहां तक मुसलमान औरत का तअल्लुक़ है तो उसकी नमाज़ अपने घर में मस्जिद से अफ़ज़ल है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ी० से रवायत है कि "अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया कि औरत की नमाज़ अपनी ख़्वाबगाह (सोने का कमरा) में पढ़ना अपने कमरे और दालान में पढ़ने से बेहतर है। और अपनी कोठरी में पढ़ना ख़्वाबगाह में पढ़ने से बेहतर है।" (अबूदाऊद)
2. धीमे स्वर में पढ़ना
3. ऊँचे स्वर में पढ़ना।

करार दिया है। जुमा के दिन आप सूर: कहफ़ की तिलावत का एहतमाम फ़रमाते थे। जहाँ तक हो सकता अच्छे कपड़े पहनते थे। इमाम अहमद र० हज़रत अबू अयूब अंसारी रज़ी० के हवाले से बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० को फ़रमाते हुए सुना कि, "जुमा के दिन ग़ुस्ल करे और इत्र—अगर उसके पास हो—लगाये। और जहाँ तक हो सके अच्छे कपड़े पहने फिर सुकून के साथ मस्जिद जाये। फिर अगर चाहे तो नवाफ़िल पढ़े, और किसी को तकलीफ़ न दे। और फिर जब इमाम मेंबर पर आ जाये उस वक्त से नमाज़ के ख़त्म तक ख़मोश रहे। और ध्यान से ख़ुतबा सुने। अगर ऐसा करेगा तो एक जुमा से दूसरे जुमा तक गुनाहों के लिए यह कफ्फ़ारा होगा"। जुमा के दिन एक क़बूलियत की घड़ी है। हज़रत अबू हुरैरा रज़ी० की रवायत है कि "जुमा के दिन एक ऐसी घड़ी है कि अगर कोई मुसलमान बन्दा इसको इस हाल में पाले कि वह खड़ा हुआ नमाज़ पढ़ रहा हो और अल्लाह से सवाल कर रहा हो तो अल्लाह तआला उसको ज़रूर इनायत फ़रमायेगा।" इस साअत के वक्त के बारे में उलमा का इख़्तेलाफ़ है। इमाम अहमद और जमहूर सहाबा व ताबईन का क़ौल है कि वह अस्र के बाद की एक साअत है।

जुमा में ख़ुतबा मुख़्तसर देते और नमाज़ तवील पढ़ते थे, और ज़िक्र की कसरत करते थे। ख़ुतबा में सहाबाकराम को इस्लाम के उसूल व क़वायद और अहकाम की तालीम देते। और ज़रूरत के मुताबिक किसी चीज़ से रोकते किसी चीज़ का हुक्म देते। हाथ में तलवार वग़ैरह नहीं लेते थे। हाँ मेंबर बनने से पहले कमान या असा पर टेक लगाते थे। खड़े होकर ख़ुतबा देते, फिर थोड़ी देर के लिए बैठते, फिर खड़े होकर दूसरा ख़ुतबा देते थे। फ़ारिग़ होते ही हज़रत बेलाल रज़ी० इक़ामत शुरू कर देते थे।

ईद और बक़रीद की नमाज़ें ईदगाह में पढ़ते थे, सिर्फ़ एक बार बारिश की वजह से अपनी मस्जिद में ईद की नमाज अदा फ़रमाई। ईदैन के दिन ख़ूबसूरत पोशाक पहनते थे। ईद के दिन ईदगाह जाने

से पहले ताक अदद खजूरें नोश[1] फ़रमाते थे, और बक़रीद के दिन ईदगाह से वापसी से पहले कुछ नहीं खाते थे। वापस आकर कुरबानी का गोश्त तनाउल[2] फरमाते। ईदैन के लिए गुस्ल फ़रमाते थे और ईदगाह पहुँचते ही अजान व इक़ामत के बग़ैर नमाज शुरू फ़रमा देते। ईदगाह में आप और आपके सहाबाक्राम न नमाज ईद से पहले कोई नमाज पढ़ते, और न नमाज ईद के बाद खुतबा से पहले दुगाना ईद अदा करते और तकबीरात में इजाफ़ा फ़रमाते। जब नमाज पूरी कर लेते तो लोगों की तरफ रुख़ करके खड़े हो जाते, इस हाल में कि लोग बैठे होते और फिर वाज़ व नसीहत फरमाते। कोई हुक्म देना होता तो हुक्म देते। किसी बात से रोकना होता तो रोकते, कोई वफद या लशकर भेजना होता तो भेजते, या जैसी जरूरत होती वैसा करते। फिर औरतों के पास आकर उनको वाज व नसीहत फरमाते। औरते कसरत से सदक़ात व ख़ैरात करतीं। ईद व बक़रीद के ख़ुतबों में कसरत से तकबीर के अल्फाज़ दोहराते। ईद के दिन एक रास्ते से आते और दूसरे रास्ते से जाते।

अल्लाह के रसूल स० ने सूरजगहन की नमाज भी पढ़ी है। और इस मौके पर बड़ा ताक़तवर ख़ुतबा भी दिया है। यह नमाज सिर्फ़ एक बार हज़रत इब्राहीम की वफ़ात के मौके पर आपने अदा फ़रमाई और ग़लत ख्यालात की यह एलान कर के तरदीद फ़रमाई :—

तर्जुमा : "सूरज और चाँद अल्लाह की निशानियों में दो निशानियाँ हैं, किसी की मौत व हयात की वजह से इनमें गहन नहीं लगता जब तुम ऐसा देखो तो अल्लाह से दुआ करो, उसकी अज़मत बयान करो, नमाज पढ़ो, सदक़ा ख़ैरात करो।"

नमाज़ इस्तेस्क़ा भी मुख़तलिफ़ तरीक़ों से आप से साबित है।

---

1. खाना
2. खाते

जनाज़ा के सिलसिले में आप का तरीक़ा व सुन्नत तमाम क़ौमों के तरीक़ों से अलग था। नमाज़ जनाज़ा दो चीज़ों की जामे होती– खुदा की इबादत और बन्दगी का खुला हुआ इक़रार और मैयत के के लिए दुआ व इस्तेग़फ़ार और उसके साथ बेहतरीन तअल्लुक़ का इज़हार। आप और तमाम मुसलमान सफें बान्धकर खड़े हो जाते, खुदा की हम्द व सना बयान करते और मैयत के लिए दुआ व इस्तेग़फ़ार करते। नमाज़ जनाज़ा का असल मक़सद ही मैयत के लिए दुआ है जब क़ब्रस्तान तशरीफ़ ले जाते तो मुर्दों के लिये दुआ व इस्तेग़फ़ार और उनके हक़ में खुदा की रहमत की दुआ करते। सहाबाक्राम को क़ब्रों की ज़ियारत के वक्त यह कहने की वसीयत फ़रमाते :–

> "तुम पर सलामती हो ऐ क़ब्रस्तान के मोमिनों और मुसलमानों। हम भी इंशा अल्लाह तुम से मिलने वाले हैं, हम खुदा तआला से अपने और तुम्हारे लिए आफ़ियत के तालिब हैं"।

सदक़ात और ज़कात के बारे में अल्लाह के रसूल स० का तरीकेकार[1]

अल्लाह के रसूल स० का माल और अपने घर वालों के साथ मामला नबवी नुक्त-ए-नज़र[2] का पूरा पूरा तर्जुमान था। आख़िरत[3] की ज़िन्दगी पर हर वक्त आप की नज़र रहती थी। आप दुआ करते :–

> "ऐ अल्लाह ज़िन्दगी तो आख़िरत ही की ज़िन्दगी है। (मुझे यह अच्छा लगता है कि एक दिन पेट भर कर खाऊँ, एक दिन भूखा रहूँ।"
>
> "ऐ अल्लाह। आल मोहम्मद (स०) को गुज़ारा भर के लिए रिज़क़ अता फरमा।"

---

1. काम करने का ढंग। 2. दृष्टिकोण। 3. परलोक।

आप अपनी ज़रूरत से ज्यादा और सदक़ात के माल में से बचा हुआ माल थोड़ी देर भी रखना पसन्द न करते। हज़रत आयशा रज़ी० से रवायत है कि "अल्लाह् के रसूल स० के मर्ज़ वफ़ात के ज़माने में मेरे पास छ: या सात दीनार थे। आपने मुझे हुक्म दिया कि इस को तक़सीम कर दूँ। मगर आपकी तकलीफ़ की वजह् से मुझे इसका मौका न मिला फिर आपने मुझ से पूछा। तुमने उन छ: सात दीनारों के साथ क्या किया ? मैंने कहा कि ख्याल न रहा। आपने उसको मँगवाया, अपने हाथ पर रखा, और फरमाया कि अल्लाह् के नबी का क्या गुमान होगा, अगर वह खुदा से इस हाल में मिले कि उसके पास यह हो।" सही हदीस में है कि आपने फ़रमाया," जिसके पास सामान ज़ायद हो तो उसको दे दे जिसके पास सामान न हो"।

अल्लामा इब्ने क़ैयम नफ़िली सदक़ात के बारे में आपके मामूल का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं :—

> "अल्लाह् के रसूल स० अपने माल को सबसे ज्यादा सदक़ात व ख़ैरात में खर्च करते थे, अल्लाह् तआला जो भी आपको अता फ़रमाता, आप न उसको बहुत ज्यादा समझते न कम ही समझते। आप से अग़र कोई शख्स सवाल करता और आपके पास वह चीज़ होती तो कम ज्यादा का ख्याल किये बग़ैर उसको दे देते। आप इस तरह् देते थे जैसे कमी व तँगी का कोई ख़ौफ़ न हो। अतियात, सदक़ात व ख़ैरात आपका महबूब अमल था। आप देकर इतना खुश होते जितना लेने वाला लेकर न होता था। सख़ावत में कोई आपका सानी नहीं था आपका हाथ सदक़ात की बादे बहारी था। अगर कोई मुहताज व जरुरतमन्द आ जाता तो अपने ऊपर उसको तरजीह देते, और ईसार से काम लेकर कभी खाना कभी कपड़ा इनायत फ़रमा देते। आप के देने के अन्दाज भी

जुदागाना होते थे। कभी हिबा कर देते, कभी सदक़ा देते कभी हदिया के नाम से देते। कभी किसी से कोई चीज़ खरीदते। फिर उसको उसका सामान और क़ीमत दोनों ही दे देते, जैसा आपने हज़रत जाबिर रज़ी० के साथ किया, कभी किसी से क़र्ज़ लेते और जब क़र्ज़ वापस करते तो असल से ज़ायद और बेहतर देते, कभी कोई चीज़ खरीदते और असल कीमत से ज़ायद देते। हदिया क़बूल फ़रमाते फिर उस से बेहतर कई गुना ज्यादा हदिया देते। ग़र्ज़ कि हर मुमकिन तरीक़े से सदक़ात और नेकी व सिलह रहमी के नये तरीक़े और निराले अन्दाज पैदा फ़रमा लेते।"

ज़कात के बारे में भी वक्त, मिक़दार, निसाब, और किस पर वाजिब होती है और इसके क्या मसारिफ़ हैं हर लेहाज से आप की लाई हुई शरीअत और आप का तरीक़ा बड़ा कामिल और जामे है। आपने इसमें मालदारों का भी ख्याल फरमाया और मिसकीनों[2] की मसलहत का भी। अल्लाह तआला ने जकात को माल और साहबे माल के लिए पाक़ीजगी का सबब और मालदारों पर इनामात का ज़रिया बनाया है।

आपका मामूल यह था कि जिस इलाक़े के मालदारों से जकात लेते उसी इलाक़े के ग़रीबों और मिसकीनों में बांट देते। अगर वह उनकी जरूरत से जायद होती हो तो आप की ख़िदमत में लाई जाती और आप ख़ुद तक़सीम फरमाते। जकात लेने वालों को आप सिर्फ उन मालदारों के पास भेजते थे जो जानवरों, खेती, बाग़ात के मालिक हों। आपका यह तरीक़ा न था कि ज़कात में मालदार का अच्छा माल ले लिया जाये बल्कि दरमियानी दर्जे का लिया जाये।

---

1. ज़ादुलमआद जिल्द। पृष्ठ सं 156
2. ग़रीबों।

आपने फ़ित्रा की अदायगी भी ज़रूरी बताई और आप का मामूल यह था कि ईदगाह जाने से पहले फ़ित्रा निकाल देते थे।

रोज़ा और उसवये[1] नबवी स०

सन् दो हिज्री में रोज़ा फ़र्ज़ हुआ और अल्लाह के रसूल स० ने नौ बार रमज़ान के रोज़े रखकर वफ़ात पाई। रोज़े के बारे में आपका तरीक़ा जामे, सहल और आसान था। रमज़ान के महीने में आप मुख्तलिफ़ इबादात की कसरत फ़रमाते थे। हज़रत जिब्रील आते थे, और आपसे क़ुरआन पाक का दौर करते थे। हज़रत जिब्रील के आने पर आपकी सख़ावत का फ़ैज़ इस तरह जारी होता था जैसे इनामात की तेज़ हवा चल जाये। रमज़ान में आप बहुत सी वह इबादतें करते थे जो ग़ैर रमज़ान में नहीं करते थे। यहां तक कि कभी कभी मुसलसल[2] रोज़ा रखते। हालाँकि सहाबाक्राम के लिए आपने मुसलसल रोज़ा मनाकर रखा था। जब सहाबा ने अर्ज़ किया कि आप तो मुसलसल रोज़ा रखते हैं तो आपने फ़रमाया "मैं तुम्हारी तरह नहीं हूं। मैं अपनेरब के पास इस हाल में रात गुज़ारता हूं (और एक रवायत में है कि दिन गुज़ारता हूं) कि वह मुझे खिलाता है"। सहरी खाने पर आप ज़ोर देते। इसकी तरग़ीब देते और मुसलमानों के लिए इसको मसनून क़रार देते थे। हज़रत अनस बिन मालिक रज़ी० बयान करते हैं कि आपने फ़रमाया, "सहरी खाओ क्योंकि सहरी में बरकत है।"आपने फ़रमाया, "हमारे और अहले किताब के रोज़ों में फ़र्क़ सहरी के खाने का है।" इफ़तार में देर करने से मना फ़रमाते और फ़रमाते "लोग उस वक्त तक ख़ैर के साथ रहेंगे जब तक इफ़तार में जल्दी करेंगे", और फ़रमाते "दीन उस वक्त तक ग़ालिब रहेगा जब तक लोग इफ़तार में जल्दी करेंगे, क्योंकि यहूद व नसारा देर करते हैं" और सहरी में आप और

1. रीति, अभ्यास। 2. सतत, निरन्तर।

आपके असहाब का तरीक़ा ताख़ीर का था।

मामूल यह था कि नमाज़ से पहले इफ़तार करते, चन्द तर खजूरें अगर मौजूद होतीं खाते, अगर न होतीं तो ख़ुश्क खजूरें खाते, वरना पानी ही के चन्द घूंट पी लेते। इफ़तार करते वक्त फ़रमाते :—

"ऐ अल्लाह आप ही के लिए रोज़ा रखा, और आप ही के रिज़्क़ से इफ़तार करते हैं।"

और फ़रमाते :—

"प्यास बुझ गई, रगें तर हो गईं और इंशाअल्लाह तआला अज्र साबित हो गया।"

रमज़ान में आपने इस्फ़ार भी फ़रमाये हैं, कभी रोज़ा रखा, कभी न भी रखा और सहाबा को रोज़ा रखने न रखने का अख़्तेयार दिया। अगर जंग सर पर होती तो रोज़ा न रखने का हुक्म देते ताकि दुश्मन से जंग करने की ताक़त रहे। रमज़ान ही में आपने सबसे बड़ी फ़ैसलाकुन गज़वये बदर और गज़वये फ़तेह मक्का का सफ़र किया नमाज़ तरावीह आपने तीन दिन पढ़ाई। एक एक करके बहुत से लोगों तक ख़बर पहुंच गयी और कसीर मजमा इकट्ठा हो गया। चौथी रात में मजमा इतना हो गया कि मस्जिद नाकाफ़ी हो गई, उस रात आप घर से नमाज़ फ़ज्र ही के लिए निकले और फ़ज्र की नमाज़ के बाद लोगों से हम्द व सना के बाद फ़रमाया "मैं तुम्हारे यहाँ (इतनी तादाद में) मौजूद होने से लाइल्म न था, लेकिन मुझे इसका ख़ौफ़ हुआ कि कहीं यह (नफ़िल नमाज़ तरावीह) तुम पर फ़र्ज़ न कर दी जाये और फिर वह तुमसे निभ न सके, फिर अल्लाह के रसूल स० की वफ़ात तक बात यहीं तक रही। आप के बाद सहाबा ने तरावीह का एहतमाम किया, यहां तक कि वह अहले सुन्नत का शेआर बन गई।

अल्लाह के रसूल स० कसरत से नफ़िल रोज़े रखते थे और छोड़ भी देते थे। रखते तो ख्याल होता रखते ही रहेंगे और छोड़ते तो ख्याल होता कि अब नहीं रखेंगें। लेकिन रमज़ान के अलावा किसी महीना के पूरे रोज़े नहीं रखे। और शाबान में जितने रोज़े

रखते थे उतने किसी महीना में नहीं रखते थे। दोशंबा और जुमेरात के रोजे का ख़ास एहतमाम फ़रमाते थे। हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजी० कहते हैं कि, "अल्लाह के रसूल स० सफ़र व हजर किसी हालत में महीना की 13, 14, 15 (अय्यामे बैज) के रोजे नही छोड़ते थे और इसकी ताकीद फ़रमाते थे। और इन दिनों के मुकाबले में आशूरा का ख़ास एहतमाम था। आपने आशूरा का रोजा रखा तो आप से अर्ज किया गया कि यह दिन तो यहूद व नसारा के यहाँ मुक़द्दस[1] दिन है। आपने फ़रमाया अगर अगले साल मौक़ा मिला तो इंशा अल्लाह नवी का भी रोजा रखेंगे।

अरफ़ा के दिन आप रोजा नहीं रखते थे। आपका मामूल कई कई दिन लगातार रोजा रखने का नहीं था। आप ने फ़रमाया, "अल्लाह को दाऊद का रोजा सब से ज्यादा पसन्द है। वह एक दिन रोजा रखते थे एक दिन छोड़ते थे। आप की यह भी आदते शरीफ़ा थी कि घर तशरीफ़ ले जाते और पूछते कुछ खाने को है। अगर जवाब "नहीं" में मिलता तो फ़रमाते, अच्छा तो आज मैं रोजे से हूं।

वफ़ात तक आप का मामूल रहा कि रमजान के आख़री अशरह में एतकाफ़ फ़रमाते थे। एक बार वह रह गया तो शव्वाल में उसकी क़जा की। हर साल दस दिन का एतकाफ़ फ़रमाया करते थे लेकिन जिस साल वफ़ात हुई उस साल बीस दिन का एतकाफ़ फ़रमाया। और हजरत जिब्रील हर साल आपसे एक बार कुरआन शरीफ़ का दौर करते थे लेकिन वफ़ात की साल दो बार दौर किया।

हज और उमरा के बारे में आप का तरीक़ा

इसमें किसी का इख़्तेलाफ़ नहीं है कि हिज्रत के बाद अल्लाह के रसूल स० ने सिर्फ़ एक हज फ़रमाया और वही हज्जतुल विदा था जो सन् दस हिज्री में अदा फ़रमाया गया। हज सन् नौ या दस

1. पवित्र, पाक।

हिज्री में फ़र्ज़ हुआ इसमें इख़्तेलाफ़ राय है। हिज्रत के बाद आपने चार उमरे किये वह सब जीक़ादा के महीने में हुए।

"अल्लाह के रसूल स० ने हज का इरादा फ़रमाया और लोगों को इसकी ख़बर कर दी कि आप हज के लिए जाने वाले हैं। यह सुन कर लोगों ने आप के साथ हज में जाने की तैयारियाँ शुरू कर दीं।

इस की ख़बर मदीना के आस पास भी पहुँची और वहां के लोग बड़ी तादाद में मदीना में हाजिर हुए। रास्ते में इतनी बड़ी तादाद में लोग क़ाफ़िले में शामिल होते गये, कि उन का शुमार मुशकिल है। लोगों का एक हुजूम था, जो आगे, पीछे, दाहिने, बायें जहाँ तक निगाह जाती आप को अपने जूलू में लिए हुए थे। आप मदीना से दिन में जुहर के बाद पचीस जीक़ादा दिन शनिवार को रवाना हुए। पहले जुहर की चार रकअतें आपने अदा फ़रमाई इससे पहले खुत्वा दिया और इसमें एहराम के वाजिबात और सुनन बयान फ़रमाये। फिर तलबिया कहते हुए रवाना हुए। तलबिया के अल्फाज़ यह थे :—

"लब्बैक, अल्लाहुम्मा लब्बैक लब्बैक ला शरीका लका लब्बैक
इन्नल हम्दा वन्नेमता लका वल्मुल्का ला शरीका लका"

मजमा इन अल्फ़ाज़ को घटा देता कभी बढ़ा देता। इस पर आप कोई नकीर न फ़रमाते। तलबिया का सिलसिला आप ने बराबर जारी रखा और "अरज" में पहुँचकर पड़ाव किया। आप की सवारी और हज़रत अबूबक्र की सवारी एक थी।

फिर आगे चले और "अलअबवा" पहुँचे। वहाँ से चलकर "वादी-ए-असफ़ान" और "सरिफ़" पहुँचे, फिर वहाँ से चलकर "ज़ीतुआ" में मंज़िल की, और शनिवार की रात वहाँ गुज़ारी, यह ज़िलहिज्जा की चार तारीख़ थी, फ़ज्र की नमाज़ आपने अदा फ़रमाई। उसी रोज़ गुस्ल भी फ़रमाया और मक्का की तरफ़ रवाना हुए। मक्का में आप का दाख़िला दिन में बालाई[1] मक्का की तरफ़ से हुआ

1. ऊँचाई।

वहाँ से चलते हुए आप हरम शरीफ़ में दाख़िल हुए यह चाश्त का वक्त था। बैतुल्लाह पर नजर पड़ते ही आपने फ़रमाया :–

"ऐ अल्लाह। अपने इस घर की इज्जत व शरफ़ ताजीम व तकरीम और रोब व हैबत में और इजाफ़ा फ़रमा।"

दस्ते मुबारक बलन्द करते तकबीर कहते और फ़रमाते :–

"ऐ अल्लाह आप सलामती हैं, आप ही से सलामती का वजूद है, ऐ हमारे रब हम को सलामती के साथ जिन्दा रख।"

जब हरम शरीफ़ में आप दाख़िल हुए तो सब से पहले आपने काबा का रुख़ किया। हज्र असवद का सामना हुआ तो आपने बग़ैर किसी मजाहमत के उसका बोसा लिया, फिर तवाफ़ के लिए दाहिनी तरफ़ रुख़ किया। काबा आप के बायें तरफ़ था। इस तवाफ़ के पहले तीन शौत[1] में आपने रमल किया। आप तेजी से क़दम उठाते थे। कदमों का फ़ासिला मुख्तसर होता था। आपने अपनी चादर अपने एक शाने पर डाल ली थी, दूसरा शाना खुला हुआ था। जब आप हज्र असबद के सामने गुजरते तो उसकी तरफ़ इशारा करके अपनी छड़ी से इस्तेलाम[2] करते। जब तवाफ़ से फ़रागत हुई तो मक़ामे इब्राहीम के पीछे तशरीफ़ लाये और यह आयत तिलावत फ़रमाई :–

"वत्तख़ेजू मिम मक़ामे इब्राहीमा मुसल्ला" (सूर : बकर :– 125)

इसके बाद यहाँ दो रकअतें पढ़ी। आप नमाज से फ़ारिग़ होकर फिर हज्र असवद के क़रीब तशरीफ़ ले गये और उसका बोसा लिया, फिर सफ़ा की तरफ़ उस दरवाजे से चले जो आप के सामने था जब उसके क़रीब आये तो फ़रमाया :–

"सफ़ा और मरवा अल्लाह की निशानियों में से हैं, मैं शुरू

1. फेरा, गश्त 2. स्पर्श करना।

करता हूँ उस से जिस से अल्लाह् तआला ने शुरू किया।"

फिर आप सफ़ा तशरीफ़ ले गये यहाँ तक कि काबा आप को नज़र आने लगा फिर क़िबला की तरफ़ देखकर आपने फ़रमाया :–

"अल्लाह् के सिवा कोई माबूद नहीं, वह् यकता है, उसका कोई शरीक नहीं। उसी का सब मुल्क और बादशाही है। और उसी के लिए सारी ह्म्द व तारीफ़ है और वह् हर चीज़ पर क़ादिर है। अल्लाह् के सिवा कोई माबूद नहीं, वह् यकता है, उसका कोई शरीक नहीं, उसने अपना वादा पूरा किया, अपने बन्दे की मदद फ़रमायी, और तमाम जमाअतों और गिरोहों को तनहा शिकस्त दी।"

मक्का में आपने चार दिन इतवार, सोमवार, मंगल और बुद्ध को क़याम फ़रमाया। जुमेरात को दिन निकलते ही आप तमाम मुसलमानों के साथ "मिना" तशरीफ़ ले आये। ज़ुह्र और अस्र की नमाज़ें यहीं अदा फ़रमाईं, और रात भी यहीं बसर की। यह् जुमा की रात थी, जब सूरज निकल आया तो आप "अरफ़ा" की तरफ़ रवाना हुए। आपने देखा कि "नमेरा" में आप के लिए ख़ेमा लगाया जा चुका है, इसलिए आप इसी में उतरे। जब ज़वाल का वक्त हो गया तो अपनी ऊँटनी "क़सवा" को तैयार करने का हुक्म दिया, फिर वहाँ से रवाना होकर "अरफ़ा" के मैदान के बीच में आप ने मंज़िल की और अपनी सवारी ही पर तशरीफ़ रखते हुए एक शानदार ख़ुतबा दिया जिसमें आपने इस्लाम की बुनियादों को वाज़ेह किया, और शिर्क व जेहालत की बुनियादें ढा दीं। इसमें आपने उन तमाम चीज़ों की तहरीम[1] फ़रमाई जिन के हराम होने पर तमाम मज़ाहिब व अक़वाम मुत्तफ़िक़ हैं। और वह हैं :— नाहक़ ख़ून करना, माल हड़प करना, आबरू रेज़ी, आपने जाहिलियत की तमाम बातों को अपने क़दमों के नीचे पामाल कर दिया, जाहिलियत का सूद कुल का कुल आपने ख़त्म

1. हराम करना

कर दिया और उसको बिल्कुल बातिल[1] क़रार दिया। औरतों के साथ अच्छा सुलूक करने की तलक़ीन की और उनके हुकूक़ और जो उनके जिम्मे हुकूक़ हैं उनकी वजाहत की और बताया कि दस्तूर के मुताबिक इख्लाक़ और अच्छे बर्ताव के मेयार पर खुराक और लेबास, नान नफ़क़ा उनका हक़ है।

उम्मत को आप ने अल्लाह की किताब के साथ जुड़े रहने की वसीयत की और फ़रमाया,"जब वह इसके साथ अपने को अच्छी तरह वाबिस्ता रखेंगे, गुमराह न होंगे"। आपने उनको आगाह किया कि उनसे कल कयामत के दिन आपके बारे में सवाल होगा, और उनको इसका जवाब देना होगा इस मौके पर आपने तमाम हाज़रीन से पूछा कि वह इस मौके पर क्या कहेंगे, और क्या गवाही देंगे? सब ने एक ज़बान होकर कहा कि हम गवाही देंगे कि आपने हक़ का पैग़ाम बे कमोकास्त[2] पहुँचा दिया आपने अपना फ़र्ज़ पूरा किया, ख़ैर ख्वाही का हक़ अदा कर दिया। यह सुन कर आपने आसमान की तरफ़ उँगली उठाई और तीन बार अल्लाहतआला को उन पर गवाह बनाया, और उनको हुक्म दिया जो यहाँ मौजूद है वह उन लोंगो तक यह बात पहुँचादे जो यहाँ मौजूद नहीं।

जब आप इस ख़िताब मे फ़ारिग़ हुए, तो आपने हज़रत बेलाल रज़ी० को अज़ान का हुक्म दिया। उन्होने अज़ान दी, फिर आपने जुहर की नमाज़ दो रकअत पढ़ी। यह जुमा का दिन था।

नमाज़ से फ़ारिग़ हो कर आप अपनी सवारी पर तशरीफ़ ले गये और मौक़फ़ (वकूफ़ की जगह) पर आये, यहाँ आकर आप अपनी सवारी पर बैठ गये और गुरूब आफ़ताब तक दुआ व मुनाजात में मशगूल रहे। दुआ में आप दस्ते मुबारक सीना तक उठाते थे जैसे कोई सायल और मिसकीन **नाने शबीना**[3] का सवाल का सवाल कर

---

1. झूठ
2. बिना घटाये,
3. बासी रोटी

रहा हो। दुआ यह थी :—

"ऐ अल्लाह। तू मेरी सुनता है, और मेरी जगह को देखता है, और मेरे पोशीदा और जाहिर को जानता है, तुझ से मेरी कोई बात छिपी नहीं रह सकती, मैं मुसीबत ज़दा हूँ, मुहताज हूँ, फ़रियादी हूं, पनाह जू हूँ, परेशान हूँ, हिरासाँ हूं, अपने गुनाहों का इक़रार करने वाला हूं, एतराफ़ करने वाला हूँ, तेरे आगे सवाल करता हूँ, जैसे बेकस सवाल करते हैं, तेरे आगे गिड़गिड़ाता हूँ, जैसे गुनहगार ज़लील व ख्वार गिड़गिड़ाता है, और तुझ से तलब करता हूँ जैसे ख़ौफ़ ज़दा, आफ़त रसीदा तलब करता हो, और जैसे वह शख्स तलब करता है जिस की गर्दन तेरे सामने झुकी हो और उसके आंसू वह रहे हों, और तन बदन से वह तेरे आगे फ़रोतनी[1] किये हुए हो और अपनी नाक तेरे सामने रगड़ रहा हो। ऐ रब। तू मुझे अपने से दुआ माँगने में नाकाम न रख। और मेरे हक़ में बड़ा मेहरबान और रहम करने वाला हो जा, ऐ सब मांगें जाने वालों से बेहतर और सब देने वालों से अच्छे।"

इसी मौक़े पर यह आयत नाज़िल हुई :—

"आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया, तुम पर अपनी नेमत तमाम कर दी। और तुम्हारे लिए इस्लाम को बहैसियत दीन इन्तेख़ाब कर चुका" (सूर : मायदा—3)

जब आफ़ताब गुरूब हो गया तो आप अरफ़ा से रवाना हो गये, और उसामा बिन ज़ैद को अपने पीछे बिठाया आप सुकून और वेकार के साथ आगे चले, ऊँटनी की मेहार आप ने इस तरह समेट ली थी कि क़रीब था कि उसका सर आप के कुजावा[2] से लग जाये।

1. आजिज़ी (सहिष्णुता)
2. ऊँट की काठी।

आप कहते जाते थे कि लोगो सुकून व इतमिनान के साथ चलो। रास्ते भर आप तलबिया करते जाते और जब तक मुज्दल्फ़ा न पहुँच गये यह सिलसिला जारी रहा। वहाँ पहुँचते ही आपने हज़रत बेलाल रज़ी० को अज़ान का हुक्म फ़रमाया। अज़ान दी गई, आप खड़े हो गये और ऊँटो को बिठाने और सामान उतारने से पहले मग़रिब की नमाज़ अदा फ़रमाई। जब लोगों ने सामान उतार लिया, तो आप ने इशा की नमाज़ भी अदा फ़रमाई। फिर आप आराम फ़रमाने के लिए लेट गये और फ़ज्र तक सोये।

फ़ज्र की नमाज़ अव्वल वक्त अदा फ़रमाई फिर सवारी पर बैठे और 'मशअरूल हराम' आये और क़िबला रूख़ हो कर दुआ, तकबीर और ज़िक्र में मशगूल हो गये यहाँ तक कि खूब रोशनी फैल गई। यह सूरज निकलने से पहले की बात है। फिर आप मुज्दल्फ़ा से रवाना हुए। फ़ज़ल बिन अब्बास रज़ी० सवारी पर आप के पीछे थे। आप बराबर तलबिया में मशगूल रहे। आप ने इब्न अब्बास को हुक्म दिया कि **रमी जेमार** के लिए सात क़ंकरियाँ चुन लें। जब आप बादी-ए-मुहस्सर के बीच में पहुँचे तो आप ने ऊँटनी को तेज़ कर दिया और बहुत उजलत फ़रमाई। क्योंकि यही वह जगह है जहाँ असहाबे फ़ील पर अज़ाब नाज़िल हुआ था, यहाँ तक कि मिना पहुँचे और वहाँ से 'जमरतुअलअकबा' तशरीफ़ लाये और सवारी पर सूरज निकलने के बाद रमी की और तलबिया मौकूफ़ किया।

फिर मिना वापसी हुई। यहाँ पहुँचकर आपने एक बलीग़ ख़ुतबा दिया जिस में आप ने "योमुन्नहर" (क़ुरबानी का दिन) की हुरमत से आगाह किया और अल्लाह तआला के नज़दीक इस दिन की जो फ़ज़ीलत है, उसको बयान किया। दूसरे तमाम शहरों पर मक्का की फ़ज़ीलत व बरतरी का ज़िक्र किया, और जो किताब अल्लाह की रोशनी में उन की क़यादत करे, उसकी इताअत व फ़रमाँबरदारी वाजिब क़रार दिया, फिर आप ने हाज़रीन से कहा कि वह अपने मनासिक व आमाले हज आप से मालूम करलें। आपने लोगों को यह

भी तलक़ीन फ़रमाई कि देखो मेरे बाद काफ़िरों की तरह न हो जाना कि एक दूसरे की गर्दन मारते रहो'। आपने यह भी हुक्म दिया कि यह सब बातें दूसरों तक पहुँचा दी जायें। इस खुतबा में आपने यह भी इरशाद फ़रमाया :—

> "अपने रब की इबादत करो, पाँच वक्त की नमाज़ पढ़ो, एक महीना (रमज़ान) का रोज़ा रखो, और अपने औलल अम्र[1] की इताअत करो' अपने रब की जन्नत में दाख़िल हो जाओगे।"

इस वक्त आपने लोगों के सामने विदाइया कलमात भी कहे और इसी वजह से इस हज का नाम "हज्जतुल विदा" पड़ा।

फिर मिना में "मनहर" तशरीफ़ ले गये और अपने हाथ से तिरसठ ऊँट ज़िबह किये, उस वक्त आप की उम्र का तिरसठवाँ साल था। तिरसठ के बाद आप ठहर गये और हज़रत अली रज़ी० से से कहा कि सौ में जितने बाक़ी है वह पूरे करें। आपने जब कुरबानी पूरी करली तो हज्जाम को तलब फ़रमाया और बालों को मुंडाया। और अपने बालों को क़रीब के लोगों में तक़सीम फ़रमाया, फिर सवारी पर मक्का रवाना हुए, तवाफ़े इफ़ाज़ा किया जिसको तवाफ़े ज़ियारत भी कहते हैं। फिर ज़मज़म कुँए के पास तशरीफ़ लाये, और और खड़े होकर पानी नोश फ़रमाया। फिर उसी दिन मिना वापसी हुई और रात वहीं गुज़ारी। दूसरे दिन आप दिन ढलने का इन्तेज़ार करते रहे। जब दिन ढल गया तो आप अपनी सवारी से उतर कर रमी ज़ेमार के लिए तशरीफ़ ले गये। पहले जमरा से शुरू किया। उसके बाद बीच वाले जमरा और तब पीछे वाले जमरा के क़रीब जाकर रमी की। मिना में आपने दो खुतबे दिये एक कुरबानी के दिन जिसका ज़िक्र अभी ऊपर गुज़रा, दूसरा कुरबानी के दूसरे दिन।

यहाँ आप ने तवक्कुफ़ फ़रमाया और अय्याम तशरीफ़ के तीनों

---

1. सब से बेहतर और अच्छी बातें। अनु०।

दिन की रमी मुकम्मल की, फिर मक्का की तरफ रुख़ किया और सहर के वक्त तवाफ़े विदा किया और लोगों को तैयारी का हुक्म फ़रमाया और मदीना की तरफ़ रवाना हुए ।[1]

जब आप गदीर खुम[2] पहुँचे तो आपने एक खुतबा दिया और हज़रत अली रज़ी० की फ़ज़ीलत बयान फ़रमाई। आपने फ़रमाया :–

"जिसको मैं महबूब हूँ अली भी उसको महबूबहोना चाहिए, ऐ अल्लाह जो अली से मुहब्बत रखें तू भी उससे मुहब्बत रख और जो उन से अदावत रखे उससे तू भी अदावत रख ।"

जब आप "ज़ुल हुलैफ़ा" आये तो रात यहीं बसर की। सवादे मदीना पर आप की नज़र पड़ी तो आप ने तीन बार तकबीर कही और इरशाद फ़रमाया :–

"ख़ुदा बुज़ुर्ग व बरतर है, उसके सिवा कोई माबूद नहीं, उसका कोई शरीक नहीं, बस उसी की सल्तनत है। उसी के लिए तारीफ़ है वह हर बात पर क़ादिर है, लौटे आ रहे हैं तौबा करते हुए, फ़रमाँबरदाराना ज़मीन पर पेशानी रख कर अपने रब की तारीफ़ में मशग़ूल होकर, ख़ुदा ने अपना वादा सच्चा किया, अपने बन्दे की नुसरत की और तमाम क़बायल को तनहा शिकस्त दी।"

(ज़ादुलमआद जिल्द एक पृष्ठ 249)

आप मदीना में दिन के वक्त दाख़िल हुए ।

---

1. यह हिस्सा "ज़ादुलमआद" से इख्तेसार के साथ लिया गया है।
2. मक्का और मदीना के बीच हुज्फ़ा से दो मील दूर एक मक़ाम ।

4

ख़ास-ख़ास अज़्कार और मसनून दुआयें

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बन्दगी और ज़िक्र इलाही का कामिल तरीन और अफ़ज़ल तरीन नमूना थे। आपकी ज़बान और दिल हर वक़्त अल्लाह के ज़िक्र में मशग़ूल रहते थे और हर हाल में आपको अल्लाह की याद रहती। आप सहाबा को तालीम देते कि जब सोने का इरादा करें तो यह दुआ कर लिया करें। और यह फ़रमाते कि (सोने से पहले) यह तुम्हारे आख़री कल्मात हों, अगर तुम इस रात में मर गये, तो फ़ितरत पर तुम्हारी मौत होगी।

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيْ إِلَيْكَ، وَفَوَّضْتُ أَمْرِيْ إِلَيْكَ، وَأَلْجَأْتُ ظَهْرِيْ إِلَيْكَ، رَغْبَةً وَرَهْبَةً إِلَيْكَ، لَا مَلْجَأَ وَلَا مَنْجَا مِنْكَ إِلَّا إِلَيْكَ، آمَنْتُ بِكِتَابِكَ الَّذِيْ أَنْزَلْتَ، وَنَبِيِّكَ الَّذِيْ أَرْسَلْتَ.

"ऐ अल्लाह मैंने अपना रुख़ तेरी तरफ़ कर दिया और अपना मामला तेरे सुपुर्द कर दिया और अपनी पीठ तेरी तरफ रख दी तेरी रग़बत और ख़ौफ़ से, सिवा तेरे कोई ठिकाना और पनाह नहीं मैं तेरी इस किताब पर ईमान लाया जो तूने उतारी और उस नबी पर जो तूने भेजा।"

और जब सोकर उठते तो फ़रमाते :–

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ أَحْيَانَا بَعْدَ مَا أَمَاتَنَا وَإِلَيْهِ النُّشُوْرُ.

"उस खुदा का शुक्र है जिसने हमें मारने के बाद जिलाया और उसी की तरफ उठ कर जाना है।"

रात में जब जागते तो फ़रमाते :–

لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ سُبْحَانَكَ، اَللّٰهُمَّ أَسْتَغْفِرُكَ لِذَنْبِيْ، وَأَسْأَلُكَ رَحْمَتَكَ، اَللّٰهُمَّ زِدْنِيْ عِلْمًا، وَلَا تُزِغْ قَلْبِيْ بَعْدَ إِذْ هَدَيْتَنِيْ، وَهَبْ لِيْ مِنْ لَدُنْكَ رَحْمَةً، إِنَّكَ أَنْتَ الْوَهَّابُ

"तेरे सिवा कोई माबूद नहीं तू पाक है। ऐ अल्लाह। मैं तुझ से अपने गुनाह की बख़शिश चाहता हूं। और तुझ से तेरी रहमत का तलबगार हूं। ऐ मेरे रब मुझे इल्म में तरक्की दे और मेरे दिल को कज न कर, इसके बाद कि तूने मुझे हिदायत दी, और अपने पास से रहमत अता फ़रमा, बेशक तू बहुत देनें वाला है।"

हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजी० नक़ल करते हैं कि जिस रात वह अल्लाह के रसूल स० के घर सोये थे, उन्होंने देखा कि आप जब बेदार हुए तो सर आसमान की तरफ़ उठा कर सूर : आले इमरान की आख़री दस आयतें 'इन्ना फी खलकिस्समावाते' से अख़ीर तक पढ़ीं, और वित्र से फ़राग़त के बाद तीन बार कहा करते थे 'सुबहानलमलेकिल कुद्दूस' और तीसरी बार खींच कर पढ़ते थे।

जव घर से वाहर तशरीफ़ ले जाते तो पढ़ते :—

بِسْمِ اللّٰهِ تَوَكَّلْتُ عَلَى اللّٰهِ، اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَعُوْذُ بِكَ اَنْ اَضِلَّ، اَوْ اُضَلَّ
اَوْ اَزِلَّ اَوْ اُزَلَّ، اَوْ اَظْلِمَ اَوْ اُظْلَمَ، اَوْ اَجْهَلَ اَوْ يُجْهَلَ عَلَيَّ.

"अल्लाह के नाम (चलता हूं) अल्लाह पर तवक्कल करता हूं। ऐ अल्लाह मैं आप की पनाह चाहता हूं इससे कि मैं गुमराह हूं या गुमराह किया जाऊँ या फिसल जाऊँ या फिसलाया जाऊँ या जुल्म करूँ या मज़लूम बनूं या जेहालत का काम करूँ या मेरे साथ जेहालत व नादानी का मामला किया जाये।"

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया कि जो अपने घर में नमाज़ के लिए निकले और यह दुआ करे :—

اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَسْاَلُكَ بِحَقِّ السَّائِلِيْنَ عَلَيْكَ. وَبِحَقِّ مَمْشَايَ هٰذَا اِلَيْكَ. فَاِنِّيْ
لَمْ اَخْرُجْ بَطَرًا وَّلَا اَشَرًا وَّلَا رِيَاءً وَّلَا سُمْعَةً. وَاِنَّمَا خَرَجْتُ اِتِّقَاءَ
سَخَطِكَ وَابْتِغَاءَ مَرْضَاتِكَ، اَسْاَلُكَ اَنْ تُعِيْذَنِيْ مِنَ النَّارِ. وَاَنْ تَغْفِرَ لِيْ
ذُنُوْبِيْ، فَاِنَّهٗ لَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اَنْتَ

"ऐ अल्लाह आपके दर के भिखारियों के तुफ़ैल और आपकी तरफ़ इस चलने के तुफ़ैल में आप से सवाल करता हूं। न मैं इतराता और अकड़ता निकलता हूं न रिया कारी और शोहरत के लिए, बल्कि आपके ग़ज़ब व नाराज़गी के ख़ौफ़ और आप की रज़ा और ख़ुशनूदी की तलब में निकला हूं। मेरा सवाल है कि आप मुझे आग से नजात

दे दीजिये और मेरे गुनाह माफ़ फ़रमा दीजिए। आप के सिवा कोई गुनाह माफ़ करने वाला नहीं।"

तो अल्लाह तआला सत्तर हज़ार फ़रिश्तों को लगा देते हैं, जो उसके लिए मग़फ़िरत की दुआ करते हैं, और खुदा तआला बज़ात खुद उसकी तरफ़ मुतवज्जे हो जाते हैं। यहां तक कि वह नमाज़ से फ़ारिग़ हो जाये। अल्लाह के रसूल स० का इरशाद है कि जब तुम में से कोई शख़्स मस्जिद में दाख़िल हो तो नबी स० पर दरूद व सलाम भेजे और फिर कहे :–

اَللّٰهُمَّ افْتَحْ لِيْ اَبْوَابَ رَحْمَتِكَ ۔

"ऐ अल्लाह। मेरे लिए रहमत के दरवाज़े खोल दे।"

और जब मस्जिद से निकले तो कहे :–

اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَسْأَلُكَ مِنْ فَضْلِكَ ۔

"ऐ अल्लाह मैं तुझ से तेरा फ़ज़ल चाहता हूं।"

जब सुबह होती तो आप फ़रमाते :–

اَللّٰهُمَّ بِكَ اَصْبَحْنَا وَبِكَ اَمْسَيْنَا ، وَبِكَ نَحْيَا وَبِكَ نَمُوْتُ ، وَاِلَيْكَ النُّشُوْرُ ۔

"ऐ अल्लाह आप ही से हमारी सुबह हुई और आप से हमारी शाम है आप ही से हमारी जिन्दगी है और आप ही से हमारी मौत, और आप ही की तरफ़ उठ कर जाना है।"

और यह भी फ़रमाते :–

أَصْبَحْنَا وَأَصْبَحَ الْمُلْكُ لِلّٰهِ، وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ، وَلَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهُ، لَا شَرِيكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ، وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ، رَبِّ أَسْأَلُكَ خَيْرَ مَا فِي هٰذَا الْيَوْمِ وَخَيْرَ مَا بَعْدَهُ، وَأَعُوذُ بِكَ مِنْ شَرِّ هٰذَا الْيَوْمِ وَشَرِّ مَا بَعْدَهُ، رَبِّ أَعُوذُ بِكَ مِنَ الْكَسَلِ، وَسُوْءِ الْكِبَرِ، رَبِّ أَعُوذُ بِكَ مِنْ عَذَابٍ فِي النَّارِ، وَعَذَابٍ فِي الْقَبْرِ.

"हमने और (ख़ुदा की इस) कायनात ने ख़ुदा के लिए सुबह की, और अल्लाह के अलावा माबूद कोई नहीं, जो वाहिद है, उसका कोई शरीक नहीं, उसी की हुकूमत है, उसी की तारीफ़ें,और वह हर चीज़ पर क़ादिर है। ऐ अल्लाह हम आप से उस दिन की भलाई के तालिब हैं, और उस दिन के शर और उसके बाद के शर से आप की पनाह चाहते हैं, ऐ रब, हम आप की पनाह चाहते हैं, काहिली से, और बुरे बुढ़ापे से, और आप की पनाह चाहते हैं दोज़ख़ के अज़ाब और क़ब्र के अज़ाब से।"

और जब शाम होती तो फ़रमाते :–

أَمْسَيْنَا وَأَمْسَى الْمُلْكُ لِلّٰهِ

"हमने और सारी कायनात ने ख़ुदा के लिए शाम किया।"
हज़रत अबूबक्र ने अर्ज़ किया कि मुझे ऐसे कलमात बता दीजिये

जिन्हें मैं सुबह शाम पढ़ा करूँ आपने फ़रमाया यह कहा करो :—

اَللّٰهُمَّ فَاطِرَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ، عَالِمَ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ، رَبَّ كُلِّ شَيْءٍ، وَمَلِيْكَهُ وَمَالِكَهُ، اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ، اَعُوْذُبِكَ مِنْ شَرِّ نَفْسِيْ، وَشَرِّ الشَّيْطَانِ وَشِرْكِهٖ، وَاَنْ اَقْتَرِفَ عَلٰى نَفْسِيْ سُوْءًا، اَوْ اَجُرَّهٗ اِلٰى مُسْلِمٍ۔

"ऐ अल्लाह, ऐ आसमान और ज़मीन के पैदा करने, ग़ैब व मौजूद का इल्म रखने वाले, हर चीज़ के पालनहार आक़ा व मालिक, मैं गवाही देता हूँ कि आप के सिवा कोई माबूद नहीं। मैं अपने नफ़्स के शर और शैतान के शर और उसके शिर्क और इससे पहले कि मैं अपने ख़िलाफ़ कोई बुराई करूँ, या किसी मुसलमान के साथ बुराई करूँ, आप की पनाह चाहता हूँ।"

और फ़रमाया कि जब सुबह हो तो कहा करो :—

اَصْبَحْنَا وَاَصْبَحَ الْمُلْكُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ، اَللّٰهُمَّ اِنِّيْ اَسْاَلُكَ خَيْرَ هٰذَا الْيَوْمِ، فَتْحَهٗ وَنَصْرَهٗ، وَنُوْرَهٗ وَبَرَكَتَهٗ، وَهِدَايَتَهٗ، وَاَعُوْذُبِكَ مِنْ شَرِّ مَا فِيْهِ وَشَرِّ مَا بَعْدَهٗ۔

"हमने और सारी कायनात ने अल्लाह के लिए जो सारे जहानों का रब है सुबह की। ऐ अल्लाह मैं आप से इस दिन की ख़ैर व फ़तेह नुसरत, नूर व बरकत और हिदायत माँगता हूँ, और इस दिन के शर से और उसके बाद के शर से आप की पनाह माँगता हूँ।"

और जब शाम हो तो इसी तरह अस्बहना व अस्बहा के बजाय अम्सैना व अम्सा कह कर कहा करो।

आपने अपनी चहेती बेटी हज़रत फ़ातमा रज़ी० से फ़रमाया तुम्हें इस में क्या दिक़्क़त है कि तुम सुबह व शाम यूँ कह लिया करो :—

يَا حَيُّ يَا قَيُّومُ، بِكَ أَسْتَغِيثُ، فَأَصْلِحْ لِيْ شَأْنِيْ، وَلَا تَكِلْنِيْ إِلَىٰ نَفْسِيْ طَرْفَةَ عَيْنٍ.

"ऐ ज़िन्दा और संभालने वाले, तेरी रहमत से फ़रियाद करता हूँ, मेरी सारी हालत दुरूस्त कर दे और मुझे एक पल के लिए मेरे नफ्स के हवाले न कर।"

और फ़रमाया कि इस्तेग़फ़ार की दुआओं में सब से आला दुआ यह है कि बन्दा यूँ कहे :—

اَللّٰهُمَّ أَنْتَ رَبِّيْ لَا إِلٰهَ إِلَّا أَنْتَ، خَلَقْتَنِيْ وَأَنَا عَبْدُكَ، وَأَنَا عَلٰى عَهْدِكَ وَوَعْدِكَ مَا اسْتَطَعْتُ، أَعُوْذُ بِكَ مِنْ شَرِّ مَا صَنَعْتُ، أَبُوْءُ لَكَ بِنِعْمَتِكَ عَلَيَّ، وَأَبُوْءُ بِذَنْبِيْ، فَاغْفِرْ لِيْ، فَإِنَّهُ لَا يَغْفِرُ الذُّنُوْبَ إِلَّا أَنْتَ.

"ऐ अल्लाह आप ही मेरे रब हैं, आप के अलावा कोई माबूद नहीं, आपने मुझ को पैदा किया, और मैं आपका बन्दा हूँ, और आपके वादे पर हस्बे कुदरत जमा हुआ हूँ, अपने करतूतों के शर से आप की पनाह चाहता हूं, आपके अपने ऊपर एहसानात का मोतरिफ़ हूँ, और अपने गुनाहों का इक़रारी हूं, सिर्फ़ आप ही मग़फ़ेरत फ़रमाने वाले हैं।"

जब कभी नया कपड़ा पहनते तो कहते :—

اَللّٰهُمَّ أَنْتَ كَسَوْتَنِيْهِ أَسْأَلُكَ خَيْرَهُ وَخَيْرَ مَا صُنِعَ لَهُ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ شَرِّهِ وَشَرِّ مَا صُنِعَ لَهُ.

"ऐ अल्लाह आपने मुझे यह (यहाँ उस कपड़े का नाम भी लेते) पहनाया। मैं आप से इसकी भलाई और जिस मक़सद से बनाया गया है उस की भलाई का तालिब हूँ, और इसके शर, और जिस मक़सद के लिए बनाया गया है, उसके शर से आप की पनाह माँगता हूं।"

एक रवायत में है कि आप फ़रमाते थे कि जो शख्स कपड़ा पहते हुए यह कहे अल्लाह तआला उसके पिछले गुनाह माफ़ फ़रमा देता है :—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ كَسَانِیْ هٰذَا وَرَزَقَنِیْهِ مِنْ غَیْرِ حَوْلٍ مِّنِّیْ وَلَا قُوَّةٍ.

"उस अल्लाह की तमाम तारीफें हैं जिसने मुझे यह पहनाया और बग़ैर मेरी किसी ताक़त व क़ूवत के मुझे इनायत फ़रमाया।"

आपने उम्म ख़ालिद को जब नया कपड़ा अता फ़रमाया तो फ़रमाया :—

اَبْلِیْ وَاَخْلِقِیْ، ثُمَّ اَبْلِیْ وَاَخْلِقِیْ.

"बोसीदा करो, पुराना करो बोसीदा करो, पुराना करो।"

आपने फ़रमाया कि जब आदमी अपने घर के अन्दर दाख़िल हो तो कहे :—

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْاَلُكَ خَیْرَ الْمَوْلِجِ وَخَیْرَ الْمَخْرَجِ، بِسْمِ اللّٰهِ وَلَجْنَا وَعَلَی اللّٰهِ رَبِّنَا تَوَكَّلْنَا.

"ऐ अल्लाह। मैं आप से (घर में) दाख़िल और ख़ारिज होने की बेहतरी माँगता हूं, हम अल्लाह के नाम पर दाख़िल हुए और हमने अल्लाह पर जो हमारा रब है, तवक्कुल किया।"

बैतुल ख़ला[1] में दाख़िल होते वक़्त पढ़ते :—

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْخُبُثِ وَ الْخَبَائِثِ.

"ऐ अल्लाह, मैं गन्दगी और गन्दी चीज़ों से, आप की पनाह माँगता हूं।"

बाज़ हदीसों में है :—

اَلرِّجْسِ النَّجِسِ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ.

"गन्दे, नापाक, मर्दूद शैतान (से पनाह माँगता हूं)"

और जब बैतुल ख़ाल से निकलते तो कहते : —

غُفْرَانَكَ.

"तेरी मग़फेरत चाहता हूं।"

और यह भी कहा जाता है कि आप कहते : —

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ أَذْهَبَ عَنِّي الْأَذٰى وَ عَافَانِيْ.

"उस ख़ुदा की तमाम तारीफ़ें हैं जिसने मुझसे तकलीफ़ देह चीज़ दूर की और आफ़ियत बख़्शी।"

आपने फ़रमाया कि जो शख़्स अच्छी तरह वज़ू करे, फिर कहे : —

أَشْهَدُ أَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ، لَا شَرِيْكَ لَهٗ، وَ أَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَ رَسُوْلُهٗ.

"मैं गवाही देता हूं कि अल्ला के सिवा कोई माबूद नहीं वह वाहिद है उसका कोई शरीक नहीं, और गवाही देता हूं कि मोहम्मद स० उसके बन्दे और रसूल हैं।"

1. पाख़ाना (शौचालय)

उसके लिए जन्नत के आठों दरवाज़े खोल दिये जाते हैं जिस दरवाजे से चाहे दाख़िल हो। यह मुस्लिम शरीफ़ की रवायत है और इमाम तिरमिज़ी ने कल्म-ए-शहादत के बाद यह इज़ाफ़ा किया है :–

اَللّٰهُمَّ اجْعَلْنِيْ مِنَ التَّوَّابِيْنَ وَاجْعَلْنِيْ مِنَ الْمُتَطَهِّرِيْنَ.

"ऐ अल्लाह मुझे तौबा करने वालों और पाकी हासिल करने वालों में बना।"

आप को यह दुआ करते भी सुना गया है : –

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ ذَنْبِيْ، وَوَسِّعْ لِيْ فِيْ دَارِيْ، وَبَارِكْ لِيْ فِيْ رِزْقِيْ.

"ऐ अल्लाह मेरे गुनाह माफ़ फ़रमा, मेरे लिए उसअत फ़रमा और मेरे रिज़्क़ में बरकत अता फ़रमा।"

आपने अज़ान के वक्त सुनने वाले के लिए अज़ान ही के अल्फ़ाज़ दोहराने का हुक्म फ़रमाया है, सिवाय "हैया अलस्सला" और "हैय्या अलल्लफलाह" के, कि इसका जवाब "लाहौल वलाकूवता इल्ला बिल्लाह" है और अज़ान से फ़ारिग़ होने के बाद यह कहे : –

رَضِيْتُ بِاللّٰهِ رَبًّا، وَبِالْإِسْلَامِ دِيْنًا، وَبِمُحَمَّدٍ رَسُوْلًا.

"मैंने अल्लाह को रब माना, इस्लाम को अपना दीन माना, और मोहम्मद स० को रसूल माना।"

और फिर दरूद शरीफ़ पढ़कर यह दुआ करे : –

اَللّٰهُمَّ رَبَّ هٰذِهِ الدَّعْوَةِ التَّامَّةِ وَالصَّلَاةِ الْقَائِمَةِ، آتِ مُحَمَّدًا الْوَسِيْلَةَ وَالْفَضِيْلَةَ، وَابْعَثْهُ مَقَامًا مَحْمُوْدًا الَّذِيْ وَعَدْتَهٗ، إِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيْعَادَ.

"ऐ अल्लाह् जो इस मुकम्मल पुकार और क़ायम होने वाली नमाज़ का रब है, मोहम्मद स० को वसीला और फ़ज़ीलत अता फ़रमा, और आप को मक़ामे महमूद में पहुँचा जिस का आप ने वादा फ़रमाया है, बेशक आप वादा ख़िलाफ़ी नहीं करते।"

जब खाना शुरू करते तो कहते "बिस्मिल्लाह्" खाने से फ़राग़त पर कहते : –

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِىْ أَطْعَمَنَا وَسَقَانَا وَجَعَلَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ ۔

"उस अल्लाह् की तमाम तारीफ़ें जिसने हमें खिलाया पिलाया और अपना फ़रमाबरदार बनाया।"

बाज़ हदीसों में "वकफाना व अवाना" का इज़ाफ़ा भी है। हमारी जरूरतें पूरी की और हमको ठिकाना दिया जब दस्तरख्वान सामने से उठा लिया जाता तो कहते :

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ حَمْدًا كَثِيْرًا، طَيِّبًا مُبَارَكًا فِيْهِ، غَيْرَ مَكْفِيٍّ وَلَا مُوَدَّعٍ
وَلَا مُسْتَغْنًى عَنْهُ، رَبَّنَا عَزَّ وَجَلَّ

"अल्लाह् की बेशुमार और अच्छी तारीफ़ें हैं, जिस से किसी वक्त बेनियाज़ी नहीं, न उसको ख़ैरबाद किया जा सकता है न उससे इस्तेग़ना बरता जा सकता है, हमारा रब अज्ज़ व जल्ल।"

हज़रत साद बिन उबादा रज़ी० के यहाँ खाना खाने के बाद आपने यह दुआ फ़रमाई : –

أَفْطَرَ عِنْدَكُمُ الصَّائِمُوْنَ . وَأَكَلَ طَعَامَكُمُ الْأَبْرَارُ وَصَلَّتْ عَلَيْكُمُ الْمَلَائِكَةُ .

"रोज़ेदार आप के यहाँ रोज़ा खोलें, और नेक लोग आप के

यहाँ खायें और फ़रिश्ते आप के लिए रहमत की दुआ करें।"

जब नया चाँद देखते तो फ़रमाते : —

اَللّٰهُمَّ أَهِلَّهُ عَلَيْنَا بِالْأَمْنِ وَالْإِيْمَانِ، وَالسَّلَامَةِ وَالْإِسْلَامِ، رَبِّيْ وَرَبُّكَ اللّٰهُ

"ऐ अल्लाह यह चाँद हम पर अमन व ईमान और सलामती व इस्लाम के साथ निकाल, ऐ चाँद मेरा तेरा रब अल्लाह है।"

बाज़ हदीसों में यह इज़ाफ़ा है : —

وَالتَّوْفِيْقِ لِمَا تُحِبُّ وَتَرْضٰى، رَبُّنَا وَرَبُّكَ اللّٰهُ.

"और इसकी तौफ़ीक़ के साथ जिसको तू पसन्द करता है, और जिससे तू राज़ी है, हमारा और तेरा रब अल्लाह है।"

बाज़ हदीसों में आता है कि इसके बाद आप ने फ़रमाया : —

هِلَالُ رُشْدٍ وَخَيْرٍ، هِلَالُ رُشْدٍ وَخَيْرٍ.

"नेकी और भलाई का चाँद, नेकी और भलाई का चाँद,

जब सफ़र के लिए खड़े होते तो फ़रमाते : —

اَللّٰهُمَّ بِكَ انْتَشَرْتُ، وَإِلَيْكَ تَوَجَّهْتُ، وَبِكَ اعْتَصَمْتُ، وَعَلَيْكَ تَوَكَّلْتُ، اَللّٰهُمَّ أَنْتَ ثِقَتِيْ، وَأَنْتَ رَجَائِيْ، اَللّٰهُمَّ اكْفِنِيْ مَا أَهَمَّنِيْ وَمَا لَا أَهْتَمُّ لَهُ، وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّيْ، عَزَّ جَارُكَ وَجَلَّ ثَنَاؤُكَ، وَلَا إِلٰهَ غَيْرُكَ، اَللّٰهُمَّ زَوِّدْنِيْ التَّقْوٰى، وَاغْفِرْ لِيْ ذَنْبِيْ، وَوَجِّهْنِيْ لِلْخَيْرِ أَيْنَمَا تَوَجَّهْتُ.

"ऐ अल्लाह मैं तेरे नाम पर चला, और तेरी तरफ़ रुख़ किया और तेरा सहारा लिया और तुझ पर भरोसा किया, तू हमारा भरोसा और हमारी उम्मीद है, मेरी तरफ़ से वह काम करदे जिस की मुझे फ़िक्र है, और जिसकी फ़िक्र नहीं, और जिसको तू ही ज़्यादा जानता है, तेरा हमसाया इज़्ज़त से है, और तेरी तारीफ़ बहुत है, और तेरे सिवा कोई माबूद नहीं, ऐ अल्लाह मुझे तक़वा का ज़ादेराह इनायत फ़रमा, और मैं जिधर का रुख करूँ तू मुझे भलाई की तरफ़ ले जा।"

और जब सवारी पर सवार हो जाते तो तीन बार 'अल्लाहुअकबर' कह कर फिर पढ़ते : —

سُبْحَانَ الَّذِيْ سَخَّرَ لَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِنِيْنَ، وَإِنَّا إِلٰى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُوْنَ.

"पाक है वह ज़ात जिसने (इस सवारी को) हमारे क़ाबू में दिया और वह अगर उसकी क़ुदरत न होती। हमारे बस की बात न थी, और हम सब अपने रब की तरफ़ ही पलट कर जाने वाले हैं।"

फिर कहते : —

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَسْأَلُكَ فِيْ سَفَرِيْ هٰذَا الْبِرَّ وَالتَّقْوٰى، وَمِنَ الْعَمَلِ مَا تَرْضٰى، اَللّٰهُمَّ أَنْتَ الصَّاحِبُ فِي السَّفَرِ وَالْخَلِيْفَةُ فِي الْأَهْلِ، اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنْ وَعْثَاءِ السَّفَرِ وَكَآبَةِ الْمُنْقَلَبِ، هَوِّنْ عَلَيْنَا السَّفَرَ وَاطْوِ لَنَا الْبُعْدَ.

"ऐ अल्लाह हम इस्तेदुआ करते हैं तुझसे इस सफ़र में नेकूकारी और परहेज़गारी की और उन आमाल की जो तेरी रज़ा का सबब हों, ऐ अल्लाह बस तू ही हमारा रफ़ीक़ और साथी है इस सफ़र में और हमारे पीछे तू ही हमारे बाल बच्चों की देख भाल और निगरानी करने वाला है, ऐ अल्लाह मैं तेरी पनाह चाहता हूं। सफ़र की मशक्क़त और ज़हमत से और इससे कि सफ़र से लौट कर कोई बुरी बात पाऊँ, इस सफ़र को हम पर आसान करदे, और इसकी तवालत को अपनी कुदरत व रहमत से मुख्तसर कर दे।"

और जब वापस होते तो फ़रमाते :–

آئِبُوْنَ تَائِبُوْنَ ، عَابِدُوْنَ، لِرَبِّنَا حَامِدُوْنَ .

"हम वापस लौटने वाले हैं, तौबा करने वाले हैं, इबादत करने वाले हैं, अपने रब की हम्द व सताइश करने वाले हैं।"

5

आम अज़्कार और अल्लाह के रसूल स० की चन्द जामे दुआयें

यहाँ वह आम अज़्कार लिखे जाते हैं जिनकी सही अहादीस में कसरत से फ़ज़ीलत आई है। इस सिलसिले में इमाम अबूजकरिया मुहीउद्दीन बिन यहिआ जो इमाम नूवी के नाम से मशहूर हैं की "किताबुलअज़्कार" और मौलाना हकीम सैयद अब्दुल हई हसनी की "तलख़ीसुल अख़बार"[1] से मदद ली गई है।

अल्लाह के रसूल स० का इरशाद है :—

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَبِحَمْدِهٖ، سُبْحَانَ اللّٰهِ الْعَظِيْمِ

"दो कल्मे हैं, ज़बान पर हल्के फुल्के, और अल्लाह की मीज़ान में भारी भरकम, और रहमान (ख़ुदा) को बहुत पसन्द (एक) "सुबहान अल्लाहे व बेहम्देहि" और दूसरा "सुबहान अल्लाहिल अज़ीम"

हज़रत समरा बिन जुन्दुब बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :—

سُبْحَانَ اللّٰهِ، وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ، وَلَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ، وَاللّٰهُ اَكْبَرُ

1. यह किताब "तहज़ीबुल इख़लाक़" के नाम से छपी है।

"अल्लाह् तआला को चार कल्मे बहुत पसन्द हैं– "सुबहान अल्लाह" और "अल्हम्दुल्लिाहि" और "ला इलाह इल्लल्लाहि" और "अल्लाहु अकबर" इनमें से किसी से भी शुरू करो हर्ज नहीं।"

और आपने फ़रमाया :–

الطُّهُورُ شَطْرُ الْإِيمَانِ ، وَالْحَمْدُ لِلَّهِ تَمْلَأُ الْمِيزَانَ ، وَسُبْحَانَ اللَّهِ وَالْحَمْدُ لِلَّهِ تَمْلَآنِ ، أَوْ تَمْلَأُ مَا بَيْنَ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ ·

"पाकी निस्फ़ ईमान है, और अल्हम्दुलिल्लाह तराजू को भर देता है और सुबहानअल्लाह व अल्हम्दुलिल्लाह आसमानों व ज़मीन को भर-देते हैं।"

हज़रत अबू हुरैरा रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :–

سُبْحَانَ اللَّهِ وَالْحَمْدُ لِلَّهِ ، وَلَآ إِلٰهَ إِلَّا اللَّهُ ، وَاللَّهُ أَكْبَرُ.

"मैं सुबहान अल्लाह व अल्हम्दुलिल्लाह व ला इलाह इल्लल्लाह व अल्लाहुअकबर" कहूं यह मुझे उस सब से ज्यादा अज़ीज़ है जिस पर सूरज निकलता है (यानी पूरी दुनिया से ज्यादा अज़ीज़ है।"

हज़रत अबू अय्यूब अंसारी रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया जो शख्स यह कहे :–

لَآ إِلٰهَ إِلَّا اللَّهُ وَحْدَهُ ، لَا شَرِيكَ لَهُ ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ ، وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ.

"अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं, वह वाहिद है,

उसका कोई शरीक नहीं, उसी की हुकूमत है, और उसी की सब तारीफ़ें, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।''

गोया उसने इस्माईल अ० की औलाद में से चार गुलाम आज़ाद किये।

हज़रत अबू हुरैरा रज़ी० वयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया जो दिन भर में सौ बार यह कहे :—

لَا إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهُ، لَا شَرِيكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ، وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ.

''अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं, वह वाहिद है, उसका कोई शरीक नहीं उसी की हुकूमत है, और उसी की सब तारीफ़ें, और वह हर चीज़ पर क़ादिर है।''

तो यह सब दस गुलामों के आज़ाद करने के बराबर होगा और उसकी सौ नेकियाँ लिखी जायेंगी, सौ ख़तायें माफ़ की जायेंगी, और उस दिन की सुबह से शाम तक शैतान से उसकी हिफ़ाज़त होगी, और किसी शख्स का अमल इस के बराबर न होगा, हाँ जो इस से ज्यादा अमल करे।

और आपने फ़रमाया कि जो शख्स दिन भर में सौ बार ''सुबहान अल्लाह व बेहम्देहि'' पढ़े उस की ख़तायें चाहे समन्दर के झाग के बराबर ही क्यों न हों, सब झड़ जाती हैं।

हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ी० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल स० को फ़रमाते हुए सुना है कि सब से अफ़ज़ल जिक्र 'लाइलाह इल्लल्लाह' है।

हज़रत अबूज़र रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, ''तुम में से हर शख्स पर जिस्म के हर जोड़ के बदले सुबह एक सदक़ा वाजिब होता है, पस हर ''सुबहान अल्लाह''

एक सदक़ा है। हर "अल्हम्दुलिल्लाह" एक सदक़ा है। हर "लाइलाहा इल्लल्लाह" एक सदक़ा है। और हर "अल्लाहुअकबर" एक सदक़ा है। और "अमर बिलमारूफ़ व नहीं अनिल मुनकर" सदक़ा है और इन सब की तरफ़ से किफ़ायत करने वाली चाश्त की दो रकअते हैं।

हज़रत अबूमूसा अशअरी रज़ी० कहते हैं कि मुझ से अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, क्या मैं तुम को जन्नत के एक ख़ज़ाने का पता न दूँ। मैंने कहा, क्यों नहीं हुजूर, फ़रमाया, कहो, 'लाहौल वला क़ूवत : इल्ला बिल्लाह'

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ी० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने इरशाद फ़रमाया कि जो यह कहे :—

رَضِيْتُ بِاللّٰهِ رَبًّا، وَبِالْاِسْلَامِ دِيْنًا، وَبِمُحَمَّدٍ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَآلِهٖ
وَسَلَّمَ رَسُوْلًا۔

"मैंने अल्लाह को रब माना, इस्लाम को दीन माना, और मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को रसूल माना।"

उसके लिए जन्नत वाजिब हो जाती है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने इरशाद फ़रमाया कि इसरा की रात में मेरी मुलाक़ात हज़रत इब्राहीम अ० से हुई, तो उन्होंने कहा कि ऐ मोहम्मद स० अपनी उम्मत को सलाम कहना और यह बता देना कि जन्नत की मिट्टी बड़ी अच्छी और पानी बड़ा मीठा है और वह ख़ाली है, उसके पौदे "सुबहान अल्लाह" और "अल्हम्दुलिल्लाह" और "लाइलाहा इल्लल्लाह" और "अल्लाहुअकबर हैं।"

हज़रत अमरबिन अलआस रज़ी० कहते हैं कि उन्होंने अल्लाह के रसूल स० को फ़रमाते सुना :—

"जो मुझ पर एक बार दरुद पढ़ता है, अल्लाह तआला उस पर दस बार रहमतें नाज़िल फ़रमाते हैं।"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ी० नक़ल करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :—

"क़यामत के दिन मुझसे सबसे ज्यादा क़रीब वह शख्स होगा, जो मुझ पर सब से ज्यादा दरुद पढ़ता था।"

हज़रत अबू हुरैरा रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :—

"उस शख्स की नाक मिट्टी में मिल जाये (ज़लील व ख्वार हो) जिसके पास मेरा तज़किरा हो और वह मुझ पर दरुद न पढ़े।"

हजरत अबू हुरैरा रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया :—

"मेरी क़ब्र को जश्नगाह न बनाना, हाँ मुझ पर दरुद पढ़ो, तुम्हारा दरुद चाहे तुम कहीं भी हो मुझ तक पहुंचता है।"

हज़रत काब बिन अजरा रज़ी० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल स० बाहर तशरीफ़ लाये तो हमने अर्ज़ किया ऐ अल्लाह के रसूल आप पर सलाम का तरीक़ा तो हम को मालूम हो चुका, यह बतायें कि आप पर दरुद कैसे भेजें तो आपने फ़रमाया कि यूं कहो :—

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ، كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ، اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ، كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى إِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ إِبْرَاهِيْمَ، إِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ.

"ऐ अल्लाह रहमत नाज़िल फ़रमा। मोहम्मद स० पर और आले मोहम्मद स० पर जैसे रहमत नाज़िल फ़रमाई इब्राहीम और आले इब्राहीम पर बेशक तू तारीफ़ वाला और बुजुर्गी वाला है, ऐ अल्लाह बरकत नाज़िल फ़रमा मोहम्मद स० पर और आले मोहम्मद स० पर जैसे तूने बरकत नाज़िल फ़रमाई इब्राहीम और आले इब्राहीम पर, बेशक तू तारीफ़ वाला और बुजुर्गी वाला है।"

6

अल्लाह के रसूल और स० की चन्द जामेदुआयें[1]

हज़रत आयशा रज़ी० बयान करती हैं कि अल्लाह के रसूल स० जामे दुआयें पसन्द फ़रमाते थे और तवील दुआओं से गुरेज़ फ़रमाते थे :—

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَسْأَلُكَ مِنَ الْخَيْرِ كُلِّهٖ مَا عَلِمْتُ مِنْهُ وَمَا لَمْ أَعْلَمْ، وَأَعُوْذُ بِكَ
مِنَ الشَّرِّ كُلِّهٖ مَا عَلِمْتُ مِنْهُ وَمَا لَمْ أَعْلَمْ.

"ऐ अल्लाह मैं आप से हर ख़ैर का सायल हूं, जिसे मैं जानता हूं, और जिसे नहीं जानता। और आप की पनाह माँगता हूं हर शर से जिसे मैं जानता हूं और जिसे मैं नहीं जानता।"

हज़रत अनस बिन मालिक रज़ी० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल स० की ख़िदमत में लगा रहता था, और कसरत से आप को यह दुआ करते हुए सुनता था :—

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْهَمِّ وَالْحُزْنِ، وَالْعَجْزِ وَالْكَسَلِ، وَالْبُخْلِ
وَالْجُبْنِ، وَضَلَعِ الدَّيْنِ وَغَلَبَةِ الرِّجَالِ

---

1. अल्लामा इब्न क़ैयम की किताब "अलवाबिल सैइब" से मनकूल।

"ऐ मेरे अल्लाह मैं तेरी पनाह चाहता हूं, फ़िक्र से और ग़म से कम हिम्मती और काहिली व बुज़दिली और कंजूसी से और क़र्ज़ के वार से और लोगों के दबाव से।"

हज़रत आयशा रज़ी० बयान करती है कि अल्लाह के रसूल स० यह दुआ करते थे :—

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَسِيْحِ الدَّجَّالِ، وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ، اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْمَأْثَمِ وَالْمَغْرَمِ.

"ऐ अल्लाह मैं आपकी पनाह चाहता हुं, क़ब्र के अज़ाब से, और आपकी पनाह चाहता हूं दज्जाल के फ़ितने से, और आपकी पनाह चाहता हूं, मौत व जिन्दगी के फ़ितने से, और आपकी पनाह चाहता हूं, गुनाह से, और क़र्ज़ के बोझ से।"

किसी ने कहा कि आप क़र्ज़ के बोझ से बहुत पनाह माँगते हैं तो आपने फ़रमाया कि :—

"आदमी जब कर्ज़ के बोझ से लद जाता है, तो बात करता है तो झूठ बोलता है, वादा करता है तो उसके ख़िलाफ़ करता है।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० की दुआओं में से एक दुआ यह थी :—"

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَعُوْذُ بِكَ مِنْ زَوَالِ نِعْمَتِكَ، وَتَحَوُّلِ عَافِيَتِكَ، وَمِنْ فُجَاءَةِ نِقْمَتِكَ، وَمِنْ جَمِيْعِ سَخَطِكَ.

"ऐ अल्लाह मैं आप के नेमत के ख़त्म हो जाने आप की

आफ़ियत के छिन जाने, आप की तमाम नाराज़ियों से आप की पनाह चाहता हूं।"

हजरत आयशा रजी० कहती हैं कि मैंने कहा ऐ अल्लाह के रसूल स०-अगर मुझे लैलतुल क़द्र नसीब हो जाये, तो मैं क्या दुआ करूँ। और आप ने फ़रमाया, यह कहो :—

اَللّٰهُمَّ إِنَّكَ عَفُوٌّ تُحِبُّ الْعَفْوَ فَاعْفُ عَنِّيْ.

"ऐ अल्लाह तू बहुत माफ़ करने वाला है, माफ़ करने को पसन्द करता है तू मुझे माफ़ कर।"

हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया—"अल्लाह तआला को सबसे ज्यादा जिस चीज का माँगना पसन्द है वह "आफ़ियत है।"

अबूमालिक अशजई रजी० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल स० मुसलमान होने वाले को यह कहने की तलक़ीन फ़रमाते थे :—

اَللّٰهُمَّ اهْدِنِيْ وَارْزُقْنِيْ وَعَافِنِيْ وَارْحَمْنِيْ.

"ऐ अल्लाह मुझे हिदायत और रिज़्क़ दे और आफ़ियत नसीब फ़रमा, और मुझ पर रहम फ़रमा।"

बुसर बिन अरताल रजी० कहते हैं कि मैंने आप स० को यह दुआ करते हुए सुना है :—

اَللّٰهُمَّ أَحْسِنْ عَاقِبَتَنَا فِي الْأُمُوْرِ كُلِّهَا، وَأَجِرْنَا مِنْ خِزْيِ الدُّنْيَا وَعَذَابِ الْآخِرَةِ.

"ऐ अल्लाह तमाम कामों में हमारा अंजाम बख़ैर फ़रमा और दुनिया की रुसवाई और आख़िरत के अजाब से पनाह नसीब फ़रमा।"

हज़रत अबू हुरैरा रज़ी० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया– "क्या तुम यह पसन्द करते हो कि भरपूर दुआ करो?" सहाबा ने अर्ज़ किया कि हाँ या रसुलुल्लाह। आपने फ़रमाया कहो:–

اَللّٰهُمَّ أَعِنَّا عَلٰى ذِكْرِكَ وَشُكْرِكَ وَحُسْنِ عِبَادَتِكَ .

"ऐ अल्लाह अपनी याद, अपने शुक्र और अपनी अच्छी इबादत की हमें ताक़त अता फ़रमा।"

और हज़रत मआज़ रज़ी० को यह वसीयत फ़रमाई कि हर नमाज़ के बाद यह कल्मात कह लिया करें आपने सहाबा को यह दुआ भी तालीम फ़रमाई :–

اَللّٰهُمَّ إِنِّيْ أَسْأَلُكَ الطَّيِّبَاتِ، وَفِعْلَ الْخَيْرَاتِ، وَتَرْكَ الْمُنْكَرَاتِ، وَحُبَّ
الْمَسَاكِيْنِ، وَأَنْ تَتُوْبَ عَلَيَّ وَتَغْفِرَ لِيْ وَتَرْحَمَنِيْ، وَإِذَا أَرَدْتَ فِيْ
خَلْقِكَ فِتْنَةً فَنَجِّنِيْ إِلَيْكَ مِنْهَا غَيْرَ مَفْتُوْنٍ، اَللّٰهُمَّ وَأَسْأَلُكَ حُبَّكَ وَحُبَّ
مَنْ يُّحِبُّكَ، وَحُبَّ عَمَلٍ يُّبَلِّغُنِيْ إِلٰى حُبِّكَ .

"ऐ अल्लाह हम आप से अच्छी चीजों, और नेकियों के करने और बुराइयों के छोड़ने और मिसकीनों से मुहब्बत करने का सवाल करते हैं, और इसका कि आप मेरी तौबा क़बूल फ़रमाइये, और मेरे साथ मग़फ़िरत और रहम का मामला कीजिये, और जब आप अपनी मख़लूक़ के बारे में किसी फ़ितने का इरादा फ़रमायें, तो उससे अपनी तरफ़ हमें इस तरह निकाल लीजिये कि हम फ़ितना में न फँसे, और ऐ अल्लाह हम आपकी मुहब्बत, आपसे मुहब्बत करने वाले की मुहब्बत और उस अमल की मुहब्बत माँगते हैं, जो आपकी मुहब्बत तक ले जाये।"

हज़रत आयशा रज़ी०वयान करती हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने उनको यह दुआ करने का हुक्म दिया था।

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْاَلُكَ مِنَ الْخَيْرِ كُلِّهٖ، عَاجِلِهٖ وَآجِلِهٖ، مَا عَلِمْتُ مِنْهُ وَمَا لَمْ
اَعْلَمْ، وَاَعُوْذُ بِكَ مِنَ الشَّرِّ كُلِّهٖ، عَاجِلِهٖ وَآجِلِهٖ، مَا عَلِمْتُ مِنْهُ وَمَا لَمْ اَعْلَمْ،
وَ اَسْاَلُكَ الْجَنَّةَ وَمَا قَرَّبَ اِلَيْهَا مِنْ قَوْلٍ اَوْ عَمَلٍ، وَاَعُوْذُ بِكَ مِنَ النَّارِ
وَ مَا قَرَّبَ اِلَيْهَا مِنْ قَوْلٍ اَوْ عَمَلٍ، وَ اَسْاَلُكَ مِنْ خَيْرِ مَا سَاَلَكَ
عَبْدُكَ وَرَسُوْلُكَ مُحَمَّدٌ، وَ اَسْاَلُكَ مَا قَضَيْتَ لِیْ مِنْ اَمْرٍ اَنْ تَجْعَلَ
عَاقِبَتَهٗ رُشْدًا.

"ऐ अल्लाह हम आप से तमाम के तमाम ख़ैर के तालिव हैं, जो जल्दी मिले और जो देर से मिले, जो हम जानते हैं, और जो नहीं जानते और आपकी पनाह चाहते हैं हर शर मे जल्दी आने वाले और देर से आने वाले और जो हम जानते हैं, और जो नहीं जानते, और आपसे जन्नत के तालिव हैं और उस कौल व अमल के जो जन्नत से करीव करे, और आपकी पनाह चाहते हैं आग से और उस कौल व अमल से जो उसके क़रीव ले जाये, और आपसे इसी ख़ैर में से हम (भी) माँगते हैं, जिसको आपके वन्दे और रसूल मोहम्मद (स०) माँगते हैं, और आप से यह दरख्वास्त करते हैं, कि आप हमारे लिए जो फ़ैसला फ़रमायें उसका अंजाम वेहतर फ़रमायें।"

हज़रत अब्दुल्लाह विन मसऊद रज़ी० अल्लाह के रसूल स० की यह दुआ भी नक़ल करते हैं :—

اَللّٰهُمَّ إِنَّا نَسْأَلُكَ مُوْجِبَاتِ رَحْمَتِكَ، وَعَزَائِمَ مَغْفِرَتِكَ، وَالسَّلَامَةَ مِنْ كُلِّ إِثْمٍ، وَالْغَنِيْمَةَ مِنْ كُلِّ بِرٍّ، وَالْفَوْزَ بِالْجَنَّةِ، وَالنَّجَاةَ مِنَ النَّارِ.

"ऐ अल्लाह हम आपसे आपकी रह्मत व मग़फ़ीरत के असबाब और हर गुनाह से हिफ़ाजत, और हर नेकी के हुसूल, और जन्नत से सरफ़राज़ी, और आग से ख़लासी के तालिब हैं।"

7

खुदा की राह में जिहाद[1]

अल्लाह के रसूल स० की दावत और खुदा तआला की सही व कामिल मारफ़त सिर्फ सही अक़ीदा और ईमान व इबादात ही पर मुनहसिर न थी बल्कि इन सब के साथ जिहाद भी आप की दावत का एक हिस्सा और आप का पसन्दीदा अमल था। अल्लाह तआला का इरशाद है : –

तर्जुमा: "वही तो है जिसने अपने पैग़म्बर को हिदायत और दीन हक़ देकर भेजा, ताकि इस दीन को दुनिया के तमाम दीनों पर ग़ालिब करे, अगरचे काफ़िर नाखुश ही हों।"

(सूरः तौबा – 33, सूरः सफ़ – 9)

"और उन लोगों से लड़ते रहो यहां तक की फ़ितना बाक़ी न रहे, और दीन सब खुदा ही का हो जाय।"

(सूरः अनफ़ाल –39)

अल्लामा इब्न क़ैय्यिम "ज़ादुलमआद" में लिखते हैं :–

जिहाद चूंकि इस्लाम की इमारत का बलन्द कँगूरा है, और जन्नत में मुजाहिदीन का उसी तरह ऊँचा मुक़ाम है जिस तरह दुनिया में उनको बलन्दी हासिल है इसलिए अल्लाह के रसूल स० उसके

1. मज़हबी लड़ाई

सबसे ऊँचे दर्जे पर क़ायमथे। आपने खुदा की राह में अपने दिल व जान, दावत व तबलीग़ और तीर व तलवार से जेहाद का हक़ अदा कर दिखाया। आप हर वक्त तन मन से जेहाद के लिए तैयार रहते। इसी लिए दुनिया में आप सबसे बलन्द और खुदा के यहाँ सबसे ज्यादा महबूब थे। क्योंकि ख़ारजी जेहाद दाख़िली जेहाद की एक शाखं है। जैसा कि अल्लाह के रसूल स० ने फरमाया "मुहाजिर वह है जो अल्लाह तआला की मना की हुई चीजों को छोड़ दे" इस-लिए नफ़स के साथ जेहाद ख़ारजी जेहाद पर मुकद्दम और उसकी बुनियाद है।"

जेहाद की चार किस्में हैं – (1) नफ़स से जेहाद। (2) शैतान से जेहाद (3) कुफ़्फ़ार से जेहाद (4) मुनाफ़िक़ीन से जेहाद और चारों किस्म के जेहाद के अलग अलग दर्जे हैं हदीस में आया है :–

तर्जुमा: "जो इस हाल में मर जाये कि उसने जेहाद न किया हो, और न जेहाद की तमन्ना किया हो, वह निफ़ाक़ के एक हिस्से पर मरेगा।"

अल्लाह के नजदीक सब से कामिल वह शख्स है जो जेहाद के तमाम दर्जात का जामे हो। अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के महबूब तरीन बन्दे थे। क्योंकि आपने जेहाद के तमाम अक़साम व मरातिब की तकमील फ़रमाई। और खुदा की राह में जेहाद का हक़ अदा कर दिया। और बेसत की इब्तेदा से वफ़ात तक जेहाद में मशगूल रहे। दावत व तबलीग़ में मसरूफ़ रहे और बातिल[1] ताकतों से लोहा लेते रहे। रात दिन खुफ़िया व एलानिया लोगों को अल्लाह की तरफ़ बुलाते थे। आप और आप के साथी सख्त तकलीफ़ें झेलते थे। यहाँ तक कि आप के कुछ साहाबा हब्शा की तरफ़ हिजरत कर गये। फिर वह वक्त भी आया जब आप खुद और आपके साथी मदीना की तरफ़ हिजरत कर

---

1. झूठी

गये। मदीना में जब पैर जम गये और अल्लाह ने अपनी ख़ास मदद और मोमिन बन्दों के ज़रिये आप की नुसरत फ़रमाई, और उनके दिल आप में जोड़ दिये। अन्सार और लश्करे इस्लाम ने आप की पुश्त पनाही की, अपनी जानें आप पर निसार कर दीं, और आपकी मुहब्बत को बाप दादों बेटों पोतों, और शौहरों व बीवियों पर तर-जीह दी और आप उन्हें उनकी अपनी ज़ात से ज्यादा महबूब हो गये उस वक्त अरबों, और यहूदियों ने मिलकर दुश्मनी की ठान ली और वह एक जुट होकर मुसलमानों के मुकाबले में आ गये। इधर अल्लाह तआला मुसलमानों को सब्र और दरगुज़र का हुक्म फ़रमाता रहा। यहाँ तक कि उनका गुट मज़बूत हो गया और उनकी एक ताकत हो गयी। इस पर अल्लाह ने क़िताल की इजाज़त दी लेकिन फ़र्ज़ नहीं किया और फ़रमाया :—

तर्जुमा : "जिन मुसलमानों से (अनायास) लड़ाई की जाती है, उनको इजाज़त है कि वह भी लड़ें क्योंकि उन पर ज़ुल्म हो रहा है। और ख़ुदा उनकी मदद करेगा वह यक़ीनन उनकी मदद पर क़ादिर है।" (सूर : हज-39)

फिर उन लोगों से जँग करना फ़र्ज़ कर दिया गया जो जँग करें, और जो जँग न करें उनसे जँग करना फ़र्ज़ नहीं क़रार दिया गया। इरशाद फ़रमाया :—

तर्जुमा : "और जो लोग तुम से लड़ते हैं, तुम भी ख़ुदा की राह में उनसे लड़ो" (सूर : बक़र : 190)

इसके बाद तमाम मुशरिकीन से "क़िताल" फ़र्ज़ क़रार दे दिया गया और इरशाद हुआ :—

तर्जुमा :— "और उन लोगों से लड़ते रहो, यहाँ तक कि फ़ितना बाकी न रहे, और दीन सब ख़ुदा ही का हो जाये"। (सूर : अनफ़ाल—39)

जिहाद की फ़ज़ीलत और आदाब

सही रवायत में आता है कि आप ने फ़रमाया, "अगर मुझे अपनी उम्मत पर मशक्क़त का ख़्याल न होता तो मैं किसी लशकर से पीछे न रहता, और मेरी यह तमन्ना है कि मैं ख़ुदा के रास्ते में शहीद किया जाऊँ, फिर ज़िन्दा किया जाऊँ, फिर शहीद किया जाऊँ, फिर ज़िन्दा किया जाऊँ, फिर शहीद किया जाऊँ।"

और फ़रमाया कि, अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने वाले की मिसाल ऐसी है जैसे कोई रोज़ेदार ख़ुदा के हुज़ूर खड़ा नमाज़ पढ़ रहा है और ख़ुदा की आयतें तिलावत कर रहा है, न रोज़ा से थकता है, न नमाज़ से। यहाँ तक कि ख़ुदा की राह में जिहाद करने वाला (मैदान से) वापस आ जाये" और फ़रमाया "ख़ुदा की राह में एक सुबह या एक शाम को निकलना दुनिया व माफ़ीहा से बेहतर है" और फ़रमाया, "जन्नत के दरवाज़े तलवार के सायों के नीचे हैं" और फ़रमाया, "ख़ुदा की राह में जिसके क़दम गर्द आलूद हो जायें, वह आग पर हराम हो जायेंगे।" और फ़रमाया "ख़ुदा की राह का गुबार जहन्नम का धुवाँ किसी बन्दे के चेहरे पर जमा नहीं होगा।" और फ़रमाया, ख़ुदा की राह में मोर्चा पर जमे रहना दुनिया और दुनिया में जो कुछ है, सब से बेहतर है।" और जब जंग में सख़्त रन पड़ता तो लोग अल्लाह के रसूल स० का सहारा लेते थे, और आप दुश्मन से सब से ज़्यादा क़रीब होते थे।

आप औरतों और बच्चों पर हाथ उठाने से मना फ़रमाते थे और जब कोई लशकर भेजते तो लशकर वालों को ख़ुदा के ख़ौफ़ व तक़वा की वसीयत फ़रमाते और फ़रमाते, "ख़ुदा के नाम से ख़ुदा की राह में चल पड़ो," अल्लाह के मुनकिरों से जँग करो, और "मुसला"[1] न करना, गद्दारी व ख़्यानत न करना, किसी बच्चे को क़त्ल न करना"। और जब किसी फ़ौज व लशकर का किसी को

---

1. ज़ख्मी या मक़तूल के अंग काटना या उसके जिस्म के टकड़े-टुकड़े करना।

अमीर बनाते तो और वसीयतों के साथ एक वसीयत यह भी होती कि "अपने मुशरिक दुश्मन का सामना हो तो उन्हें तीन चीज़ों की दावत दो, उनमें से जो भी क़बूल कर लें तो तुम भी उसे क़बूल कर लो और अपने हाथ उनसे रोकलो फिर उनको अपने इलाक़े से दारूल मुहाजिरीन मुन्तक़िल होने की दावत दो और उनको यह बता दो कि अगर वह वहाँ मुन्तक़िल हो गये तो उनके भी वही हुकूक़ होंगे जो मुहाजिरीन के हैं और उनकी जिम्मेदारियाँ भी मुशतरक होंगी, और अगर वह इसके लिए तैयार न हों तो बता दो कि उनका मामला बादिया (बियाबान) में रहने वाले मुसलमानों का सा होगा। ख़ुदा के वह अहकाम जो तमाम मोमिनों से मुतअल्लिक हैं उन से भी मुतअल्लिक़ रहेंगे। और माले ग़नीमत में से सिर्फ़ उसी वक्त उनका हिस्सा होगा जब वह मुसलमानों के साथ मिलकर जिहाद करेंगे। और अगर वह इसके लिए भी तैयार न हों तो उनसे "जजिया" तलब करो। अगर इसके लिए तैयार हो जायें तो बस अब उनसे जँग न करो, और अगर तैयार न हों तो अल्लाह के भरोसे पर उनसे जँग करो"।

आप जँग में लूटमार और मुसला करने से मना फ़रमाते थे। और मालेग़नीमत में ख्यानत से बहुत सख्ती से रोकते थे। आप यह भी फ़रमाते थे "मुसलमानों का वादा एक ही है। कोई मामूली से मामूली मुसलमान भी किसी से वादा कर सकता है"। और फ़रमाते कि जो लोग अहेद तोड़ देते हैं, दुश्मन को उन पर ग़ल्बा हासिल हो जाता है।

अल्लाह के रसूल स० के ग़ज़वात की तादाद सत्ताइस है और दूसरी जँगी कारवाइयों की तादाद जिनमें आप ख़ुद शरीक नहीं थे, साठ तक पहुँचती है। इन सब में बाक़ायदा जँग की नौबत नहीं आई और इन तमाम ग़ज़वात व सराया में जो आप के हुक्म से भेजे गये जितना ख़ून बहाया गया दुनिया की जंगों की पूरी तारीख़ में हमें इससे कम कोई तादाद नज़र नहीं आती। इन तमाम ग़ज़वात के

मक़तूलीन की तादाद एक हज़ार अट्ठारह से ज्यादा नहीं जिसमें दोनों फ़रीक़ शामिल हैं लेकिन इस क़लील[1] तादाद ने ख़ूने आदम को जिस अरज़ानी से और इंसानियत को जिस बेइज्ज़ती और बेआबरूई से बचाया उसका पूरा जायज़ा लेना नामुमकिन है। इसके नतीजे में अरब और उसके आस पास अम्न व अमान की ऐसी फ़िज़ा क़ायम हो गयी कि एक मुसाफ़िर ख़ातून हीरा (ईरान का एक शहर) से चलती और काबा का तवाफ़ करके वापस जाती और अल्लाह के सिवा उसको किसी का डर न होता। इसके साथ साथ जेहाद इस्लाम की इशाअत, ख़ुदा के बन्दों को बन्दों की बन्दगी से निकाल कर एक ख़ुदा की बन्दगी, मज़ाहिब के ज़ुल्म से इस्लाम के इंसाफ के साये, और दुनिया की तँगियों से निकाल कर लामहदूद वसअतों में मुन्तक़िल करने का ज़रिया बनता है।

हदीस में आता है कि "जेहाद मेरी बेसत से लेकर उस वक्त तक क़ायम रहेगा कि जब मेरी उम्मत का आख़िरी गिरोह दज्जाल से जेहाद करेगा, जेहाद को ज़ालिमों का ज़ुल्म ख़त्म कर सकता है न आदिलों का अदल।" और एक हदीस में आता है कि "जो अल्लाह तआला से इस हाल में मिलेगा कि उस पर जेहाद का कोई असर न होगा, उसकी अल्लाह से मुलाक़ात इस हाल में होगी कि (उसका जिस्म) दाग़दार होगा।" एक हदीस में है, "जो इस हाल में मर जाये कि उसने जेहाद न किया हो और न जेहाद का ख्याल दिल में आया हो, वह निफ़ाक़ के एक हिस्से के साथ मरेगा।"

जेहाद—जब अपने शरायत, अहकाम व आदाब के साथ हो बड़े ख़ैर व बरकत का सरचश्मा, दुनिया के लिए सआदत और पूरी इंसानियत के लिए रहमत का ज़रिया है। और जब से इसका सिल-सिला मौक़ूफ़ हो गया और उसकी जगह क़ौम व वतन के नाम पर माददी औ रसियासी जँगों और उन दाख़िली इनक़िलाबात ने ले ली

1. थोड़ी।

जिनका मक़सद न अल्लाह की रज़ा हासिल करना था न अल्लाह के परचम को ऊँचा करना, न इंसानियत को जाहिलियत और नफ़स परस्ती के शिकंजे से निकालना, उस वक्त से पूरी दुनिया जेहाद के फ़वायद व बरकात से महरूम हो गई मुसलमान सारी दुनिया में रुसुवा हो गये। और अपनी क़दर व क़ीमत और अपना वज़न खो बैठे।[1] और नबी स० की यह पेशीनगोई हरफ़ ब हरफ़ सही साबित हुई।

"क़रीब है कि क़ौमें तुम पर इस तरह टूट पड़ें जिस तरह अपने प्याले पर खाने वाले टूटते हैं। सहाबा ने अर्ज़ किया" या रसूलुल्लाह क्या हमारी तादाद उस वक्त कम होगी? आपने फ़रमाया "नहीं तुम्हारी तादाद बड़ी होगी, लेकिन तुम सैलाब के झाग की तरह झाग बन जाओगे और ख़ुदा तुम्हारे दुश्मन के दिल से तुम्हारी हैबत और ख़ौफ निकाल देगा और तुम्हारे दिलों में "वहेम" डाल देगा। किसी ने अर्ज़ किया, "हुजूर, "वहेम" से क्या मुराद है? आपने फ़रमाया, "दुनिया की मुहब्बत और मौत से नफ़रत।"

और सही हदीस में आप से यह भी साबित है कि आपने फ़रमाया, "जब तुम सूद के साथ ख़रीद व फ़रोख्त करने लगोगे, और गायों की दुम पकड़े रहोगे और खेती बाड़ी में मगन रहोगे, और जेहाद छोड़ दोगे, तो ख़ुदा तआला तुम पर ऐसी ज़िल्लत मुसल्लत कर देगा, जिसको उस वक्त तक न उठायेगा, जब तक तुम दीन की तरफ़ वापस न आ जाओगे।"

जेहाद सिर्फ़ जंग व क़िताल ही पर मुनहसिर नहीं है बल्कि वह कोशिश जो अल्लाह के परचम को ऊँचा करने और दीन के ग़ल्बा

1. इसका नमूना बेरुत का वह अल्मिया है जो अगस्त-सिम्बर 1982 ई० में पेश आया और जिसमें यहूदियों और लेबनानी ईसाइयों (फ़िलांजिस्ट) के हाथों फ़िलस्तीनियों का क़त्ले आम, आबरुरेज़ी और सफ़्फ़ाकी व दरिन्दगी के वह नमूने सामने आये जिसमें आदमख़ोर क़बायल और खूंखार जानवर भी शर्मायें।

ख़ातिर की जाये जिहाद है। हदीस पाक में आता है, सबसे अफ़ज़ल जिहाद यह है कि जालिम बादशाह या जालिम हाकिम के सामने हक़ व इंसाफ की बात कही जाये। इसी तरह मुसलमानों के लिए बिल्कुल इसकी गुँजाइश नहीं है कि अपने उन दीनी भाईयों और कमजोर मज़लूम मुसलमानों के हालात से चश्म पोशी अख्तेयार कर लें और ग़फलत बरतें जो दुनिया के किसी कोने में जुल्म व बरबरियत, जिल्लत व मज़ालिम के निशाना बनाये जा रहे हों और उनका कुसूर सिर्फ इतना हो कि वह मुसलमान हैं। मुसलमानों की यह जिम्मेदारी है कि इस सूरतेहाल को तबदील करने की हर मुमकिन कोशिश करें और जुल्म के पहाड़ तोड़ने वाले उन मुजरिमों को कम से कम अपनी नापसन्दीदगी, नफ़रत और शदीद बेचैनी का एहसास दिलायें। क्योंकि सही हदीस में आप का इरशाद है :–

"तुम मोमिनों को अपनी आपस की शफ़क़त, उल्फ़त, मुहब्बत व हमदर्दी में एक जिस्म की तरह पाओगे कि जिसका एक हिस्सा अगर तकलीफ में मुब्तेला हो जाये तो सारे हिस्से, तकलीफ़ और बुख़ार में उसका साथ देते हैं।" और एक दूसरी हदीस में आता है, "मुसलमानों के हालात की जो शख्स फ़िक्र न करें, यह उनमें से नहीं।"

8

तहज़ीब इख़्लाक़ और नफ़स की पाकी

अल्लाह् तआला ने बेसते मोहम्मदी के बुनियादी मक़ासिद कुरआन पाक की कई आयतों में ज़िक्र फ़रमाये हैं। इरशाद होता है, "जिस तरह हमने तुम्हीं में से एक रसूल भेजे हैं, जो तुमको हमारी आयतें पढ़ पढ़ कर सुनाते और तुम्हें पाक बनाते और किताब और दानाई सिखाते हैं और ऐसी बातें बताते हैं, जो तुम पहले नहीं जानते थे।" (सूर: बक़्र : 151) और दूसरी जगह इरशाद होता है, ख़ुदा ने मोमिनों पर बड़ा एहसान किया है कि उनमें उन्हीं में से एक पैग़म्बर भेजे जो उनको ख़ुदा की आयतें पढ़ पढ़ कर सुनाते और उनको पाक करते और ख़ुदा की किताब और दानाई सिखाते हैं और पहले तो यह लोग बड़ी गुमराही में थे।" (सूर : आले इमरान : 164) एक और जगह इरशाद होता है, "वही तो है जिसने अनपढ़ों में उन्हीं में से पैग़म्बर बना कर भेजा जो उनके सामने उसकी आयतें पढ़ते और उनको पाक करते और ख़ुदा की किताब और दानाई सिखाते हैं, और इससे पहले तो यह लोग सरीह् गुमराही में थे," (सूर : जुमा : 2)

तहज़ीब, इख़लाक़ और नफ़स की पाकी अल्लाह् के रसूल स० की बेसत का एक अहम मक़सद है। कुरआन का तर्ज़ बयान यह बताता है कि हिकमत से मुराद बलन्द इख़लाक़ और इस्लामी आदाब

ही हैं। कुरआन में आता है, "(ऐ पैग़म्बर) यह उन (हिदायतों) में से हैं जो ख़ुदा ने दानाई की बातें तुम्हारी तरफ़ वही की हैं। (सूर : असरा 39) और हज़रत लुक़मान की इख़्लाक़ी तालीमात के जिक्र से पहले इरशाद है, "और हमने लुक़मान को दानाई बख़्शी कि ख़ुदा का शुक्र करो और जो शख़्स शुक्र करता है तो अपने ही फ़ायदे के लिए शुक्र करता है, और जो नाशुक्री करता है तो ख़ुदा भी बेपरवा और सज़ावार (हम्द व सना) है।" (सूर : लुक़मान 12)

और ख़ुदा की राह में एहसान जताये बग़ैर ख़र्च करने और ग़रीबी व तँग दस्ती से न डरने और अल्लाह पर भरोसा करने की तालीम के बाद इरशाद होता है, "वह जिसको चाहता है दानाई बख़्शता है, और जिसको दानाई मिली, बेशक उसको बड़ी नेमत मिली, और नसीहत तो वही लोग क़बूल करते हैं जो अक़्लमन्द हैं।" (सूर : बक़ : 269)

हदीस में आता हैं कि आप ने फ़रमाया "मेरी बेसत ही इस लिए हुई कि मैं मकारिमे इख़्लाक़ को पाये तकमील तक पहुँचाऊँ।" आप के इख़्लाक़ के बारे में अल्लाह तआला का इरशाद है, "और इख़्लाक़ तुम्हारे बहुत (आली) हैं– (सूर : क़लम–4)

हज़रत आयशा रज़ी० से आप के इख़्लाक़ के बारे में पूछा गया तो उन्होंने फ़रमाया, "आपके इख़्लाक़ मालूम करना हो तो कुरआन देखो।"

यह हिकमत और नफ़्स की पाकी अल्लाह के रसूल स० की सुहबत और हमनशीनी का नतीजा थी। आपकी तरबियतगाह में एक ऐसी नस्ल परवान चढ़ी जो आला इख़्लाक़ की हामिल और बुराइयों से महफ़ूज थी। कुरआन मजीद में आता है, "और जान रखो कि तुम में ख़ुदा के पैग़म्बर हैं, अगर बहुत सी बातों में वह तुम्हारा कहा मान लिया करें तो तुम मुशकिल में पड़ जाओ लेकिन ख़ुदा ने तुमको ईमान अज़ीज बना दिया, और उसको तुम्हारे दिलों

में सजा दिया, और कुफ़ और गुनाह और नाफ़रमानी से तुमको बेज़ार कर दिया, यही लोग हिदायत की राह पर हैं……खुदा के फ़जल और एहसान से, और खुदा जानने वाला और हिकमत वाला है। (सूर : हुजुरात 7–8) अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, "सब से अच्छे लोग मेरे दौर के लोग हैं।" हजरत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजी० सहाबा का ज़िक्र इस तरह करते हैं "दिल के पाक, इल्म के गहरे, तकल्लुफ़ात से बरी।"

जब सुहबते नबवी का यह सिलसिला टूट गया और अल्लाह के रसूल स० ने इस दुनिया से रेहलत फ़रमाई तो कुरआन, हदीस और सीरत इस ख़ला को पुर करते रहे। लेकिन मुख्तलिफ़ सियासी, इख़्लाक़ी और मआशी अवामिल के असर से हदीस की तदरीस व तफ़हीम और सीरत तारीख़ी और इल्मी बहसों में महदूद होकर रह गई। मगर इसके बावजूद हदीस व सीरत तह्ज़ीब, इख़्लाक़ और नफ़्स की पाकी का सबसे ताक़तवर और बरतने में सबसे आसान जरिया है।

हदीस की किताबों में जो कुछ है वह दो किस्म का है—एक का तअल्लुक़ आमाल, उनकी शकलों और महसूस अहकाम जैसे क़याम, रुकू, सज्दा, तिलावत व तसबीह, दुआ व अज़कार दावत व तबलीग़ जिहाद व गजवात, सुलह व जंग, दोस्त व दुश्मन के साथ मामला और दूसरे अहकाम व मसायल से है, और दूसरे का तअल्लुक़ उन बातिनी कैफ़ियात से है जो इन आमाल की अदायगी के साथ पाई जाती हैं। जैसे इख़्लास, सब्र, ईसार व सख़ावत, अदब व हया, ख़ुशू व ख़ुज़ू, दुआ के वक्त दिल शिकस्तगी, दुनिया पर आख़िरत को तरजीह, अल्लाह की रजा और उसके दीदार का शौक़, मख़्लूक पर रहमत व शफ़क़त, कमजोरों के साथ हमदर्दी, एहसास की लताफ़त जजबात की पाकीजगी, तवाज़ो व ख़ाकसारी, शुजाअत व बहादुरी, एहसान व नेकी और शराफ़त, बुरा चाहने वालों के साथ दरगुज़र, क़ता तअल्लुक़ करने वाले के साथ सिलहरहमी, और न

देने वाले के साथ अता व बख़्शिश का मामला जो नमूनों और मिसालों के बग़ैर समझ में नहीं आतीं। इसलिए हम यहाँ अल्लाह के रसूल स० के जामे अवसाफ़ करीमा जो उन हज़रात के बयान किये हुए हैं जो आप से ज्यादा क़रीब और आपकी ख़िलवत व जिलवत की ज़िन्दगी से अच्छी तरह वाक़िफ़ थे, यहाँ ज़िक्र करते हैं।

अल्लाह के रसूल का जामे व बलीग वस्फ़[1]

अल्लाह के रसूल स० के जामे व बलीग़ अवसाफ़ से मुतअल्लिक हम यहाँ सिर्फ़ दो शहादतें नक़ल करते हैं :— एक हिन्द बिन अबी हाला की (जो हज़रत ख़दीजा के लड़के और हज़रत हसन व हुसैन रज़ी० के मामू हैं) और दूसरी हज़रत अली बिन अबीतालिब की। हिन्द बिन अबी हाला कहते हैं :—

अल्लाह के रसूल स० हर वक्त आख़िरत की फ़िक्र में और सोच में रहते। इसका एक सिलसिला क़ायम था कि किसी वक्त आपको चैन नहीं होता था। अक्सर देर तक खामोश रहते। बिना ज़रुरत न बोलते। बात-चीत शुरू करते तो ज़बान से अच्छी तरह अल्फ़ाज़ अदा फ़रमाते। और इसी तरह बात ख़त्म करते। आपकी बातचीत और बयान बहुत साफ़, वाज़ेह और दोटूक होता, न यह बहुत तवील होता न बहुत मुख्तसिर। आप नर्म मेजाज और नर्म गुफ़तार थे। कड़वा खट्टा कहने वाले और बेमुरौवत न थे। न किसी की एहानत[2] करते थे न अपने लिए एहानत पसन्द करते थे। नेमत की बड़ी क़दर करते थे और उसको बहुत ज्यादा जानते भले ही वह कम हो और उसकी बुराई न फ़रमाते, खाने पीने की चीज़ों

1. पूर्ण गुण।
2. बेइज्जती।

की बुराई करते न तारीफ़। दुनिया और दुनिया से मुतअल्लिक़ जो भी चीज़ होती उस पर आप को कभी गुस्सा न आता। लेकिन जब ख़ुदा के किसी हक़ को पामाल किया जाता तो उस वक्त आप के जलाल[1] के सामने कोई चीज़ ठहर न सकती थी, यहां तक कि आप उसका बदला न ले लेते। आपको अपनी ज़ात के लिए गुस्सा न आता न उसके लिए बदला लेते। जब इशारा फ़रमाते तो पूरे हाथ के साथ इशारा फ़रमाते जब किसी बात पर तअज्जुब करते तो उसको पलट देते। बात चीत करते वक्त दाहिने हाथ की हथेली को बायें हाथ के अँगूठे से मिलाते। गुस्सा और नागवारी की बात होती तो चेहरा उस तरफ़ से बिल्कुल फेर लेते और एराज़[2] फ़रमाते। ख़ुश होते तो नज़रें झुका लेते। आपका हँसना ज्यादातर तबस्सुम या जिससे सिर्फ़ आपके दाँत जो बारिश के ओलों की तरह पाक व साफ थे, ज़ाहिर होते।"

और हज़रत अली रज़ि० जो आप से बहुत क़रीब थे और जिन्हें वस्फ़ निगारी और मंज़रकशी पर सब से ज्यादा क़ुदरत हासिल थी, आप स० के औसाफ़ इस तरह बयान करते हैं। :—

"आप क़ुदरती तौर पर बदकलामी, बेहयाई और बेशर्मी से दूर थे। और तकल्लुफ़न भी ऐसी कोई बात आप से सरज़द न होती थी। बाज़ारों में आप कभी आवाज़ बलन्द न फ़रमाते। बुराई का बदला बुराई से न देते बल्कि दरगुज़र का मामला फ़रमाते। आपने किसी पर हाथ नहीं उठाया सिवाय इसके कि अल्लाह की राह में जिहाद

1. रोबदाब।
2. ध्यान न देना।

का मौक़ा हो। किसी ख़ादिम या औरत पर आपने कभी हाथ नहीं उठाया। मैंने आपको किसी ज़ुल्म व ज़ियादती का बदला लेते हुए भी नहीं देखा जब तक कि अल्लाह तआला के हुदूद की ख़िलाफ़ वर्ज़ी[1] न हो और उसकी हुरमत पर आँच न आये। हाँ अगर अल्लाह के किसी हुक्म को पामाल किया जाता और उसकी हुरमत पर हर्फ़ आता तो आप उसके लिए सबसे ज्यादा गुस्सा होते। दो चीज़ें सामने हों तो हमेशा आसान चीज़ आप चुनते जब घर आते तो आम इंसानों की तरह नज़र आते। अपने कपड़ों को साफ़ करते, बकरी का दूध दुहते और अपनी सब ज़रुरतें ख़ुद अपने आप अन्जाम दे लेते।

अपनी ज़बान महफ़ूज़ रखते और सिर्फ़ उसी चीज़ के लिए खोलते जिससे आप को कुछ सरोकार होता। लोगों की दिल दारी फ़रमाते और उनको मुतनफ़्फ़िर न फ़रमाते। किसी क़ौम व बिरादरी का इज्जतदार शख्स आता तो उसके साथ एकराम का मामला फ़रमाते और उसे अच्छे और आला ओहदे पर मुकर्रर फ़रमाते। लोगों के बारे में मुहतात तबसरा फ़रमाते। बग़ैर इसके कि अपनी बशाशत और इख़लाक़ से उनको महरुम फ़रमायें। अपने असहाब के हालात की बराबर ख़बर रखते, लोगों से लोगों के मामलात के बारे में पूछते रहते।

अच्छी बात की अच्छाई बयान फ़रमाते और उसको ताक़त पहुँचाते, बुरी बात की बुराई करते और उसको कमज़ोर करते। आप का मामला एक सा और दरमियानी था। इसमें तबदीली नहीं होती थी। आप किसी बात से ग़फ़लत न फ़रमाते थे इस डर से कि कहीं दूसरे लोग भी ग़ाफ़िल न होने लगें और उकता जायें। हर हाल और हर मौक़े के लिए आप के पास उस हाल के मुताबिक़ ज़रूरी सामान था। न हक़ के मामले में कोताही फ़रमाते न हद से आगे बढ़ते। आप के क़रीब जो लोग रहते थे, वह सब मे अच्छे और चुनींदा होते थे।

1. उल्लंघन।

आपकी निगाह में सब से अफ़ज़ल वह था जिसकी ख़ैरख़्वाही और इख़लाक़ आम हो सब से ज़्यादा क़दर उसकी थी जो ग़मख़्वारी व हमदर्दी और दूसरों की मदद में सब से आगे हो। ख़ुदा का ज़िक्र करते हुए खड़े होते और ख़ुदा का ज़िक्र करते हुए बैठते। जब कहीं तशरीफ़ ले जाते तो जहाँ मजलिस ख़त्म होती उसी जगह तशरीफ़ रखते और इसका हुक्म भी फ़रमाते। अपने हाज़िरीन मजलिस और हमनशीनों[1] में हर शख़्स को पूरा हिस्सा देते आप का शरीके मजलिस यह समझता कि उससे बढ़कर आप की निगाह में कोई और नहीं है। अगर कोई शख़्स आप को किसी काम से बिठा लेता या किसी ज़रूरत में आप से बातचीत करता तो बड़े सब्र व सुकून से उस की बात सुनते, यहा तक कि वह ख़ुद ही अपनी बात पूरी करके रूख़्सत होता। अगर कोई शख़्स आप से कुछ सवाल करता और कुछ मदद चाहता तो बिना उसकी ज़रूरत पूरी किये वापस न फ़रमाते। या कम से कम नर्म व मीठे लहजे में जवाब देते। आपका अच्छा इख़लाक तमाम लोगों के लिए आम था और आप उन के हक़ में बाप हो गये थे। तमाम लोग हक़ के मामले में आप की नज़र में बराबर थे। आप की मजलिस इल्म व मारफ़त, हया व शर्म और सब्र व अमानत-दारी की मजलिस थी। न उसमें आवाज़ें बलन्द होती थीं न किसी के ऐब बयान किये जाते थे। न किसी की इज़्ज़त व नामूस पर हमला होता था न कमज़ोरियों की तशहीर[2] की जाती थी। सब एक दूसरे के बराबर थे और सिर्फ़ तक़्वा के लेहाज़ से उन को एक दूसरे पर फ़ज़ीलत हासिल होती थी। इसमें लोग बड़ों का एहतराम और छोटों के साथ शफ़क़त का मामला करते थे। हाजतमन्द को अपने ऊपर तरजीह देते थे। मुसाफ़िर और नये आदमी की हिफ़ाज़त करते थे और उसका ख़याल रखते।

---

1. पास बैठने वाले।
2. बुराई के साथ मशहूर करना।

आप हर वक्त बशाशत[1] और कुशादगी के साथ रहते थे। बहुत नर्म इख़लाक़ व नर्म पहलु थे। न सख़्त तबीयत के थे, न सख़्त बात कहने के आदी। न चिल्ला कर बोलने वाले न आमियाना बात करने वाले, न किसी को ऐब लगाने वाले, न तंग दिल, जो बात आप को पसन्द न होती उसकी तरफ़ ध्यान न देते और जान बूझ कर उस से मायूस भी न फ़रमाते और उस का जवाब भी न देते। तीन बातों से आपने अपने को बिल्कुल बचा रखा था। एक झगड़ा, दूसरे घमन्ड, और तीसरे ग़ैर ज़रूरी काम। लोगों को भी आपने तीन बातों से बचा रखा था। न किसी की बुराई करते न उसको ऐब लगाते थे और न उस की कमजोरियों के पीछे पड़ते थे। और सिर्फ वह कलाम फ़रमाते थे जिस पर सवाब की उम्मीद होती थी। जब आप बात करते तो मजलिस के लोग इस तरह अदब से सर झुका लेते थे कि मालूम होता कि उन सब के सरों पर चिड़ियाँ बैठी हैं। जब आप ख़ामोश होते तब यह लोग बात करते। आप के सामने कभी झगड़ा न करते। आपकी मजलिस में अगर कोई आदमी बात करता तो बाक़ी सब लोग ख़ामोशी से सुनते यहाँ तक कि वह अपनी बात ख़त्म कर लेता। आप के सामने हर आदमी की बात का वही दर्जा होता जो उसके पहले आदमी का होता। जिस बात पर सब लोग हँसते उस पर आप भी हँसते, जिस पर तअज्जुब का इज़हार करते उस पर आप भी तअज्जुब फ़रमाते। मुसाफ़िर और परदेसी की बेतमीज़ी और हर तरह के सवाल को सब्र व सुकून के साथ सुनते, यहाँ तक कि सहाबा ऐसे लोगों को अपनी तरफ़ मुतवज्जे[2] कर लेते। आप फ़रमाते थे, तुम किसी ज़रूरतमन्द को पाओ तो उसकी मदद करो। आप तारीफ़ उसी आदमी की क़बूल फ़रमाते जो एतदाल की हद में रहता। किसी की बात के दौरान कलाम न फ़रमाते और उसकी बात कभी न

1. कुशादा रवी (प्रसन्नचित्त)
2. आकृष्ट।

काटते। हाँ अगर वह हद से बढ़ने लगता तो उसे मना फ़रमा देते या मजलिस से उठ कर उसकी बात काट देते थे।

आप सबसे ज्यादा फ़राख़दिल, नर्म तबीयत और मामलात में बहुत ही करीम थे। जो पहली बार आप को देखता वह मरऊब हो जाता। आप की सुहब्बत में रहता और जान पहिचान हासिल होती तो आप का फ़रेफ़ता और दिलदादा हो जाता। आप का ज़िक्रे ख़ैर करने वाला कहता है कि न आप से पहले मैंने आप जैसा कोई शख़्स देखा न आप के बाद।"

9

आप के इख़्लाक आलिया पर एक नज़र

"आप तमाम लोगों में सब से ज्यादा फ़राख़दिल, नर्म तबीयत और ख़ानदानी लेहाज़ से सब से ज्यादा मोहतरम थे। आपने अपने सहाबा से अलग थलग न रहते थे बल्कि उनसे पूरा मेल जोल रखते थे। उन से बातें करते, उनके बच्चों के साथ ख़ुशमज़ाक़ी के साथ पेश आते, उनके बच्चों को अपनी गोद में बिठाते। ग़ुलाम और आज़ाद बाँदी, मिसकीन और फ़क़ीर सब की दावत क़बूल फ़रमाते, बीमारों की अयादत फ़रमाते चाहे वह शहर के आख़िरी सिरे पर हों। उज़्र ख़्वाह का उज़्र क़ुबूल फ़रमाते।"

आपको सहाबा की मजलिस में कभी पैर फैलाये हुए नहीं देखा गया कि इसकी वजह से किसी को तंगी व दुशवारी न हो। आप के सहाबा एक दूसरे से अशआर सुनते सुनाते, और जाहिलियत की कुछ बातों और वाक़यात का तज़किरा करते तो आप साकित रहते या मुस्करा देते। आप बहुत ही नर्म दिल, मोहब्बत करने वाले और लुत्फ़ व इनायत के पैकर थे। आप अपनी बेटी हज़रत फ़ात्मा रज़ि० से फ़रमाते, "मेरे दोनों बेटों को बुलाओ, वह दौड़ते हुए आते तो आप उन दोनों को प्यार करते और उनको अपने सीना से लगाते। आपके एक निवासे को आप की गोद में इस हाल में दिया गया कि उसकी

सांस उखड़ चुकी थी तो आप की आंखो से आंसू जारी हो गये। हज़रत सअद ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह यह क्या है ? आपने फ़रमाया यह रहम है जो अल्लाह ताला अपने बन्दों मे से जिसके दिल में चाहता है, डाल देता है। और बेशक अल्लाह तआला अपने रहम दिल बन्दों ही पर रहम फ़रमाता है।

जब बदर के क़ैदियों के साथ हज़रत अब्बास रज़ी० की मुश्क़े [1] कसी गईं और अल्लाह के रसूल स० ने उनकी कराह सुनी तो आप को नीद नहीं आयी। जब अन्सार को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने उनकी मुश्क़ें खोल दीं और चाहा कि उनका फ़िदिया छोड़ दिया जाय लेकिन आपने इस बात को क़बूल नहीं किया।

मुसलमानों पर आप बेहद शफ़ीक़ और मेहरबान थे और उनके अहवाल की बहुत रेआयत फ़रमाते थे। इन्सानी तबीयत में जो उकताहट पैदा होती रहती है उसका बराबर लेहाज़ रखते थे। इसी लिए वाज़ व नसीहत वक्फ़ों के साथ फ़रमाते थे कि कहीं उकताहट न पैदा होने लगे। अगर किसी बच्चे का रोना सुन लेते तो नमाज़ मुख्तसर फ़रमा देते और फ़रमाते, "मैं नमाज़ के लिए खड़ा होता हूं और चाहता हूं कि तवील नमाज़ पढ़ूं कि किसी बच्चे के रोने की आवाज़ सुनता हूं तो इस ख्याल से नमाज़ मुख्तसर कर देता हूं कि उसकी मां को दुशवारी व तकलीफ़ न हो"।

आप फ़रमाते थे तुम में से कोई शख्स मुझसे किसी दूसरे की शिकायत न करे क्योंकि मैं चाहता हूं कि तुम्हारे सामने इस हालत में आऊँ कि मेरा दिल बिल्कुल साफ़ हो। आप मुसलमानों के हक़ में शफ़ीक़ बाप की तरह थे। आप फ़रमाते थे जिसने तर्के में माल छोड़ा वह उसके वारिसों का है। कुछ क़र्ज़ वगैरा बाक़ी है तो वह हमारे ज़िम्मे। आप इफ़रात व तफ़रीत[2] से पाक थे। हज़रत आयशा रज़ी०

1. दोनों हाथ पीछे बाँधना।
2. ज्यादती व कसरत।

कहती हैं कि अल्लाह के रसूल स० को जब दो कामों में से किसी एक को तरजीह देनी होती तो हमेशा उसको अख़्तेयार फ़रमाते जो ज्यादा सहल होता बशर्ते कि इस में गुनाह का शायबा न हो। अगर इसमें गुनाह होता तो आप उससे ज्यादा दूर होते और फ़रमाते कि अल्लाह तआला को यह बात पसन्द है कि अपनी नेमत का निशान अपने बन्दे पर देखे।

आप घर में आम इन्सानों की तरह रहते थे। हज़रत आयशा रज़ी० कहती हैं कि, "आप अपने कपड़ों को भी साफ़ फ़रमाते थे, बकरी का दूध भी खुद दुह लेते थे। और अपना काम खुद अंजाम दे लेते थे। अपने कपड़ों में पेवन्द लगा लेते थे। जूता गांठ लेते थे।" हज़रत आयशा रज़ी से पूछा गया कि आप अपने घर में किस तरह रहते थे? उन्होंने जवाब दिया कि "आप घर के काम काज में रहते थे। जब नमाज का वक्त आता तो नमाज़ के लिए बाहर चले जाते"। और बयान करती हैं कि "आप तमाम लोगों में सबसे नर्म और सबसे ज्यादा करीम थे। और हँसते मुसकराते रहते थे"। हज़रत अनस रज़ी० बयान करते हैं, "मैंने किसी शख्स को नहीं देखा जो अल्लाह के रसूल स० से ज्यादा अपने बाल बच्चों पर शफ़ीक़ व रहीम हो।" हज़रत आयशा रज़ी० बयान करती हैं कि "अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, तुम मे सब से ज्यादा बेहतर वह है जो अपने बाल बच्चों के लिए सब से बेहतर हो। और मैं अपने बाल बच्चों के मामले में तुम सब से बेहतर हूँ"। हज़रत अबू हुरैरा रज़० बयान करते हैं कि "अल्लाह के रसूल स० ने किसी खाने में कभी ऐब नहीं निकाला। अगर मन चाहा तो खाया, नापसन्द हुआ तो छोड़ दिया"।

हज़रत अनस रज़ी० कहते हैं, "मैंने अल्लाह के रसूल स० की दस साल ख़िदमत की आपने कभी "हूँ" भी नहीं कहा और न यह फ़रमाया कि फ़लाँ काम तुमने क्यों किया। और फलाँ काम तुमने क्यों न किया।" आप के सहाबा आपके लिए इस ख्याल से खड़े नहीं होते थे कि आप इसको पसन्द नहीं फ़रमाते, और कहते कि "मेरी

इस तरह आगे बढ़कर तारीफ़ न करो जिस तरह नसारा ने ईसा इब्न मरियम के साथ किया था। मैं तो एक बन्दा हूँ। तुम मुझे अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल कहो।" हज़रत अनस रज़ी० कहते हैं कि "मदीना की लौंडियों और बाँदियों में से कोई आप का हाथ पकड़ लेती और जो कुछ कहना होता कहती और जितनी दूर चाहती ले जाती।" अदी बिन हातिम जब आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुए तो आपने उनको अपने घर बुलाया। बान्दी ने तकिया टेक लगाने के लिए पेश किया, आपने उसको अपने और अदी के बीच रख दिया, और ख़ुद ज़मीन पर बैठ गये। अदी कहते हैं कि इससे मैं समझ गया कि वह बादशाह नहीं हैं। एक आदमी ने आपको देखा तो वह रोब व जलाल से काँप गया आपने फ़रमाया, "घबराओ नहीं, मैं कोई बादशाह नही हूँ। मैं कुरैश की एक ख़ातून ही का लड़का हूँ जो सूखा गोश्त खाती थी।" आप घर में झाड़ू दे लेते, ऊँट बाँधते, उनको चारा देते, घर की ख़ादिमा के साथ खाना खा लेते और आटा गूँधने में उसकी मदद कर देते, और बाज़ार से ख़ुद सौदा सुल्फ़ ले आया करते थे।

आप को अगर किसी के बारे में ऐसी बात मालूम होती जो आप को नापसन्द होती तो यह न फ़रमाते कि फ़लाँ साहब ऐसा क्यों करते हैं, बल्कि यों कहते लोगों को क्या हो गया है कि ऐसे फ़ेल उन से सरज़द होते हैं, या ऐसी बातें ज़बान से निकालते हैं। इस तरह नाम लिये बिना उस फ़ेल से रोकते।

आप कमज़ोर बेजान जानवरों पर शफ़क़त फ़रमाते और उनके साथ नर्मी का हुक्म फ़रमाते थे। फ़रमाते कि "अल्लाह ने हर चीज़ के साथ अच्छा मामला करने और नर्म बर्ताव करने का हुक्म दिया है। इस लिए अगर क़त्ल भी करो तो अच्छी तरह करो, ज़िबह करो तो अच्छी तरह करो। तुम में से जो ज़िबह करना चाहे वह अपनी छुरी पहले तेज़ कर ले। और अपने ज़बीहा को आराम दे।" और फ़रमाया कि, "इन बेज़बान जानवरों के मामले में अल्लाह से डरो।

उन पर सवारी करो तो अच्छी तरह, उनको खाओ तो इस हालत में कि वह अच्छी हालत में हों"। ख़ादिम, नौकर और मज़दूर व गुलाम के साथ अच्छा सुलूक करने की तालीम देते और फ़रमाते "जो तुम खाते हो, वही उनको खिलाओ जो तुम पहनते हो वही उनको पहनाओ। और अल्लाह की मख़लूक़ को अज़ाब में न डालो, जिन को अल्लाह तआला ने तुम्हारे मातहत किया है। तुम्हारे भाई तुम्हारे ख़ादिम व मददगार हैं जिस का भाई उसके मातहत हो उसको चाहिए कि जो ख़ुद खाता है वही उसको खिलाये जो ख़ुद पहनता है वही उसको पहनाये। उनके सुपुर्द ऐसा काम न करो जो उनकी ताक़त से बाहर हो। अगर ऐसा करना ही पड़े, तो फिर उनका हाथ बटाओ"।

एक एराबी आप के पास आया और पूछा कि मैं अपने नौकर को एक दिन में कितनी बार माफ़ करूं? आपने फ़रमाया, "सत्तर बार" और फ़रमाया, "मज़दूर को उसकी मज़दूरी उसका पसीना सूखने से पहले दे दो।"

अल्लाह के रसूल स० के आदात

अज़ल से इन्सान की फ़ितरत यह है कि वह अपने महबूब हस्ती के उन आदात व ख़सायल को भी अख़्तेयार करने की कोशिश करता है जिन की उस के ऊपर कोई क़ानूनी या शरई पाबन्दी नहीं। मुहब्बत का दस्तूर सब से निराला है। यही वजह है कि पुराने ज़माने में उल्मा ने अल्लाह के रसूल स० के आदात व ख़सायल पर बड़ी बड़ी किताबें लिखी और आज भी इसका सिलसिला जारी है। इन किताबों में सबसे ज्यादा शोहरत इमाम तिरमिज़ी की किताब "शमायल" को हासिल है। यहाँ हम इसी क़िताब से मुख्तसरन शमायल नबवी स० पेश करते हैं:—

"अल्लाह के रसूल स० जब चलते तो ऐसा मालूम होता कि गोया नशीब में उतर रहे है। जब किसी की तरफ़ ध्यान देते तो पूरे बदन से फिर कर ध्यान देते। आप की नज़र नीची रहती थी। आप

की निगाह् आसमान की वनिस्वत जमीन की तरफ़ ज्यादा रहती थी। आप की आदतेशरीफ़ा ज्यादातर गोशये चश्म से देखने की थी। चलने में आप सहावा को अपने आगे कर देते थे और आप पीछे रह जाते थे। जिस से मिलते सलाम करने में पहल करते।

आप ने माँग भी निकाली है। आप सर में कसरत से तेल इस्तेमाल फ़रमाते थे और कसरत से दाढ़ी में कंघी करते थे। जब वज़ू करते थे कंघी करते या जूता पहनते तो दहिनी तरफ़ से शुरू करते। आप के पास एक सुर्मेदानी थी जिस से हर रात को तीन बार एक आँख में और तीन बार दूसरी आंख में सुर्मा लगाया करते, लेबास में कुर्ता सब से ज्यादा पसन्द था। जब कोई नया कपड़ा पहिनते तो उसका नाम लेते मसलन अल्लाह ने यह कुर्ता मरहमत फ़रमाया ऐसे ही अमामा, चादर वग़ैरा, फिर यह दुआ पढ़ते :—

اَللّٰهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ كَمَا كَسَوْتَنِيْهِ، أَسْأَلُكَ خَيْرَهُ وَخَيْرَ مَا صُنِعَ لَهُ،
وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ شَرِّهِ وَشَرِّ مَا صُنِعَ لَهُ.

"ऐ अल्लाह् तेरे ही लिए तमाम तारीफ़ें हैं, और इसको पहिनाने पर तेरा ही शुक्र है, या अल्लाह् तुझी से इस कपड़े की भलाई चाहता हूं, और उन मक़ासिद की ख़ूवी चाहता हूं जिन के लिए यह कपड़ा वनाया गया और इसके शर से, और उन मक़ासिद के शर से जिनके लिए यह वनाया गया तेरी पनाह चाहता हूं।"

और फ़रमाते कि सफ़ेद कपड़े पहना करो। सफ़ेद कपड़े ही जिन्दगी में पहिनना चाहिए और सफ़ेद कपड़ों में ही मुर्दों को दफ़न करना चाहिए। यह बेहतरीन लेवासों में से है। नजाशी ने आप की ख़िदमत में दो काले सादे मोजे भेजे आपने उनको पहना और वजू के वाद उन पर मसा भी फ़रमाया और ऐसे जूतों में नमाज़ पढ़ी जिन में दूसरा चमड़ा सिला हुआ था। और फ़रमाते कि एक जूता पहन कर कोई न चले, या दोनों पहन कर चले या दोनों निकाल दे। वायें

हाथ से खाने या सिर्फ़ एक जूता पहन कर चलने में आप मना फ़रमाते थे। और फ़रमाते जूता पहनो तो पहले दाँया पैर डालो और उतारो तो पहले बाँया पैर निकालो। आपने दाहिने हाथ में अँगूठी पहनी है और एक अँगूठी बनवाई जिसका नक़शा यह था। मोहम्मद एक सतर में, रसूल दूसरी सतर में और अल्लाह तीसरी सतर में। जब पाख़ाने जाते तो अँगूठी उतार देते।

आप मक्का की फ़तेह के मौक़े पर जब मक्का में दाख़िल हुए हैं तो सर पर काली पगड़ी थी। पगड़ी जब बान्धते तो उसका सिरा दोनों मोढ़ों के बीच डाल लेते। हज़रत उबैद-बिन-ख़ालिद-अल-महारबी रज़ी० कहते हैं कि मैं मदीना से एक बार आ रहा था कि मैंने किसी को अपने पीछे यह कहते सुना कि लुंगी ऊपर को उठाओ। मैंने मुड़कर देखा तो वह अल्लाह के रसूल स० थे। मैंने अर्ज़ किया कि हुज़ूर यह एक मामूली सी चादर है। इस पर आप ने फ़रमाया, "तुम्हारे लिए मेरा उसवा नहीं है ?" मैंने देखा कि आप की लुंगी आधी पिंडलियों तक थी।

आप टेक लगाकर नहीं खाते थे और फ़रमाते थे, "मैं टेक लगाकर नहीं खाता" और खाना खा कर तीन बार अपनी उँगलियाँ चाटते थे। आपने न कभी खाना चौकी पर खाया न छोटी तश्तरियों में और न कभी आपके लिए पतली रोटियाँ पकाई गईं हज़रत कतादा से पूछा गया कि आप खाना किस चीज़ पर रख कर खाते थे ? उन्होंने जवाब दिया कि यही चमड़े के दस्तरख़ान पर। आप को कद्दू लौकी पसन्द थे और हलुवा और शहद भी पसन्द था गोश्त में दस्त का गोश्त पसन्द करते थे। हज़रत आयशा रज़ी० फ़रमाती हैं कि यह बात नहीं थी कि दस्त का गोश्त आपको सब से ज्यादा पसन्द हो बल्कि आप को कभी कभी गोश्त मयस्सर आता था, और यह जल्दी गल जाता है इसलिए यह पसन्द था ताकि जल्दी से फ़ारिग़ हो कर अपने मशाग़िल में लग जायें। और इसी तरह आप को हाँडी और प्याला का बचा हुआ खाना मरग़ूब था।

आप फ़रमाते थे कि जो शख्स बग़ैर ख़ुदा का नाम लिए खाना खाता है उसके साथ शैतान शरीक होता है। और फ़रमाया "अगर कोई खाना शुरू करदे और बिस्मिल्लाह कहना भूल जाये तो यूं कहले" बिस्मिल्लाहि अव्वलहू व आख़ेरहू" (अल्लाह के नाम से इस के शुरू में और आख़िर में)

بِسْمِ اللّٰهِ أَوَّلَهُ وَآخِرَهُ.

खाने से फ़ारिग़ होने पर फ़रमाते :—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِىْ أَطْعَمَنَا وَسَقَانَا وَجَعَلَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ.

"उस ख़ुदा ही की तमाम तारीफ़ें हैं जिसने हमें खिलाया पिलाया और मुसलमान बनाया"।

और जब सामने से दस्तरख्वान उठा दिया जाता तो फ़रमाते:—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ حَمْدًا كَثِيْرًا طَيِّبًا مُبَارَكًا فِيْهِ، غَيْرَ مُوَدَّعٍ وَلَا مُسْتَغْنًى عَنْهُ رَبَّنَا.

"अल्लाह तआला की बहुत अच्छी और बाबरकत हम्द है, वह अल्लाह जिस से न बेनयाज़ हुआ जा सकता है, न उसको ख़ैरबाद कहा जा सकता है। वह हमारा रब है"।

और फ़रमाते, "अल्लाह इससे बड़ा ख़ुश होता है कि बन्दा कुछ खाये और कुछ पिये तो इस पर अल्लाह की हम्द व सना करे"।

पीने में आपको सब से ज्यादा पसन्द ठन्डा और मीठा पानी था आप फ़रमाते, "खाने और पानी का बदल दूध की तरह कोई चीज़ नहीं"। आपने आबे ज़मज़म खड़े होकर पिया और पानी तीन साँस में पीते थे।

आपके पास एक इत्रदान था जिस में से इत्र लगाया करते थे और इत्र (अगर कोई उपहार स्वरूप पेश करता) रद नहीं करते थे।

और आप फ़रमाते थे कि तीन चीज़ें रद नहीं करना चाहिए— तकिया,[1] तेल[2] ख़ुशबू, और दूध[3] । फ़रमाया कि मर्दाना ख़ुशबू वह है जिसकी ख़ुशबू फैलती हुई हो और तंग महसूस न हो। और ज़नाना ख़ुशबू वह है जिसका रंग ग़ालिब हो और ख़ुशबू दबी हुई हो।

हज़रत आयशा रज़ी० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल स० की बात चीत तुम लोगों की तरह लगातार जल्दी जल्दी नहीं होती थी। बल्कि साफ़ साफ़, हर मज़मून दूसरे से अलग होता था कि पास बैठने वाले अच्छी तरह से समझ लेते थे। और कभी-कभी बात को तीन बार दुहराते ताकि सुनने वाले अच्छी तरह समझ लें। आपका हँसना सिर्फ़ तबस्सुम होता था। अब्दुल्लाह बिन हारिस कहते हैं कि मैंने आप स० से ज़्यादा तबस्सुम करने वाला नहीं देखा। और कभी-कभी आप इस तरह भी हँसे कि आपके मुबारक दाँत दिखाई पड़ने लगे। जरीर बिन अब्दुल्लाह कहते है कि अल्लाह के रसूल स० ने मेरे मुसलमान होने के बाद से किसी वक्त मुझे हाज़िरी से नहीं रोका और जब मुझे देखते थे तो तबस्सुम फ़रमाते थे। हज़रत अनस कहते हैं कि अल्लाह के रसूल स० हमारे साथ मेल जोल और मज़ाह फ़रमाते थे। वह कहते हैं कि मेरा एक छोटा भाई था। आप उससे फ़रमाते "अरे अबू उमैर वह चिड़िया का बच्चा कहाँ गया"।[1] एक बार सहाबा ने अर्ज़ किया कि हुज़ूर आप हम से ख़ुश मज़ाक़ी भी फ़रमा लिया करते हैं। इरशाद फ़रमाया "हां"। मगर मैं कभी ग़लत बात नहीं कहता आप मिसाल के तौर पर कभी हज़रत अब्दुल्लाह बिन रवाहा के शेर भी पढ़ते थे और कभी किसी और शायर का। चुनाँचे कभी तरफ़ा का यह मिसरा भी पढ़ दिया करते" "वयातीका बिल

---

1. अबू उमैर के पास एक चिड़िया का बच्चा था जिस को पिंजड़े में बन्द कर रखा था और उससे खेलते थे वह मर गया तो आप ने मज़ाहन (हंसीं में) यह फ़रमाया।

अखबारे मल्लम तज़व्वद (तुम्हारे पास कभी वह भी ख़बरें लेकर आता है, जिसको तुमने किसी क़िस्म का बदला नहीं दिया) और कभी फ़रमाते कि सब से ज्यादा सच्ची बात जो किसी शायर ने कही है वह लबीद बिन राबिया की यह बात है :—

"आगाह हो जाओ, अल्लाह के सिवा दुनिया की हर चीज़ फ़ानी है"।

एक बार एक पत्थर आप की उँगली में लग गया, जिस की वजह से वह खून आलूद हो गई थी, तो आपने यह शेर पढ़ा :—

"तू एक उँगली है, जिसको इसके सिवा कोई तकलीफ़ नहीं पहुंची कि ख़ू आलूद हो गई है। (और यह बेकार नहीं गया बल्कि) अल्लाह की राह में यह तकलीफ़ पहुँची"।

और जंग हुनैन के मौक़े पर आप यह रजज़ पढ़ रहे थे :—

"अना अननबीयो ला कज़िब — अना इब्ने अब्दुलमु-त्तलिब"

(मैं बिना शक़ व शुबह नबी हूं। और मैं अब्दुल मुत्तलिब की औलाद हूं)

आपने शेर पढ़ने की इजाज़त भी दी। और इस पर इनाम भी दिया। और इसको पसन्द भी फ़रमाया। हज़रत जाबिर बिन समरा रज़ी० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल स० की ख़िदमत में सौ से ज्यादा मजलिसों में बैठा हूं जिन में सहाबा अशआर पढ़ते थे, और जाहिलियत के ज़माने के क़िस्से और वाक़यात नक़ल करते थे। और आप खामोशी से सुनते थे। हज़रत बल्कि कभी कभी उनके साथ तबस्सुम भी फ़रमाते थे। हज़रत हस्सान बिन साबित के लिए मस्जिद में मेम्बर रखवाया करते थे ताकि उस पर खड़े होकर आप की तारीफ़ में अशआर पढ़ें। आप फ़रमाते कि अल्लाह रूहुल-कुदुस के ज़रिये हस्सान की मदद फ़रमाते हैं। जब तक वह दीन की तरफ़ से प्रतिरक्षा करते या अल्लाह के रसूल की तरफ़ से जवाब देते हैं।

और जब आप आराम फ़रमाने का इरादा फ़रमाते दाहिना हाथ अपने दायें रूख़सार के नीचे रख लेते और पढ़ते :—

رَبِّ قِنِيْ عَذَابَكَ يَوْمَ تَبْعَثُ عِبَادَكَ.

"ऐ मेरे रब जब तू बन्दों को उठायेगा तो अपने अज़ाब से मुझे महफ़ूज़ रखना"।

और जब बिस्तर पर तशरीफ़ ले जाते तो फ़रमाते :–

اَللّٰهُمَّ بِاسْمِكَ اَمُوْتُ وَاَحْيٰى.

"ऐ अल्लाह आप ही के नाम पर मैं मरूँ और ज़िन्दा रहूं"।

और जब जागते तो यह दुआ करते :—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ اَحْيَانَا بَعْدَ مَا اَمَاتَنَا وَاِلَيْهِ النُّشُوْرُ.

"उस ख़ुदा की तमाम तारीफ़ें हैं जिसने मारने के बाद हम को जिलाया और उसी की तरफ़ उठ कर जाना है।

आप का बिस्तर जिस पर आराम फ़रमाते थे चमड़े का था। जिसमें खजूर की छाल भरी थी आप मरीज़ की अयादत करते और जनाज़े में शरीक होते थे। गुलाम की भी दावत क़बूल करते। आपने एक पुराने पालान पर सवार होकर हज फ़रमाया जिस पर एक कपड़ा पड़ा हुआ था जो चार दिरहम का भी नहीं होगा। और फ़रमाते अगर मुझे बकरी का एक पैर भी दिया जाये तो मैं क़ुबूल कर लूं और दावत में ज़रूर जाऊँ। आप नागवार बात को सामने मना नहीं फ़रमाते थे। आप हदिया क़बूल फ़रमाते और उस पर बदला भी देते थे। शर्म व हया से आप कुंवारी लड़की से भी बहुत बढ़े हुए थे। और जब कोई बात नागवार ख़ातिर होती तो चेहरे से फ़ौरन पहचान ली जाती।

10

तहजीब इख्लाक व नफस की पाकी की बुनियादी तालीमात

हम यहाँ कुछ आयाते कुरआनी और अहादीस नववी का जिक्र करते हैं जो तहज़ीब इख़लाक़ और नफ़स की पाकी की बुनियादी तालीमात फराहम करती हैं और रूहानी इमराज़ के जहर का तिरयाक़ और बेहतरीन इलाज हैं। अल्लाह तआला का इरशाद है, "भला जिसने पैदा किया वह बेख़बर है। वह तो पोशीदा बातों का जानने वाला और हर चीज़ से आगाह है" (सूर : अल्मुल्क–4)।

अल्लाह के रसुल० ने फ़रमाया, "मेरे रब ने मेरी तरबियत फ़रमाई, और बड़ी अच्छी तरबियत फ़रमाई"।

इन तालीमात का जो शख्स भी पाबन्दी करेगा और सन्जीदगी व सच्चे दिल से इनका लेहाज व एहतेमाम करेगा वह तहजीब, इख़्लाक और नफ़स की पाकी के गौहरे मक़सूद को पा लेगा। और अगर पूरी सोसाइटी इनको अपना मामूल बना ले तो वह नमूने का समाज बन जायेगा। यहाँ इनका तर्जुमा दिया जाता है :—

इख़लास :

"और उन को हुक्म तो यही हुआ था कि इख़लासे अमल के साथ ख़ुदा की इबादत करें और एकसू होकर और नमाज़ पढ़ें और जकात दें, और यही सच्चा दीन है"।
(सूर : अलबय्यना–5)

"देखो ख़ालिस इबादत ख़ुदा ही के लिए (जेबा है)" (सुर : अल्ज़ुमर–3)

सच्ची तौबा :

"मोमिनो। ख़ुदा के आगे साफ़ दिल से तौबा करो," (सूर :– तहरीम–8)

सब्र व दरगुज़र :

"और जो सब्र करे और क़सूर माफ़ कर दे तो यह हिम्मत के काम हैं"। (सूर : शूरा–43)

ख़ुदा हर जगह है :

"और तुम जहाँ कहीं हो वह तुम्हारे साथ है"। (सूर : हदीद–4)

"वह आँखों की ख़यानत को जानता है और जो बातें सीनों में पोशीदा हैं उन को भी" (सूर : ग़ाफ़िर–19)

तक़वा :

"मोमिनों ख़ुदा से डरो जैसा कि उससे डरने का हक़ है"। (सूर : आले इमरान–102)

"मोमिनो। ख़ुदा से डरो, और बात सीधी कहा करो" (सूर : अहज़ाब–70)

यक़ीन व तवक्कुल :

"और ख़ुदा ही पर मोमिनों को भरोसा रखना चाहिए" (सूर : इब्राहीम–11)

"और उस (ख़ुदा) जिन्दा पर भरोसा रखो जो कभी नहीं मरेगा," (सूर : फ़ुरक़ान–58)

इस्तेक़ामत :

"(ऐ पैग़म्बर) जैसा तुम को हुक्म होता है उस पर क़ायम रहो" (सूर : हूद–112)

"जिन लोगों ने कहा कि हमारा रब ख़ुदा है। फिर वह उस पर क़ायम रहे तो उनको न कुछ खौफ़ होगा और न वह ग़मनाक होंगे। यही जन्नत वाले हैं कि हमेशा उसमें रहेंगे। यह उसका बदला है जो वह किया करते थे।

(सूर : अहक़ाफ़–13,14)

किताब व सुन्नत की मज़बूत पकड़ :

"और अगर किसी बात में तुम में इख़्तेलाफ़ हो तो उसमें ख़ुदा और उसके रसूल (के हुक्म) की तरफ़ रूजू करो"। (सूर : निसा–59)"। "सो जो चीज़ पैग़म्बर तुम को दें वह ले लो और जिस से मना करें उससे बाज़ रहो" (सूर : हश्र–7)

अल्लाह और उसके रसूल की मुहब्बत :

"लेकिन जो ईमान वाले हैं, वह तो ख़ुदा ही के सब से ज़्यादा दोस्तदार हैं।" (सूरः बक़ः 165) "कहदो कि अगर तुम्हारे बाप और बेटे और भाई और औरतें और ख़ानदान के आदमी, और माल जो तुम कमाते हो और तिजारत जिस के मद्दा होने से तुम डरते हो, और मकानात जिन को तुम पसन्द करते हो, ख़ुदा और उसके रसूल से और ख़ुदा की राह में जिहाद करने से तुम्हें ज़्यादा अज़ीज़ हों तो ठहरे रहो। यहाँ तक कि ख़ुदा अपना हुक्म (यानी अज़ाब) भेजें।" (सूरः तौबा–24)

नेकी के कामों में मदद :

"और (देखो) नेकी व परहेज़गारी के कामों में एक दूसरे की मदद किया करो। और गुनाह व ज़ुल्म की बातों में मदद न

किया करो। और ख़ुदा से डरते रहो बेशक अल्लाह का अज़ाब सख्त है।" (सूरः मायदा–2)

इस्लामी भाईचारा :

"मोमिन तो आपस में भाई-भाई हैं।" (सूरः हुजरात–10)

अमानत की अदायगी :

"ख़ुदा तुमको हुक्म देता है कि अमानत वालों की अमानतें उनके हवाले कर दिया करो।" (सूरः निसा–58)

लोगों में सुलह कराना :

"उन लोगों की बहुत सी सलाह अच्छी नहीं। हाँ उस शख्स की सलाह अच्छी हो सकती है जो ख़ैरात या नेक बातों या लोगों में सुलह करने को कहे।" (सूरः निसा–114) "तुम ख़ुदा से डरो और आपस में सुलह रखो" (सूरः अनफ़ाल–1)

नर्मी व तवाज़ो :

"और मोमिनों से ख़ातिर और तवाज़ो से पेश आना" (सूरः हिज्र–88)

"तो तुम भी यतीम पर सितम न करना, और माँगने वाले को झिड़की न देना।" (सूरः ज़ुहा–9-10)

नबी स० की इत्तेबा :

"ऐ पैग़म्बर ! कह दो कि अगर तुम ख़ुदा को दोस्त रखते हो तो मेरी पैरवी करो, ख़ुदा भी तुम्हें दोस्त रखेगा, और तुम्हारे गुनाह मॉफ कर देगा। ख़ुदा बख़्शने वाला मेहरबान है।" (सूरः आले इमरान–31)

अल्लाह् से उम्मीद और डर :

"और मुझी से डरते रहो" (सूरः बक़ः–40) "(ऐ पैग़म्बर मेरी तरफ़ से लोगों से) कहदो कि ऐ मेरे बन्दो जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादती की है, ख़ुदा की रह्मत से नाउम्मीद न होना, ख़ुदा तो सब गुनाहों को बख़्श देता है और वह तो बख़्शने वाला मेह्रबान है।" (सूरः ज़ुमर–53) "(सुनलो) कि ख़ुदा के दाँव से वही लोग निडर होते हैं, जो ख़सारा पाने वाले हैं।" (सूरः एराफ़ 99) "ख़ुदा की रह्मत से बेईमान लोग नाउम्मीद हुआ करते हैं"। (सूरः यूसुफ़–87)

ज़ुह्द व क़नाअत :

"माल और बेटे तो दुनिया की ज़िन्दगी की ज़ीनत हैं और नेकियाँ जो बाक़ी रहने वाली हैं वह सवाब के लेहाज़ से तुम्हारे रब के यहाँ बहुत अच्छी और उम्मीद के लेहाज़ से बहुत बेह्तर हैं।" (सूरः कहफ़–46) "और यह दुनिया की ज़िन्दगी तो सिर्फ़ खेल और तमाशा है और हमेशा की ज़िन्दगी का मक़ाम तो आख़िरत का घर है। काश यह लोग समझते।" (सूरः अनकबूत–64)

ईसार व क़ुर्बानी :

"और उन को अपनी जानों से मुक़द्दम रखते हैं चाहे उनको ख़ुद एह्तियाज ही हो।" (सूरः हश्र–9) "और इसके बावजूद कि उनको ख़ुद खाने की हाजत है, फ़क़ीरों और यतीमों और क़ैदियों को खिलाते हैं।" (सूरः दहर–8)

बिगाड़ फैलाने की हुरमत :

"वह जो आख़िरत का घर है हम ने उसे उन लोगों के

लिए तैयार कर रखा है जो मुल्क में जुल्म और फ़साद का इरादा नहीं करते और अंजाम नेक तो परहेज़गारों ही का है ।" (सूरः क़सस–83)

गुस्से को रोकना :

"और गुस्सा को रोकते और लोगों के कुसूर माफ़ करते हैं । और ख़ुदा नेकूकारों को दोस्त रखता है ।" (सूरः आले इमरान–134) "ऐ मोहम्मद स० अफू अख़्तेयार करो, और नेक काम करने का हुक्म दो, और जाहिलों से किनारा कर लो" । (सूरः एराफ़–199)

अच्छे लोगों की सोहबत :

"और जो लोग सुबह शाम अपने पालन हार को पुकारते हैं और उसकी ख़ुशनूदी के तालिब हैं उनके साथ सब्र करते रहो" । (सूरः कहफ़–28)

"ऐ ईमानवालो ख़ुदा से डरते रहो, और सच्चों के साथ रहो," (सूरः तौबा–119)

मुसलमान के मुसलमान पर हुकूक :

"मोमिनो, कोई क़ौम किसी क़ौम का मज़ाक़ न उड़ाये, मुमकिन है वह लोग इन से बेहतर हों और न औरतें औरतों से । मुमकिन है कि वह इन से अच्छी हों । और अपने मोमिन भाई को ऐब न लगाओ और न एक दूसरे का बुरा नाम रखो । ईमान लाने के बाद बुरा नाम रखना गुनाह है । और जो तौबा न करें वह ज़ालिम हैं" । (सूरः हुज्रात–11)

"ऐ ईमानवालो । बहुत गुमान करने से बचो कि बाज़ गुमान गुनाह हैं, और एक दूसरे के हाल का तजस्सुस न किया करो, और न कोई किसी की ग़ीबत करे, क्या तुम में से कोई

इस बात को पसन्द करेगा कि अपने मरे हुए भाई का गोश्त खाये। इससे तुम तो जरूर नफ़रत करोगे (तो ग़ीबत न करो) और ख़ुदा का डर रखो। बेशक ख़ुदा तौबा क़बूल करने वाला मेहरबान है।" (सूरः हुजरात–12) "और जो लोग मोमिन मर्दों और मोमिन औरतों को ऐसे काम की तोहमत से जो उन्होंने न किया हो तकलीफ़ दें तो उन्होंने बहुतान और सरीह गुनाह का बोझ अपने सर पर रखा"। (सूरः अहज़ाब–58) "जब तुम ने बात सुनी थी तो मोमिन मर्दों और औरतों ने क्यों अपने दिलों में नेक गुमान न किया और क्यों न कहा कि यह सरीह तूफ़ान है"। (सूरः नूर–12)

अहादीस नबवी स०–नीयत की सलामती[1]

1. "आमाल का दारोमदार नियतों पर है और हर आदमी को वही मिलेगा, जिसकी उसने नीयत की तो जिसने ख़ुदा व रसूल की तरफ़ हिज्रत की उसकी हिज्रत ख़ुदा व रसूल की तरफ़ होगी और जिसने दुनिया हासिल करने के लिए या किसी औरत से निकाह की ख़ातिर हिज्रत की तो जिस चीज के लिए हिज्रत की वही मोतबर होगी।" (मुत्तफ़िक अलैहि)

2. "जो ख़ुदा के वादों पर ईमान रखते हुए और सवाब की उम्मीद में रमज़ान के रोज़े रखेगा उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे। जो ख़ुदा के वादों पर ईमान रखते हुए और उसके सवाब की उम्मीद में शबेक़दर इबादत में गुजारेगा उसके पिछले गुनाह माफ कर दिये जायेंगें। (बुख़ारी शरीफ़)

ईमान के शरायत

3. "तुम में से कोई शख़्स उस वक्त तक मोमिन नहीं हो

1 यहाँ पर अहादीस का तर्जुमा दिया जा रहा है। असल किताब में अहादीस का अरबी मतन (लिपि) देखा जा सकता है।

सकता जब तक कि उसकी ख्वाहिशात मेरे लाये हुए दीन के तावे न हो जायें।" (हकीम तिरमिज़ी व खतीब बग़दादी)

4. "तुम में से कोई शख्स मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसे अपने वालिद, बेटों और तमाम लोगों से ज्यादा महबूब न हो जाऊं।"(बुख़ारी शरीफ़)

5. "तुम में से कोई शख्स मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसके नज़दीक अपनी ज़ात से ज्यादा महबूब न हूं।" (मुस्नद अहमद)

6. "तुम में से कोई शख्स उस वक्त तक मोमिन नहीं हो सकता जब तक अपने भाई के लिए वही न पसन्द करे जो अपने लिए पसन्द करता है।" (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

7. "मुसलमान वह है जिस कि जबान और हाथ से मुसलमान महफ़ूज़ रहें, और मोमिन वह है जिस से लोगों को अपनी जानों और मालों के बारे में इतमिमान हो"। (तिरमिज़ी व नसाई)

8. "कोई बन्दा उस वक्त तक मुसलमान नही हो सकता जब तक उसका दिल और ज़बान मुसलमान न हो जाये, और उस वक्त तक मोमिन नहीं हो सकता। जब तक उसका पड़ोसी उसकी ईज़ा रसानियो से महफ़ूज न हों"। रावी यानी हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ी० ने पूछा कि "बवायक" से क्या मुराद है"? आपने फ़रमाया "ज़ुल्म व ज्यादती"। (अहमद)

9. "आदमी के इस्लाम की ख़ूबी यह है कि वह ला यानी तर्क कर दे"। (मालिक, अहमद, तिरमिज़ी)

10. "तीन चीज़े नतीजा-ए-ईमान हैं तँगदस्ती के बावजूद ख़र्च करना, सलाम को रिवाज देना, और अपने मामले में (भी) इंसाफ़ से काम लेना"। (बुख़ार)

11. "उस शख्स का ईमान नहीं जिस में अमानत नहीं। उस शख्स का दीन नहीं जो अहेद का पास नहीं करता। तीन फ़ज़ीलतें जिसके अन्दर होंगी वह ईमान की हलावत का मज़ा चखेगा। यह

कि अल्लाह् व रसूल उस को उसके अलावा सब से ज्यदा महबूब हों। और यह कि किसी से सिर्फ़ अल्लाह् के लिए मुहब्बत करे। और यह कि कुफ़् में वापस जाना उसके लिए उतना ही गिरां हो जितना आग में फेंका जाना"। (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

12. "दीन, ख़ैरख्वाही का नाम है। (तीन बार फ़रमाया)। हमने कहा कि किस के लिए ? फ़रमाया अल्लाह् के लिए, उसके रसूल के लिए, मुसलमानों के इमाम व हुक्काम के लिए और अवाम के लिए"। (मुस्लिम)

13. "मुनाफ़िक़ की तीन निशानियाँ हैं—जब बात करे तो झूठ बोले, जब वादा करे तो ख़िलाफ़वर्ज़ी करे, जब अमानत रखी जाये तो ख़ायानत करे"। (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

14. "शर्म व हया ईमान ही की वजह से होती है"। (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

15. "महरमात से बचो तुम बन्दगी में सब से अफ़ज़ल होगे। और ख़ुदा-ए-तआला ने जो तुम्हारी क़िस्मत में लिख दिया उस पर राज़ी रहो, तुम सब से बेनयाज़ रहोगे, अपने पड़ोसी के साथ अच्छा सुलूक करो, तुम मोमिन होगे, जो अपने लिए पसन्द करते हो वही दूसरों के लिए पसन्द करो तुम मुसलमान हो जाओगे, और ज्यादा न हँसा करो क्योंकि ज्यादा हँसना दिल को मुर्दा कर देता है"। (तिरमिज़ी)

मुस्लिम समाज और तालीमाते नबवी

16. "सुन लो कि मुसलमान मुसलमान का भाई है। लेहाज़ा जो मामला अपने साथ जायज़ हो वही किसी दूसरे मुसलमान भाई के साथ जायज होगा"। (तिरमिज़ी)

17. "आपस में हसद न करो, ख़रीद व फ़रोख़्त में धोखा न दो, बुग़ज़ न करो, और एक दूसरे की ग़ीबत न करो, किसी की फ़रोख़्त पर अपनी फ़रोख़्त न करो, अल्लाह् के बन्दों भाई-भाई हो

जाओ, मुसलमान मुसलमान का भाई है। न उस पर जुल्म करता है और न उसको बेयार व मददगार छोड़ता है, न उस को हिक़ारत से देखता है। तक़वा यहाँ है (सीना की तरफ़ इशारा फ़रमा कर तीन बार फ़रमाया) आदमी में शर के लिए इतना ही काफ़ी है कि अपने मुसलमान भाई को हक़ीर समझे। हर मुसलमान पर दूसरे मुसलमान का ख़ून, माल व आबरू हराम है"। (मुस्लिम शरीफ़)

18. "किसी शख़्स के लिए यह जायज़ नहीं कि वह अपने भाई को तीन दिन से ज्यादा छोड़े रखे, दोनों मिलें, लेकिन यह भी मुँह फेर ले वह भी मुँह फेर ले। इन दोनों में बेहतर वह है जो सलाम की इब्तेदा करे"। (बुख़ारी शरीफ़)

19. "मोमिन मोमिन का आइना है। और मोमिन मोमिन का भाई है। उस की ज़मीन की हिफ़ाज़त करता है और उसके पीठ पीछे उसकी देख भाल करता है"। (अबू दाऊद)

20. "क्या तुम को रोज़ा और नमाज़ और सदक़ात के मक़ाम से भी बलन्द मर्तबा काम बताऊँ? सहाबा ने अर्ज़ किया "क्यों नहीं, ऐ अल्लाह के रसूल स० !" आप ने फ़रमाया—तअल्लुक़ात की इस्लाह करना, और तअल्लुकात का बिगाड़ ही (दीन को) मूँड देने वाला है"। (अबू दाऊद)

21. "मामूली सी भलाई को भी चाहे वह अपने भाई से ख़ुश रवी व ख़न्दा पेशानी से मुलाक़ात ही क्यों न हो, हक़ीर न समझो।" (मुस्लिम)

22. "ईमान वालों को उनकी आपस की शफ़क़त, मुहब्बत व उल्फ़त और हमदर्दी में एक जिस्म जैसा पाओगे कि अगर उसके किसी हिस्से में तकलीफ़ हो तो जिस्म के सारे हिस्से तकलीफ़ में उसका साथ देते हैं"। (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

23. "मख़लूक़ अल्लाह की अयाल है तो अल्लाह को सबसे ज्यादा महबूब मख़लूक़ वह है, जो उसके अयाल के साथ अच्छा सुलूक करे।" (बेहक़ी)

24. "जिब्रील अ० पड़ोसी के बारे में मुझे इस क़दर वसीयत करते रहे कि मुझे ख्याल होने लगा कि वह उसको वारिस भी बना देगें।" (सहीहैन, अबूदाऊद व तिरमिज़ी)

25. "रहम करने वालों पर रहमान रहमत भेजता है। तुम ज़मीन वालो पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।" (तिरमिज़ी व अबूदाऊद)

मुहलिक आमाल

26. "जन्नत में रिश्तों नातों का तोड़ने वाला दाख़िल नहीं होगा।" (सहीहैन)

27. "जन्नत में चुग़लख़ोर न जायेगा"। (मुत्तफ़िक़ अलैहि)

28. "हसद से बचो क्योंकि वह नेकियों को इसी तरह खा जाता है जैसे आग सूखी लकड़ी को"। (अबू दाऊद)

29. "पिछली क़ौमों की बीमारी हसद व बुग्ज़ तुम्हें भी लग गई, यह मूंड देने वाली है, मैं यह नहीं कहता कि यह बाल मूँड़ देती है बल्कि दीन को मूँड देती है"। (तिरमिज़ी व अहमद)

30. "दो भेड़िये जिन को बकरियों में डाल दिया जाये, उतना उनको नुक़सान नहीं पहुंचायेंगे, जितना माल व जाह की हिर्स व मुहब्बत दीन को नुक़सान पहुंचाती है।" (तिरमिज़ी व अहमद)

फ़ज़ायल व मकारिमे इख़लाक़, और तक़्वा व अक़्लमन्दी के तक़ाज़े

31. "मेरे रब ने मुझे नौ बातों का हुक्म किया है। खुले और छिपे अल्लाह से डरूं। रज़ामन्दी और नाराज़गी में इन्साफ़ की बात कहूं। तंगदस्ती व खुशहाली में मियानारवी अख़्तेयार करूं, जिसने मुझसे तोड़ा उससे जोड़ूं, जिसने महरूम रखा उसको दूं, जिसने जुल्म किया उससे दरगुज़र करूं, और मेरी ख़ामोशी ग़ौर व फ़िक्र हो, मेरी गोयाई ज़िक्र हो, मेरी निगाह इबरत की निगाह हो, और मैं भलाई की वसीयत करूं"। (रज़ीन)

32. "रिश्ता जोड़ने वाला वह नहीं जो बदले में रिश्ता जोड़े, बल्कि रिश्ता जोड़ने वाला वह है जिससे रिश्ता तोड़ा जा रहा हो, और वह जोड़ रहा हो"। (बुख़ारी, अबूदाऊद, तिरमिज़ी)

33. "कामिल मोमिन वह है जो इख़लाक़ में सब से बेहतर है और तुम में बेहतर वह लोग हैं जो अपनी औरतों के लिए बेहतर हैं।" (तिरमिज़ी)

34. "मोमिन अच्छे इख़लाक से ऐसे रोज़ेदार का मक़ाम हासिल कर लेता है जो बराबर नमाज़ पढ़ रहा हो"। (अबूदाऊद)

35. "जिस में शक व शुबह हो उसको छोड़ कर उस चीज़ को अख़्तेयार करो जिस में शक व शुबह न हो"। (अहमद व दारमी)

36. "अपने दिल से पूछो, नेकी वह है जिस पर तुम्हारा क़ल्ब व ज़मीर मुतमईन हो। और गुनाह वह है, जो दिल में खटके और जिसमें तरद्दुद पैदा हो, चाहे लोग फ़तवा देते रहें, और फ़तवा देते रहें।" (अहमद व दारमी)

37. "जहाँ कहीं भी रहो ख़ुदा का ख़ौफ़ मलहूज़ रखो और बुराई (अगर हो जाये) तो उसके बाद नेकी करलो, वह उसको मिटा देगी और लोगों से ख़ुश इख़लाक़ी से पेश आओ," (अहमद, तिरमिज़ी, दारमी)

38. "जो अपनी दोनों टाँगों के बीच और अपने दोनों जबड़ों के बीच जो कुछ है उसकी (हिफ़ाज़त की) ज़मानत दे दे, मैं उसको जन्नत की ज़मानत देता हूं।" (बुख़ारी व तिरमिज़ी)

39. "जिसको ख़ौफ़ होता है वह रात में चलता रहता है और जो रात में चलता रहता है वह मंज़िल तक पहुंच जाता है। सुन लो कि ख़ुदा का सौदा मंहगा है, ख़ुदा का सौदा जन्नत है"। (तिरमिज़ी)

40. "आख़िरत जिसका मेहवर फ़िक्र होती है ख़ुदा उसके दिल को ग़नी कर देता है उसका शीराज़ा मुजतमा कर देता है, और दुनिया ज़लील होकर उसकी ख़िदमत में आती है और दुनिया जिसकी फ़िक्र का मरकज़ होती है ख़ुदा उसकी आंखों के सामने तँगदस्ती कर देता

है, उस का शीराज़ा बिखेर देता है और दुनिया में उसको सिर्फ़ वही मिलता है जो मुक़द्दर में लिखा जा चुका था"। (तिरमिज़ी)

41. अक़्लमन्द वह है जो अपने नफ़्स का लेखा जोखा करे, और मौत के बाद के लिए काम करता रहे, और नाकारा वह है जो नफ़्स को ख़्वाहिशात के पीछे लगाये रखे और अल्लाह से उम्मीदें लगाये बैठा रहे।" (तिरमिज़ी)

11

इस्लाम व मग़रिब[1]

एक ऐसा दीन जो ज़िन्दगी के तमाम शोबों पर हावी है, जो ज़िन्दगी को ख़ास अक़ायद व हक़ायक़ के ज़रिये एक ख़ास साँचे में ढालना चाहता है, जो तहारत व इफ़्फ़त का ख़ास तसौउर रखता है, अपने मख़्सूस तमद्दुन[2] और मुनासिब माहौल के बिना ज़िन्दा नहीं रह सकता। ऐसे दीन और उसके मानने वालों का ख़ास तौर से उस मग़रिबी तमद्दुन के साथ गुज़ारा नहीं हो सकता जो ख़ास तारीख़ी अवामिल के तहत ख़ालिस माद्दापरस्ती के माहौल में पला हो।

इस्लामी तमद्दुन में इबादात का पूरा निज़ाम तहारत से जुड़ा है। और मग़रिबी तमद्दुन ज़्यादा से ज़्यादा निज़ाफ़त के मफ़हूम से आशना है। इस्लामी तमद्दुन नज़र की इफ़्फ़त, क़ल्ब की इफ़्फ़त[3] और ख़्याल की पाकीज़गी का क़ायल है। मग़रिबी तमद्दुन सिर्फ़ क़ानूनी और ज़्यादा से ज़्यादा उर्फ़ी हुदूद का एहतराम करता है। इस्लामी तमद्दुन हिजाब का हामी है। और वह शरीअत की दी हुई इजाज़तों के दायरे के अन्दर कड़ाई से उसका पाबन्द है। मग़रिब हिजाब के इब्तेदाई मफ़हूम से भी ना आशना हो चुका है।

---

1. पश्चिमी सभ्यता। 2. तहज़ीब (सभ्यता)। 3. पाकी।

इस्लामी तमद्दुन मर्द व औरत के आजादाना घुलने मिलने का मुख़ालिफ़ है। और इसे समाज के लिए नुक़सानदेह और बहुत सी इख़लाक़ी ख़राबियों का सबब समझता है। मग़रिब इसे जिन्दगी की बुनियाद समझता है।

इन उसूली इख़्तेलाफ़ात के अलावा तसवीर, कुत्ते, मर्दों के लिए सोने चाँदी और रेशम के इस्तेमाल, ज़बीहा और ग़ैर ज़बीहा का फ़र्क़ और बहुत सी बातों में दोनों के नुक्तएनज़र[1] मुख़्तलिफ़ और मुतज़ाद हैं। इस्लाम तस्वीर को अच्छी नज़र से नहीं देखता। सही हदीस में आता है कि "जिस घर में तस्वीर, कुत्ता और मुजस्समें[2] होते हैं उसमें फ़रिश्ते नहीं आते"। मग़रिबी तमद्दुन में तस्वीर के बिना लुक़मा तोड़ना भी मुशकिल है। ऐसी सूरत में मग़रिबी तमद्दुन अख़्तेयार करके इस्लाम के निज़ामे तहारत व इफ़्फ़त, हया व सादगी और सुन्नते नबवी पर क़ायम नहीं रहा जा सकता।

हमेशा के लिए मग़रिबी तमद्दुन अख़्तेयार कर लेने ही से यह दुशवारियाँ पैदा नहीं होतीं, आरज़ी तौर पर भी इस माहौल में थोड़ा सा वक़्त गुज़ारने पर भी यह दुशवारियाँ पेश आती हैं। इसका अन्दाज़ा उन आला होटलों या क़याम गाहों में ठहरने से हो जाता है जिनकी बनावट मग़रिबी तर्ज़ पर है। इनमें ठहरने वाले के लिए तहारत का एहतमाम और फ़रायज़ की पाबन्दी मुशकिल हो जाती है।

इस्लामी सीरत व आदात के साथ इस किताब के पढ़ने वालों को इसकी भी कोशिश करनी चाहिए कि उसके घर और माहौल में इस्लामी तमद्दुन और इस्लामी मआशरत कारफ़रमा हो और मग़रिबी तमद्दुन से जहाँ तक हो सके दूर रहा जाये। शरई परदा हया व तहारत पानी के इस्तेमाल की सहूलत, सिम्त क़िबला की

---

1. दृष्टिकोण। 2. तस्वीरें (चित्र)।

जानकारी कपड़ों और दीगर इस्तेमाल की चीज़ों की शरई पाकीज़गी बच्चों की दीनी तालीम व तरबियत का पूरा एहतमाम हो कि इस के बिना शरई व मसनून तरीक़ा पर ज़िन्दगी गुज़ारना तो अलग रहा, दीनी फ़रायज़ की अदायगी भी मुशकिल हो जाती है।

12

कुछ तजुर्बे, कुछ मशविरे

पिछले सफ़हात में दीन के ख़ास मेजाज, सही इस्लामी अक़ायद, अल्लाह के रसूल स० की सुन्नतों और इबादात में आप का ज़ौक़ और तरीक़-ए-कार, जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह, और अल्लाह के नाम को ऊँचा करने की कोशिशों में आप का उसवा व अमल, इख़्लाक़ व शिमायले नबवी पर मुख़्तसरन रोशनी डाली गई है। और इस्लाह व तरबीयत, मिसाली फ़र्द को तैयार करने, नफ़्स के फ़ितनों और शैतान की चालों से बचने के लिए जो आयाते कुरआनी और अहादीस नबवी पेश की गई वह एक मुसलमान के लिए काफ़ी व शाफ़ी हैं। अल्लाह तआला का इरशाद है "और जिन लोगों ने हमारे लिए कोशिश की हम उनको जरूर अपने रास्ते दिखावेंगे, और ख़ुदा तो नेकूकारों के साथ है।" (सूर: अंकबूत –69)

इस किताब के पढ़ने वालों के दिल में यह बात आ सकती है कि इसमें जो बातें कही गई हैं वह नई नहीं। बल्कि वह आम मालूमात हैं जो कुरआन व हदीस के सफ़हात में बिखरी हुई हैं। और क़दीम व जदीद मुस्तनद उलमा की किताबों में यह सारे मज़ामीन आ गये हैं। और ख़ुद मुसन्निफ़ ने इमाम ग़ज़ाली के दौर से अब तक इस उनवान पर लिखी जाने वाली किताबों का ज़िक्र किया है।

इसलिए इस किताब से फ़ायदा उठाने का क्या तरीक़ा है ? एक मुसलमान कहाँ से शुरू करे कि उसे अपने हालात में तब्दीली महसूस हो। इसी बात के पेशे नज़र यहाँ कुछ तजुर्बे और मशविरे दर्ज किये जा रहे हैं। उम्मीद है कि इस से पढ़ने वालों को फ़ायदा होगा।

सब से पहले यह कोशिश होनी चाहिए कि इस किताब को अपनी ज़िन्दगी का गाइड बनाया जाय। इसलिए नहीं कि यह किसी बड़े आलिम की तसनीफ़ है बल्कि इसलिए कि यह किताब उन ज़रूरी दीनी बातों और मसायल, सुन्नत व शिमायले नबवी पर मुशतमिल है जिन पर तमाम मुसलमान ख़ास तौर पर अहले सुन्नत वल जमाअत मुत्तफ़िक़ हैं और जिनका जानना हर मुसलमान के लिए ज़रूरी है। इसलिए इस किताब को तफ़रीह तबा, मालूमात में इज़ाफ़ा या मुसन्निफ़ के बारे में महारत व कामयाबी या नाकामी का फ़ैसला करने के लिए पढ़ा जाये। इस बारे में क़ारईन के साथ मुसन्निफ़ अपने को भी शरीक करता है क्योंकि इस किताब से फ़ायदा उठाने का वह कुछ कम ज़रूरतमन्द नहीं।

1. हम को सब से पहले अक़ायद की इस्लाह और कुरआन पाक की रोशनी में अपने अक़ायद का जायज़ा लेना चाहिए। क्योंकि कुरआन ही वह साफ़ आइना है जिस में हर शख़्स अपना चेहरा वाज़ेह तौर से देख सकता है।

2. इस्लाम के चारों अमली अरकान का ज़ाहिरी और बातिनी तौर पर पूरा एहतमाम करना चाहिए और इस बारे में अल्लाह के रसूल स० के नक्शे क़दम पर चलने की कोशिश करें। और पूरी ज़िम्मेदारी और संजीदगी के साथ आप के तरीक़-ए-अमल और सुन्नतों को मालूम करें। आप के बारे में अल्लाह तआला का इरशाद है :—

तर्जुमा : "तुम को ख़ुदा के पैग़म्बर की पैरवी करनी बेहतर है यानी उस शख़्स को जिसे ख़ुदा से मिलने और क़यामत के आने की उम्मीद हो और वह ख़ुदा का कसरत से ज़िक्र करता

हो" (सूर : अह्जाब –21) ।
जिस क़दर हम आप की इत्तेबा करेंगे उसी क़दर हमारी इबादात कामिल और खुदा के नज़दीक मक़बूल होगी। इस के वाद हमारी यह कोशिश होना चाहिए कि यह इबादात ख़ास कर नमाज़ अपनी हक़ीक़त में आरास्ता हो ताकि इख्लाक़ व आमाल में इस के असरात ज़ाहिर हों। और वह कूर्वे इलाही का ज़रिया बने।

3. अक़ायद, फ़रायज़ और हुकूक़ अल्लाह् के वाद हुकूकुलएबाद सबसे अहम है अल्लाह तआला अपने हुकूक़ माफ़ कर देगा, लेकिन बन्दों का अपने हुकूक़ को माफ़ करना बन्दों ही के अख्तेयार में है। बुखारी की रवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "जिस के जिम्मे अपने किसी भाई का मुतालबा हो, इज्ज़त व नामूस की बात हो या किसी और क़िस्म की चीज़ तो आज ही इस दुनिया में उस से सफ़ाई कर ले, इस से पहले जब न दीनार होगा न दिरहम; अगर उसका कोई नेक अमल होगा तो उसके बराबर मुद्दई के हक़ से लिया जायेगा। अगर उसके पास नेकियाँ न होंगी तो साहबे हक़ के गुनाह मुद्दा अलैह पर डाल दिये जायेंगे।"

मुस्लिम की एक दूसरी रवायत में आता है, "शहीद के सब गुनाह माफ़ हो जायेंगे सिवाय क़र्ज के"। "अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया जिब्रील अ० ने मुझे इस की ख़बर दी है कि आप ने सहाबा की एक मजलिस में पूछा "जानते हो कि कँगाल और ख़ाली हाथ कौन है?" सहाबा ने अर्ज किया "हमारे यहाँ कंगाल और ख़ाली हाथ उसको समझते हैं जिसके पास न नक़द हो न सामान"। आपने फ़रमाया "मेरी उम्मत में कंगाल वह है जो क़यामत के दिन नमाज़, रोज़ा, ज़कात सब लेकर आयेगा लेकिन किसी को गाली दी होगी, किसी पर तोहमत लगाई होगी, किसी का माल खाया होगा, किसी को मारा होगा तो उनको क़यामत में उसकी नेकियाँ दे दी जायेंगी।

जब नेकियाँ भी ख़त्म हो जायेंगी और उस पर मताल्बे बाक़ी होंगे तो उसके गुनाह लेकर उस पर डाल दिये जायेंगे फिर वह जहन्नम में फेंक दिया जायेगा"। इस ख़तरे से बचने और अपना हिसाब साफ रखने के लिए मामलात की सफ़ाई की ज़रूरत है। इसके मसायल की जानकारी और इसमें एहतमाम व एहतियात की ज़रूरत है।

इन अहादीस की रोशनी में हम को **ग़ैर जानिबदाराना**[1] अन्दाज़ से अपने पिछले और मौजूदा मामलात पर ग़ौर करना चाहिए। अगर किसी का कोई हक़ या मुताल्बा हमारे ज़िम्मे रह गया हो, क़र्ज़ हो, बय[2] का मामला हो, मुश्तरक[3] जायदाद का हिस्सा हो, **तर्का व मीरास**[4] हो, या किसी मुसलमान की दिलआज़ारी की हो या हक़ तल्फ़ी, या तोहमत व ग़ीबत, इसी दुनिया में इसको साफ़ कर लेना चाहिए या तो उसका हक़ दे दिया जाये या उससे माफ़ करा लिया जाये। बाहमी मामलात व हुक़ूक़ के बारे में हम से बड़ी कोताही होती है और अक्सर वह हमारे ज़िम्मे बाक़ी रह जाते हैं।

4. इसके बाद हम तहज़ीब, इख़लाक़, नफ़्स की पाकी और दिल को बुराइयों से पाक करने की कोशिश करें। क्योंकि बुराइयाँ तालीमाते नबवी से फ़ायदा उठाने और अल्लाह के रंग में रंग जाने की राह में हायल होती हैं। यही इन्सान को हवा व हविस का शिकार बना देतीं हैं। बुरे इख़्लाक़ ही दीनी ख़तरा और हलाकत का सबब बनते हैं। कुरआन में इरशाद है :—

तर्जुमा "भला तुमने उस शख्स को देखा जिसने अपनी ख्वाहिश को माबूद बना रखा है।" (सूर : अल्जासिया —23)

इस सिलसिले में हम को किताब व सुन्नत और तालीमात नबवी का पाबन्द होना चाहिये।

इन्सान चाहे कितना ही दूर अन्देश हो आइना ही में अपना चेहरा देख सकता है। खुश नसीब वह है जो अपनी कमज़ोरियों,

1. निष्पक्ष। 2. बेचना।
3. सम्मिलित। 4. मुर्दे का माल।

और इख़लाक़ी बीमारियों जैसे किब्र, हसद, हिर्स, बुख्ल, कीना, अदावत, दौलत की हविस और मुसलमान की तहक़ीर से वाक़िफ़ हो और इनसे ख़लासी की फ़िक्र रखता हो और इन से इसी तरह जूझता हो जैसे अपने जानी दुश्मन से जूझता हो। और जिसे ऐसा आलिम नसीब हो जाये जो उसे आगाह करे और इख़लाक़ी कमजोरियों से बचने का तरीक़ा बताये। और इसको आसान बना दे। उसकी सिफ़ात का मरीज़ पर असर पड़े और उससे मरीज़ सबक़ हासिल करे।

पुराने जमाने में सुहबत सब से आसान तरीक़-ए-इलाज था। और बड़े-बड़े उल्मा ख़ुदा के ऐसे मुख़लिस बन्दों की तलाश में रहते थे। भले ही वह इल्म में उनसे कम मर्तबा हों। क्योंकि उनको उनकी मजलिस और सुहबत में वह कुछ मिलता था जो उनके हालात को सुधारने में मददगार था। इमाम अहमद बिन हंबल के साहबज़ादे ने एक बार वालिद से इस बात की शिकायत की कि वह ऐसे लोगों की मजलिस में शरीक होते हैं जो इल्म में उनसे कम हैं और उनके सामने शागिर्द की हैसियत रखते हैं। इनसे उनको शर्म आती है, और कभी-कभी लोगों को ग़लतफ़हमी पैदा होती है। इमाम अहमद बिन हंबल ने फ़रमाया "बेटा आदमी वहीं बैठता है जहाँ अपने क़ल्ब का नफ़ा देखता है।" आम फ़साद के बावजूद कोई जमाना ऐसे उल्मा-ए-रब्बानी से ख़ाली नहीं रहा, लेकिन जिसको किसी सबब से ऐसी सुहबत न मिल सकी हो वह अपने नफ्स और बातिनी हालात पर ख़ास तौर से ध्यान दें। और अपनी रूहानी बीमारियों व कमजोरियों से वाक़िफ़ होने की कोशिश करता रहे। कुरआन का इरशाद है, "बल्कि इन्सान आप अपना गवाह है, अगरचे माज़रत करता रहे"। (सूर: अलक़याम : –14-15)।

फिर किताब व सुन्नत और उल्मा-ए-रब्बानी की हिदायत की रोशनी में उनके इलाज की फिक्र करे। इस बारे में बहुत कुछ लिखा गया है और हजारों मुसलमानों ने उनसे फ़ायदा उठाया है। मिसाल के तौर पर इमाम ग़ज़ाली की "अहयाउल उलूम", अल्लामा इब्न

जौज़ी की "तल्बीस इब्लीस" और अल्लामा इब्न क़य्यम की "अग़ासतुललेहफ़ान फ़ी मकायदुश्शैतान" और "मदारिजुस्साले-कीन——", अल्लामा इब्न रजब की "जामेउल उलूम——", हज़रत सैयद अहमद शहीद की "सिराते मुस्तक़ीम", हकीमुल उम्मत हज़रत अशरफ़ अली की "तरबियतुस्सालिक़"।

ज़िक्र व दुआ की कसरत रखें। दिल में रूहानी बीमारियों का ख़ौफ़ बना रहे। उनसे चौकन्ना रहें। नफ्स पर भरोसा न करें। ऐसे लोगों की सुहबत से बचें जो शैतानी फ़रेब के शिकार हैं। अल्लाह तआला का इरशाद है :—

तर्जुमा : "और जो कोई ख़ुदा की याद से आखें बन्द करे हम उस पर एक शैतान मुक़र्रर कर देते हैं तो वह उसका साथी हो जाता है।" (सूर : अलज़ख़रफ़ —36)

अपनी पूरी ज़िन्दगी, इख़्लाक़ व मामलात, और आदात व शिमायल[1] में सीरते नबवी को अपने लिए मशअले राह बनायें। और जहाँ तक हो उस पर अमल करने की कोशिश करे। अल्लाह तआला का इरशाद है, "ऐ पैग़म्बर लोगों से कह दो कि अगर तुम ख़ुदा को दोस्त रखते हो तो मेरी पैरवी करो ख़ुदा भी तुम्हें दोस्त रखेगा और तुम्हारे गुनाह माफ़ कर देगा।" (सूर : आले इमरान —31)

5. नमाज़, रोज़, ज़कात के ज़रूरी दीनी अहकाम व मसायल, हलाल व हराम, जायज़ व नाजायज़, फ़र्ज़, वाजिब व सुन्नत और शरई हुदूद से वाक़फ़ियत की भी ज़रूरत है। ख़ास तौर पर यह कि जो पेशा अख़्तेयार किया है उससे मुतअल्लिक़ शरई अहकाम क्या है। इसके लिए फ़िक़ा व मसायल की कोई मोतबर किताब पढ़े।

6. हम में से बहुत से लोग अहादीस में वारिद वज़ू, मस्जिद में दाख़िल होने और निकलने, बैतुलख़ला[2] जाने और वहाँ से आने,

1. आदत।
2. शौच (पाख़ाना)।

सोने और जागने की दुआयें, सुबह व शाम के अज़कार वग़ैरह का एहतमाम करते हैं लेकिन इस का डर है कि यह एहतमाम उनके फ़ज़ायल व कदर व कीमत और मकाम के एहसास के बग़ैर हो और ग़फ़लत में या आदत के तौर पर टेप रिकार्डर के तरीक़े पर यह सारे काम हो रहे हों। बाज़ इबादतों के बारे में यह शर्त भी बताई गई है कि अल्लाह तआला ने उस अमल पर जिसके बदले और सवाब का वायदा फ़रमाया उसकी लालच और उस पर यक़ीन के साथ अमल किया गया हो। सही हदीस में आता है कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया "जो ख़ुदा के वायदों पर यक़ीन रखते हुए और सवाब की उम्मीद में रमज़ान के रोज़े रखे, उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जायेंगे।" और फ़रमाया, "और जो ख़ुदा के वायदों पर यकीन करते हुए और सवाब की उम्मीद में शबेक़दर में इबादत करे उसके पिछले गुनाह माफ़ हो जायेंगे।"

लेकिन हम में से बहुत से लोग इस अहम सिफ़त और इस शर्त का जो इबादत और आदत के बीच फ़र्क़ करती है, ज्यादा ख़्याल नहीं रखते जिसका नतीजा है कि बहुत सी इबादत जिन में नमाज़, रोज़ा, ज़कात और हज भी हैं एक लगे बंधे तरीक़े और आदत बन कर रह गये हैं जो रूह से ख़ाली और "ईमान व एहतेसाब" [1] की कैफ़ियत से महरूम हैं।

सहाबाक्राम रज़ी० और इस उम्मत के सुलहा व रब्बानी उल्मा और आम लोगों के दरमियान बड़ा फ़र्क़ इन्हीं फ़ज़ायल के एहसास और इन आमाल व अज़कार के अन्दर ऐसी ईमान व यक़ीन की कैफ़ियत

1. ईमान व ऐहतेसाब की शरह बुख़ारी शरीफ़ की हदीस में आई है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया "चालिस आमाल हैं जिनमें सबसे आला अमल किसी को मदद की नियत से बकरी देना है। जो शख़्स भी इन से कोई अमल उनके सवाब की उम्मीद और उन पर अल्लाह तआला के वायदों की तसदीक़ के साथ करेगा अल्लाह तआला उसको जन्नत में दाख़िल करेगा।"

जो दिल व दिमाग़ पर छा जायें, और उस शौक़ व लगन के जो दिल की गहराइयों से फूटा पड़ता हो और ख़ुदा के यहाँ उन की क़दर व कीमत के एहसास के साथ अदायगी और एहतमाम से था। मसलन जब वह वज़ू करते तो अल्लाह के रसूल स० का यह क़ौल अपने मन में ताज़ा कर लेते :–

तर्जुमा "जब मुसलमान या मोमिन बन्दा वज़ू करता है फिर अपना चेहरा धोता है तो पानी के अख़िरी क़तरे के साथ उसके चेहरे से वह गुनाह झड़ जाता है जो उसने अपनी आँख से किया था, और जब अपना हाथ धोता है तो पानी के साथ या पानी के अख़िरी क़तरे के साथ वह गुनाह झड़ जाता है जो हाथ से किया था यहाँ तक कि वह गुनाहों मे पाक व साफ़ होकर निकलता है।"

वह अल्लाह के रसूल स० की बातों पर ऐसा यक़ीन रखते जैसे अपनी आँखों से देख रहे हों और उसी सवाब के शौक़ में वह अमल करते। उनका यही हाल अपने किसी भाई से मिलने, तिजारत में, और हर काम में होता, अगर इस एहसास का हम एहतमाम करें तो जो काम हम बचपन से करते रहे हैं उसमें एक कैफ़ियत पैदा होगी और हमारे अमल में असर और नूरानियत पैदा होगी और हम अपनी ज़िन्दगी में उनका खुला हुआ असर महसूस करेंगे। यह बात सिर्फ़ इबादत के साथ मख़्सूस नहीं। हलाल रोज़ी कमाने, मुलाज़मत करने, तिजारत, ज़राअत हर काम में हमारी नीयत अल्लाह की रज़ा हासिल करने को होना चाहिए। यही इस सही हदीस का मफ़्हूम है, जिससे इमाम बुख़ारी र० ने अपनी अज़ीम किताब का आग़ाज़ किया है।

तर्जुमा : "आमाल का दारोमदार नियतों पर है। और हर शख़्स को वही मिलेगा जिसकी उसने नियत की"।

"यह उन अहादीस में से एक है जिन पर दीन की बुनियाद है। इमाम शाफ़ई र० फ़रमाते थे, "यह हदीस एक तिहाई इल्म है और फ़िक़्हा के सत्तर अबवाब से इस का तअल्लुक़ है।"

लेहाज़ा हर वह अमल जिसे इन्सान सिर्फ़ अल्लाह की रज़ा और सही नीयत के साथ करे वह कुर्ब इलाही और ईमान के आला से आला मक़ाम तक पहुंचने का ज़रिया है और वह ख़ालिस दीन है। चाहे वह अमल ख़ुदा की राह में जिहाद हो या हुकूमत या दुनिया की नेमतों से फ़ायदा उठाने की बात हो या नफ़स के जायज़ तक़ाज़ों की तकमील या हलाल रोज़ी व मुलाज़मत की कोशिश हो या जायज़ तफ़रीह तबा का सामान या आयली व अज़दवाजी ज़िन्दगी हो। इसके बरअक्स हर वह इबादत या दीनी ख़िदमत दुनियादारी समझी जायेगी जो रज़ा-ए-इलाही की तलब से ख़ाली हो। ऐसे अमल का करने वाला हर शख़्स चाहे वह आलिम व मुजाहिद हो या दायी व मुबल्लिग़ उसको सवाब से महरुमी का सामना करना होगा, बल्कि ख़तरा है कि यह आमाल उसके लिए वबाल और उसके और ख़ुदा के बीच हिजाब न बन जायें।

अल्लाह के रसूल स० के बेशुमार एहसानात में से एक अज़ीम एहसान यह है कि आप ने दीन व दुनिया के बीच बड़ी खाई को भर दिया और इन दोनों को जो दो कैम्पों में बंटे थे और दोनों एक दूसरे से बिल्कुल अलग थे, आपस में मिला दिया। आप दायी-ए-वहदत भी हैं और "बशीर व नज़ीर" भी। आपने हमें इस जामे व बलीग़ दुआ की तलक़ीन की।

तर्जुमा : "ऐ हमारे रब हम को दुनिया में भी नेमत अता फ़रमा और आख़िरत में भी नेमत बख़शियो और दोज़ख़ के अज़ाब से महफ़ूज़ रखियो"। (सूर : बक़ : 201) आपने एलान फ़रमाया "मेरी नमाज़ और मेरी इबादत और मेरा जीना और मेरा मरना सब ख़ुदा-ए-रब्बिल आलमीन ही के लिए है"। (सूरः इनआम–162)

"इसका मतलब यह है कि एक मोमिन की ज़िन्दगी मुतज़ाद गिरोहों का मजमूआ नहीं है। बल्कि यह एक वहदत है जिस पर इबादत की रुह छाई हुई है और ख़ुदा की ज़ात पर ईमान और

उसके अहकाम की इताअत उसकी रहनुमा है। यह ज़िन्दगी के तमाम शोबों, जद्दो जिहद के हर मैदान पर छायी है। शर्त यह है कि सही नीयत और अल्लाह की रज़ा की सच्ची तलब पाई जाती हो और नबियों के तरीक़े पर इसे किया गया हो। इससे मालूम हुआ कि आप कामिल तौर पर रसूले वहदत, मुहब्बत, व मेलजोल के पैग़ाम्बर और "बशीर" व नज़ीर" हैं। आपने दीन व दुनिया के तज़ाद के नज़रिया को ख़त्म करके पूरी ज़िन्दगी को इबादत में तब्दील कर दिया। दुनिया के इन्सानों को दो आपस में जूझते कैम्पों से निकाल कर नेकी, ख़ल्क़ की ख़िदमत और अल्लाह की रज़ा के एक ही महाज़ पर खड़ा कर दिया"।

(नबी-ए-रहमत जिल्द दो पेज 23)

7. मुनासिब यह है कि कुरान पाक की तिलावत का एहतमाम करें। एक विर्द मुकर्रर कर लिया जाये और किसी बीमारी या शदीद मजबूरी के आलावा कभी नाग़ा न करें। और इसे हासिले उम्र और सआदत व बरकत का सबसे क़ीमती वक्त समझा जाये। तिलावत के वक्त हम अपने को अल्लाह से बहुत क़रीब समझें।

सल्फ़ सालेहीन में कुरआन से इस्तेफ़ादा और उनकी ज़िन्दगी में इसके असरात ज़ाहिर होने में एक दूसरे पर जो फ़ज़ीलत हासिल थी वह सिर्फ़ कुरआन के मानी व मतालिब पर ग़ौर करने का नतीजा नहीं था, बल्कि ख़ुदा के जलाल और उसकी अज़मत व जमाल की चाशनी व लज्ज़त का नतीजा था।

इस सिलसिले में दो चीज़ें मुफ़ीद हैं :-

(1) कुरआन की तिलावत के फ़ज़ायल से वाक़फियत और उसके अज्र व सवाब पर यक़ीन। (2) सहाबाक्राम, ताबईन, फुक़हा व मुहद्देसीन, उल्मा-ए-रब्बानी, औलिया अल्लाह की तिलावत और कुरआन के साथ उनके अदब व एहतमाम का इल्म।

यह भी मुफ़ीद है कि हम कुरआन से जहाँ तक हो सके सीधा तअल्लुक़ क़ायम करें इस तरह कि हमारे और अल्लाह के कलाम के

दरमियान मुस्तक़िल तौर पर कोई इन्सानी तफ़हीम और शरह् व तफ़सीर हिजाब न बन जाय जिस पर इन्हेसार कर लिया जाय और जो कुरआन से इस तरह् पेवस्त हो जाय कि उसको जेहन से अलग करना मुशकिल हो जाय। और उसके अक्स और साये कुरआन के हक़ीक़ी जमाल और निखार पर इस तरह् असर अन्दाज़ होने लगें जिस तरह् तनावर[1] और घने दरख़्तों के साये साफ़ व शफ़ाफ़ चश्मों पर पड़ते हैं। इससे वह तफ़सीरें मुस्तसना हैं जो सही अहादीस में अल्लाह के रसूल स० या सहाबाक्राम और अइम्मये इस्लाम से कुरआन के बाज़ मुश्किल मक़ामात की शरह् में मनक़ूल हैं। इसी तरह् वह लुग़ाते कुरआन और कुतुब तफ़सीर भी मुस्तसना[2] हैं जिन की ज़रूरत कुरआन का अमीक़ इल्मी मुतालेआ करने वाले ख़ास तौर पर अजमी लोगों को पड़ती है। इससे वह लोग भी मुस्तसना हैं जो फ़ने तफ़सीर के उलमा हैं या तफ़सीर पर तसनीफ़ व तालीफ़ या तदरीस व तहक़ीक़ का काम करते हैं। कुरआन की तिलावत और उसकी हलावत और चाश्नी महसूस करने की पूरे अज़मत व एहतराम के साथ कोशिश करनी चाहिए।

8. अल्लाह तआला के रसूल स० से क़ल्बी तअल्लुक़ व राब्ता मज़बूत करने आपकी मुहब्बत और आपकी इत्तेबा की तकमील के लिए हदीस की किताबों को पढ़ना चाहिए। यह क़ायदा है कि जिस को जिससे मुहब्बत होती है उसकी रट लगाता है उसकी याद में रहता है। और उसके हालात की तलाश में रहता है। और इसी तरह् आपके सच्चे "आशिक़ों" के हालात पढ़ना चाहिए इससे तअल्लुक़ और मजबूत होता है। दरूद की कसरत रखनी चाहिए। कुरआन पाक का इरशाद है "ख़ुदा और उसके फ़रिश्ते पैग़म्बर पर दरूद भेजते हैं। मोमिनों तुम भी उन पर दरूद व सलाम भेजा करो," (सूर : अहज़ाब–56)। और अल्लाह के रसूल स० ने फ़रमाया, "जो

---

1. मज़बूत। 2. अलग।

मुझ पर एक बार दरूद पढ़ता, अल्लाह उस पर दस बार रहमत भेजते हैं"। और फ़रमाया "क़यामत के दिन सब से ज्यादा मुझसे क़रीब वह शख्स होगा जो सब से ज्यादा मुझ पर दरुद पढ़ता था"। और हज़रत अबी बिन काब ने जब पूछा कि आप पर सिर्फ़ दरूद ही पढ़ा करूँ तो आप ने फ़रमाया, "हाँ तब तुम्हारी परेशानियाँ दूर हो जायेंगी और गुनाह बख्श दिये जायेंगे"।

9. कुछ ख़ास अबराद व अजकार का भी एहतमाम करना चाहिए जिन से हमारी जबान तर रहे। और इन की पाबन्दीं करें।

10. सालेहींन और उलमा-ए-रब्बानी की सीरत व सवानेह पढ़ी जाये। अल्लामा इब्न जोज़ीं अपनी किताब "सैदुलख़ातिर" में लिखते है :–

"मैंने देखा कि फ़िक़ा और हदीस में मशगूलियत क़ल्ब में सलाहियत पैदा करने के लिए काफ़ी नहीं। इस की तदबीर यही है कि इसके साथ सल्फ़े सालेहीन[1] के हालात भी पढ़े जायें। हराम व हलाल का ख़ाली इल्म क़ल्ब में रिक्क़त पैदा करने के लिए कुछ ज्यादा फ़ायदे मन्द नहीं। कुलूब में रिक्क़त पैदा होती है ताक़तवर अहादीस व हिकायत से और सल्फ़ सालेहीन के हालात से। क्योंकि इनका जो मक़सूद है वह उन्हें हासिल था। अहकाम पर उनका अमल जाहिरी न था बल्कि उनको इनका असली ज़ौक हासिल था और यह जो मैं तुम से कह रहा हूँ वह असली तजुर्बा और खुद आज़माइश करने के बाद है। मैंने देखा है कि आम तौर से मुहद्दिसीन और फ़न्ने हदीस के तल्बा[2] की सारी तवज्जे ऊँची सनद हदीस और मरव्वियात की कसरत की तरफ़ होती है, इसी तरह आम फ़ुक़हा की तमामतर तबज्जे हरीफ़ को जेर करने वाले इल्म की तरफ़ होती है। भला इन चीज़ों के साथ क़ल्ब में क्या गुदाज़ और रिक्क़त पैदा हो सकती है। सल्फ़ की एक जमाअत किसी नेक और बुजुर्ग शख्स से

1. बुजुर्गों। 2. विद्यार्थियों।

महज उसके तौर तरीक़ा को देखने के लिए मिलने जाती थी, इल्म के इस्तेफ़दा के लिए नहीं। इसलिए कि यह तौर व तरीक़ा उसके इल्म का असली फल था। इस नुक्ता को अच्छी तरह समझ लो और फ़िक़ा व हदीस की तहसील में सल्फ़ सालेहीन की सीरत जरूर पढ़ा करो ताकि इससे तुम्हारे दिल में रिक्क़त पैदा हो''।

फिर एक जगह लिखते हैं।

''मैने मशहूर सल्फ़ सालेहीन में से हर एक के हालात और अदब व सुलूक पर एक किताब लिखी है। हज़रत हसन बसरी के हालात में एक किताब लिखी है। इसी तरह सुफ़ियान सूरी, हज़रत इब्राहीम बिन अदहम, बशर हाफ़ी, इमाम बिन हँबल और मारूफ़ करख़ी वग़ैरह उल्मा के हालात पर किताबें लिखी हैं। मकसूद की तौफ़ीक़ ख़ुदा ही की तरफ़ से मिलती है। और कम इल्मी के साथ सही अमल नहीं हो सकता दोनों की हैसियय सायक़ (जानवरों को पीछे से हाँकने वाला) और क़ायद (रेवड़ को आगे लेकर चलने वाला) की है। और नफस इन दोनों के दरमियान अपनी जगह से टलना नहीं चाहता। सायक़ और क़ायद दोनों सरगर्म अमल हों तो मंजिल तय होती है।''

कम से कम इतना हो कि इन गुज़रे हुए असहाब सिद्क़ के मुतअल्लिक़ हमारे दिलों में कोई मैल ज़र्रा भर भी न हो, और उन के एहसानात का हमें एतराफ़ हो, हम उन के लिए दुआ करें। और उनकी कमियों से चश्मपोशी करें। नेक लोगों की तारीफ़ व तौसीफ़ के मौक़े पर अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : ''और उनके लिए भी जो इन मुहाजिरों के बाद आये और दुआ करते हैं कि ऐ रब हमारे और हमारे भाईयों के जो हम से पहले ईमान लाये हैं गुनाह माफ़ फ़रमा और मोमिनों की तरफ़ से हमारे दिलों में कीना व हसद न पैदा होने दे। ऐ हमारे परवरदिगार तू बड़ा शफ़क्क़त और मुहब्बत करने वाला मेहरबान है।'' (सूर : हश्र –10)

और कुरआन की हिदायत है कि :–

तर्जुमा : "मोमिनों। अगर कोई बदकार तुम्हारे पास कोई ख़बर लेकर आये तो ख़ूब तहक़ीक़ कर लिया करो। ऐसा न हो कि किसी क़ौम को नादानी से नुक़सान पहुँचा दो फिर तुम को अपने किये पर नादिम होना पड़े।"
(सूर : अलहजुरात–6)

आदाबे कुरआनी और तालीमाते नबवी का तक़ाज़ा है कि हम उम्मत के अस्लाफ़ के बारे में बहुत मुहतात रहें और यह भी हर मुसलमान के बारे में फ़ैसला करने में पूरी एहतियात से काम लें जल्दबाज़ी न करें। उस वक्त तक यक़ीन के साथ कोई बात न कही जाये जब तक सही ज़रिये से सही बात मालूम न हो जाये।

11. हम अपनी ज़िन्दगी में जिन चीज़ों का एहतमाम करते हैं उन में दावत व तबलीग़ का भी एक हिस्सा रखो। अल्लाह तआला का इरशाद है :–

तर्जुमा : "मोमिनों जितनी उम्मतें लोगों में पैदा हुई तुम उन सब से बेहतर हो कि नेक काम को कहते हो और बुरे कामों से मना करते हो और ख़ुदा पर ईमान रखते हो।"
(सूर : आले इमरान –110)

तर्जुमा : "और तुम में एक जमाअत ऐसी होनी चाहिए जो लोगों को नेकी की तरफ़ बुलाये और अच्छे काम करने का हुक्म दे और बुरे कामों से मना करे।"
(सूर : आले इमरान –104)

इस्लाह और दावत व तबलीग़ की कोई ख़ास शक्ल या लगा बन्धा कोई ऐसा निज़ाम नहीं जिस को तबदील करना या उससे हटना नाजायज़ हो। सूर : नूह की पाँचवी आयत में हज़रत नूह अ० फ़रमाते हैं "मैं अपनी क़ौम को रात दिन बुलाता रहा"। इसी सूर : की नवीं आयत में कहते हैं; "और ज़ाहिर और पोशीदा हर तरह समझाता रहा"। सूर : नहल की आयत न० 125 में अल्लाह के रसूल मोहम्मद

स० से फ़रमाया गया, "(ऐ पैग़म्बर) लोगों को दानिश और नेक नसीहत से अपने रब के रस्ते की तरफ़ बुलाओ।"।

इसी तरह यह भी हमारी एक दीनी जिम्मेदारी है कि हमें मुसलमानों के हालात की फ़िक्र हो, हम जहाँ भी हों पूरे इस्लामी ख़ानदान के साथ उनकी खुशी और ग़म में शरीक रहें। हदीस में आया है, "मुसलमानों की मिसाल आपस की मुहब्बत व हमदर्दी में एक जिस्म की सी है कि अगर इसके किसी हिस्से में तकलीफ हो तो सारे आज़ा (हिस्से) बेचैन हो जाते हैं।" (बुखारी व मुस्लिम)

हमें वह सख्त हालात जिन में मुसलमान मुब्तला हैं बेचैन रखें और दीन की सरबुलन्दी के लिऐ कोशिश करें। हमारी कोशिश हो कि हम एक ताक़त बनकर उभरें जिसकी हैबत और नफ़ा व नुक़सान को खुले तौर पर महसूस किया जाये। यहाँ तक की खुदा की ज़मीन में हमारे क़दम जम जायें और फ़ितना व फ़साद को जड़ से उखाड़ फेंका जाये। और इताअत व फ़रमाँबरदारी सिर्फ़ खुदा की रह जाय।

तर्जुमा : "यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी न रहे और दीन सब ख़ुदा ही का हो जाये।" (सूर : अनफ़ाल –29)

12. हमें अपनी ज़िन्दगी के मुख्तसर होने का ख्याल हो, दुनिया की बेसबाती और मौत का एहसास हो। हमारा कुछ वक्त मौत की फ़िक्र में गुजरे और हुस्न ख़ात्मा की फ़िक्र होनी चाहिए। क्योंकि एतबार हुस्न ख़ात्मा ही का है। इस उम्मत के तमाम औलिया-ए-कामलीन पर मौत की ऐसी फ़िक्र ग़ालिब रहती थी कि वह कभी इसे भूलते न थे। उनको कभी नेक आमाल और लोगों के हुस्न ज़न पर न नाज़ था न अपनी कोशिश पर भरोसा। वह इस हदीस को हमेशा याद रखते थे :–

तर्जुमा : "हज़रत अबू हुरैरा बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया –तुम में

से किसी को भी उसका अमल नजात नहीं दिलायेगा। सहावा ने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह आप को भी। फ़रमाया——हाँ मुझ को सिवाय इस के कि अल्ला तआला मुझे अपनी रहमत से ढाँप लें। ठीक-ठीक चलो। और क़रीब-क़रीब रहो। सुवह भी चलो और शाम भी चलो। और कुछ रात गये भी चलो। और देखो मियानारवी अख्तेयार करो, मियानारवी अख्तेयार करो, मंज़िल तक पहुँच जाओगे"। (बुख़ारी शरीफ़)

बहुत मुनासिव है कि हुस्न ख़ात्मा के फ़िक्र की दावत देने वाली यह हदीस, इस किताव का हुस्न ख़ात्मा बन जाये।